

THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

परोपकाराय सतां विभूतयः

श्री जैन हितोपदेश. भाग २-३ जो

नीति अने वैराग्यना विषयथी भरपुरः शांतसूर्ति सुनिराज श्री वृद्धिचंद्रजी शिष्याणु सुनि कपूरविजयजी विरचित.

स्वधर्मी आइओने वांचवा भणवा निमित्ते. श्रीवीसनगर निवासी परी. गोकळभाइ मुळचंदनी दीकरी बेन चंदनबेन तरफथी भेट.

> छपाची प्रसिद्ध कत्ती. श्री जैन श्रेयस्कर मंडळ-म्हेसाणा.

सीटी त्रीन्टींग पेस-दाणापीठ-अमदावादः वीर संवत् २४३४. सने १९०८. विक्रम संवत १९६४ क्राक्स क्राक्स क्राक्स क्राक्स क्राक्स क्राक्स

प्रस्त्रामना.

काल दुनियामां बहुधा जनस्वभावतं वलण संस्कृत अने मागधी भाषामा लखायेला कडीन शालीय विषयो तरफ न दोरातां स्वभाषामां छखायेला सरल विषयो तरफ दोरावा लाग्युं छेः तेथी करीने दिवसे दिवसे शास्त्र संदंधी उच ज्ञान हीन, हीन-तर थतुं जाय छे. ज्यांसुघी सुजराती भाषामां अनेक ग्रंथी वहार पडचा नहोता, त्यांसुधी उच तत्वज्ञान प्राप्त करवानी उमेद धराव-नाराओ संस्कृत तथा प्राकृत भाषाओनो अभ्यास करी ते द्वारा उच ज्ञान मेळवता हता पण तेवा सनुष्यो संख्यायां थोडा अने कोइक ठेकाणे जोवामां आवता. ज्यारे गुजराति साषामां कथारूपे, नाटक-रूपे, के तत्वज्ञानरूपे अनेक प्रथो वहार पडचा, त्यारे छोकोनुं शास्त्रीय कठीन भाषा तरफ दुर्लक्ष थयुं अने तथी ते द्वारा उच्च तत्वज्ञान मळतुं हतुं ते वंध थयुं. तथी शास सवधी गृह रहस्योने स्वभा-षामां वहार पाडवा जरूर जणाइ. वांचवानो शोख वधता गयो तेम तेम भिन्न भिन्न विषयोना पुस्तको बहार पडता गया. पण तेमां धर्मतुं स्वरूप समजाववाने योग्य ग्रंथो बहुज थोडा छे. तेथी जमानाने अनुसरती भाषामां वधारे पुस्तको वहार पडवानी आवश्यकता जणा-याथी अमारा तथा बीजा सज्जनोना आग्रहथी मुनि यहाराज श्री दृद्धिचंद्रजीना शिष्य शांतपुति सुनिमहाराज श्री कर्पुरविजयजीए मध्यम तथा कानिष्ट पंक्तिना अभ्यासीयोने अलप अगे धर्म तत्वनी

धोध थाय एवा हेतुथी जैन हितोपदेश नामना पुस्तकनी रचना सरल अने रसीली भाषामां करिछे, जेनो पहेलो भाग अमारा तरफं-थी अगाउ प्रसिद्ध करवामां आव्योछे, ते पुस्तक विशेष प्रकारे जन प्रिय थइ पड्युं छे: जेना परिणामे, आ वीजा तथा त्रीजा भागतुं पुस्तक अमारा वांचक वर्ग समक्ष मूकवा अमो भाग्यशाळी थया छीए.

आ जैन हितोपदेशनुं पुस्तक पोताना नाम प्रमाणे पोतानुं गांभीर्य महत्व अने बोधकत्व जणावे छे वळी आ पुस्तकनो क्रम अवीतो सर-छताथी गोठववामां आञ्यो छे के पाये उत्तम, मध्यम अने किनष्ट ए त्रणे वर्गना वांचक अधिकारीओ स्वस्व बुद्धि अनुसारे निःशंक-पणे तेनो छाभ छइ शकशे ए निर्विवाद छे; सिद्धांतरूप समुद्रने पार उतारवा माटे नौका तुल्य आ ग्रंथ रत्ननुं एकजवार अवलोकन करवाथी तेनी खरी उपयोगीता सज्जनो सहज समजी शकशे.

श्री जैन हितोपदेश भाग २ जानी श्रह्णातमां मंगलाचरणरूपे सांप्रतकालमां विचरता श्री सीमंधर जीननी स्तुति काठिण शब्दनी फुटनोट साथे आप्या वाद श्री गणेंद्र मुनि विरचित सुभाषित रत्नावली ग्रंथमांथी धर्म नीति अने शुभ व्यवहारने उपयोगी जुदा जुः। ४५ विषयो उपर स्फुटपणे विवेचन कर्यु छे. उक्त निषयो जुं अत्र दिग्दर्शन करवा करतां एकज वखत तेने वांची मनन करवानुं काम अमो वांचकहंदनेज सोपीए छीए. त्यार पछी सुमित अने चारित्र राजना सुखदायक संवादमां पतित चारित्र धारीने पंच महात्रतमां पुनः स्थिर करवा माटे करेलो रसिक बोध नोवेलरूपे अत्येल छे. पछी 'धर्मनी कुंची' ए विषयमां धर्मरत्नने लायक जीवना ३५ गुणोनुं प्रथम सामान्यथी अने पछी विशेषथी विवेचन आप्युं छे अने अंतमां परमात्म छत्रीसी अने अमृतवेलीनी सञ्चाय आपवामां आवी छे.

श्री जैन हितोपदेश भाग त्रीजामां श्रीमट् हेमचंद्राचार्य विरिचत शासन नायक वीराधिवीर श्री वर्द्धमान जीनना स्तोत्रनो सारांश, मंगळाचरणरुपे आपीने प्रथम ज्ञानसार सूत्र (अष्टकजी)ना मूळ श्लोको तेना रहस्यार्थ साथे आपेल छे जे एवी तो सरलताथी स्फुटपणे ल-खायेल छे के साधारण ज्ञानवाळाने पण ते सहज रीते समजमां आवी शके तेम छे पछी वैराज्यसार अने उपदेश रहस्य ए नामना विषयमां वैराज्य अने उपदेशमय वावतनो सारो समावेश करवामां आव्यो छे. त्यारपछी आध्यात्मिक विषयनी पुष्टीकारक अध्यात्म गीता, संयम, वत्रीसी, अने क्षमा छत्रीसी कठीन शब्दनी फुटनोट साथे आपी ग्रंथनी समाप्ती करवामां आवी छे.

दरेक जैनशाळाना वाळकोने क्रमसर वांचनमाळा चलाववानी आवश्यकता आपणी कोन्फरन्स तरफथी जे स्वीकारवामां आवी छे ते वांचनमाळानी गरज आ पुस्तकनो पहेल्रेथी क्रमसर अभ्यास फरवाथी केटलाक अंशे सरशे—एम अमारु निष्पक्षपात्तपणे मानवुं छे. तेथी तेनो घटतो उपयोग करवा अमे सहु सज्जनोने साग्रह विश्वाप्ति करीए छीए.

पूज्य मुनिश्रीना प्रयास माटे अमे अंतः करणथी आभार मान-चा साथे उक्त ग्रंथरत्ननो छाभ छेइ तेओ साहेवना परिश्रमने सर्व भव्यात्माओ सार्थक करो एम इच्छी अत्र वीरमीए छीए.

आ ग्रंथ छपाववाने आश्रयदाता, सद्ग्रहस्थानो अंतःकरणधी आभार मानी तेमतुं अनुकरण करवा अन्य धनिकाने नम्रविज्ञप्ती करीए छीए. इतिशम्, ली. प्रसिद्ध कत्ती.

अनुक्रमणिका.

श्री जैनहितोपदेश भाग २ जो.

	•		
8	सद्भाषितावळी	१ र्थ	१२४
	१ शिष्ट सेवित सन्मार्गन्नं सेवनकर	****	१०
	२ शिष्ट निंदित पाप कार्यनो परिहार कर	****	\$ \$
	३ निर्मळ श्रद्धान कर	••••	१३
	४ मिथ्यात्वनो त्याग कर	••••	58
	६ सदाचारनुं सेवन कर	****	१९
	७ इंद्रियोनुं दमन कर	••••	२०
	८ स्त्रीनो संग-परिचय तज	••••	२२
	९ विषय रसनो त्याग कर	•••	२५
	१० श्री वीतराग देवनी भक्ति कर.	****	२७
	११ सद्गुरुत्तुं सेवन कर	****	२८
	१२ तप करवामां यथाशक्ति मयत्न कर	* 4 # #	२६
	१३ जीहाने वश कर	****	\$ 9
	१४ राग द्वेषनो त्याग कर	****	33
	१५ क्रोधादि कषायने दूर कर	•••	३५
	१६ अहिंसा व्रतनो आदर कर	****	\$0,
	१७ सत्य वस्तुनुं पालन कर	000	४१
	१८ अदत्तनो त्याग कर	****	४इ

(9)

१९ ब्रह्मचर्यनुं सेवन कर	४६
२० परिग्रह मूर्छीनो परिहार कर	४७
२१ वैराग्य भाव धारण कर	५०
२२ गुणी जनोनो संग कर	५२
२३ श्री वीतरागने ओळखी वीतरागनुं सेवन कर.	५४
२४ पात्रापात्रने समजी सुपात्रे दान दे	५५
२५ जरुर जणाय त्यांज जिनालय जयणाथी कराववुं	५७
२६ निर्मळ भावनाओ भाव	६०
२७ रात्री भोजननो त्याग कर	६२
२८ मोह मायाने तजीने विवेक आदर	६४
२९ खोटी ममतानो त्याग कर	६६
३० संसार सायरनो पार पामवा प्रयत्न कर	६८
३१ घेर्यने धारण कर	9 0
३२ दुःखदायी शोकनो त्याग कर	<i>હ</i> જ
३३ मननो मेल दूर कर	છ્છ
१४ मानव देहनी सफळता करी छे	ሪጳ
३५ प्राणान्ते पण व्रत-भंग करीश नाहि	6,9
३६ मरण वखते समाधि साचववा खूव छक्ष	
राखने	৫৩
३७ आ भव परभव संबंधी भोगाशंशा करीश नहि.	८९
३८ स्वकर्तव्य समजीने स्वपरहित साधवा तत्पर रहे.	् १
३९ पंच परमेष्ठि महामंत्रतुं निरंतर स्मरण कर	९८

8	० धर्म रसायणत्तुं सेवन कर			१००
	१ वैराग्य भावथी लक्ष्मी विगे		ર્થો-	
•	नो मोह तनी दे			१०३
	•			१ १ १
	२ सारभृत एवा सद्विवेकतुंज		••••	883
	३ धर्मरुपी संवल वने तेटलुं ।	•	••••	, , ,
8	४ मनुष्य भव फरी फरी मळ		एम	090
	समजी शीघ्र स्वहित र		••••	688
૪	४५ पुरुपार्थ वडेज सर्व कार्य	सिद्ध थाय छे	माटे	_
	प्ररुपार्थनेज अंगीकार	कर.	••••	११७
ર્	सुमति अने चारित्र राजनो सु	खदायक संवा	₹??	२४थी१ ^{६७}
3	थर्म रत्ननी प्राप्तिने साटे अवः	ज्यं प्राप्त करवा	यो-	
	ग्य गुणो अथवा धर्मन	ी खरी कुंची	१६	र्थी१८२
૪	धर्मनी दश शिक्षा	••••		८०५
Ç	परमातम छत्रीशी	****	••••	१८५
Ę	अमृतवेळीनी सझ्झाय	••••	****	१८८
	श्री जैनहितोपदेः	श भाग ३ उ	नो.	•
\$	ज्ञानसार सूत्र	••••		७थी१४०
२	वैराग्य सार्ने उपदेश रहस्य			१४०
ş	अध्यात्म गीता	***		१८६
8	क्षमा छत्रीशी	****		१९५
ч	यति धर्म वत्रीशी	****	••••	१९८
			****	• •

भंगलाचरणरूप.

श्री सीमंधर जिन-स्तुति.

मभु नाथ तुं तियलोकनो^२, मत्यक्ष त्रिभुवन भाणहः सर्वेज्ञ सर्वेद्शीं तुमे, तुमे शुद्ध सुखनी खाण जिनजी विनती छे एह. १ मभु जीव जीवन भव्यना, मभु मुझ जीवन माण; ताहरे दर्शने मुख लहुं, तुंहि जगत स्थिति जाण. जि॰ २ तुज विना हुं वहु भव भम्यो, धर्या देश अनेकः निज भावने परभावनो, जाण्यो नही सुविवेक, जिं ३ धन्य तेह जे नित्य प्रहसमे^४, देखे जे जिन मुख चंदः तुज वाणी अमृत रस लही, पामे ते परमानंद. जि० ४ एक वचनं श्री जिनराजनो, नयगमं भंग प्रमाण; जे मुणे रुचिथी ते छहे, निज तत्त्व सिद्धि अमान. जि० ५ जे क्षेत्र विचरो नाधजी, ते क्षेत्र अति सुपसध्य"; तुज विरह जे क्षण जाय छे, ते मानीयें अकयथ्थ". जि० ६ श्री वीतराग दर्शन विना, वीत्यो जे काल अतीत ; ते अफळ मिच्छा दुक्कडं, तिविहं तिविहनी रीत.

१ महाविदेह क्षेत्रमां विचरता जिनवर. २ त्रण लोकनो. ३ सर्व वस्तुते सर्वथा साक्षात देखवावाळा. ४ प्रभात समये. ५ नैगमादिक सात नयो. ६ संदर मंगलकारी. ७ अकृतार्थ-निष्फळ. ८ गयेलो काल.

😉 अभ्र वात मुज मननी सहु, जाणीज छो जिनराजः स्थिर भाव जो तुमचो छहुं, तो मिले शिवपुर साथ . जि॰ ८ प्रभु मिळे हुं स्थिरता लहुं, तुज विरह चंचळ भाव; एकवार जो तन्सय रहें, तो कर्र अचल स्वभाव. जि० ९ प्रभु अछो क्षेत्र विदेहमां, हुं रहुं भरत पक्षार; तोपण प्रभुना गुण विषे, राखुं खचेतन सार. जि० १० जो क्षेत्र भेद टळे प्रभु, तो सरे सघळां काज; सन्मुख भाव अभेदता, करी वरुं आतमराज. जि० ११ यर पुंठ इहां जेहनी, एवडी जे छे स्वाम ; हाजर हजूरी ते मळे, नीपजे ते केटलो काम. जि० १२ इंद्र चंद्र नरेंद्रनो, पद न माग्रं तिल मात्र; मागुं प्रश्च मुज यनथकी, न वीसरो क्षण मात्र. जि० १३ ज्यां पूर्ण सिद्ध स्वभावनी, नवी करी शक्कं निज रिद्ध ; त्यां चरण श्वरण तुमारडो, एहिज मुज नवनिध². जि० १४ म्हारी पूर्व विराधना, योगे पडयो ए भेद; 'पण वस्तु धर्म विचारतां, तुज मुज नहिं छे भेद. जि॰ १५ -प्रभु ध्यान रंग अभेदथी, करी आत्मभाव अभेद; छेदी विभावं अनादिनो, अतुभवुं खसंवेद¹ं. जि० १६

१ तमारी-तमारी जेवो. २ मळे-प्राप्त थाय. ३ मोक्ष सहायी, अंते सखाइ. ४ भेदभाव रहित. ५ स्वामी. ६ रिद्धि. ७ निधि. ८ कद्धर. ९ विरद्ध आव, विषय कपायादि. १० स्वरुप-आत्मभाव, आत्म दर्शन-साक्षात्कार.

विनवं अनुभव मित्रने, तु न करीश पर रस चाह³;
शुद्धात्म रस रंगी यह, करी पूर्ण शक्ति अवाह³. निरु १७
जिनराज सीमंघर प्रश्नु, तें लहा। कारण शुद्ध;
हवे आत्म सिद्धि निपाववी, शी ढील करीए हुद्ध. जि० १८
कारणे कार्य सिद्धिनो, करवो घटे न विलंब;
साधवी पूर्णानंदता, निज कर्तृता अविलंब. जि० १९
निज शक्ति प्रश्नु गुणमा रमे, ते करे पूर्णानंद;
गुणगुणी भाव अभेदर्थर, पीजीये शम—मकरंद कि० २०
प्रश्नु सिद्ध हुद्ध महोदयी , ध्याने थइ लयलीन ;
रिचेश देवचंद्र पद आदरे, नित्यातम रस गुख पीन कि. २१
इति.

१ चाहना अभिलाषा. २ निर्मळ स्त्रभातमां म.र. शान्तरस निमग्र. ३ अदाघ-विन्न रहिन. ४ स्त्रभाव पूर्णता. ६ शान्तरस. ६ महा भाग्यतंत्र, ७ एकाय. ८ सहज स्त्रथात-प्रसादन थात. ९ प्रष्ट मत्त.

स्रभाषित स्त्नावली-

प्रस्तावना.

विदीत थायके ' सुभाषित रत्नावली ' नामनो एक संस्कृता खद्मात्मक ग्रंथ श्री गणेंद्र कृत पथम मारा जोवामां आव्यो, तेनी फक्त एकज प्रत मळवाथी अने ते पण अत्यंत अशुद्ध होवाथी उक्त ग्रंथना यूळ साथे तेतुं आयांतर करवा जे प्रथम विचार प्रभव्यो हतो ते देवा रुपमां अमलमां मूकी शक्यो नहि. परंतु तेनी शरुआतमां सार स्पे जे श्लोको दाखल कयी छे ते साथे थोडाक बीजा श्लोकोई भाषांतर आदिमां कायम राखीने बाकीना विषयोत्तं विवेचन कंइकः स्वतंत्र रीते स्वक्षयोपश्चमानुसारे करवुं दुरस्त धारी उक्त ग्रंथमां कहेवा धारेला विषयो पैकी बनी शक्या तेटला लगभग ४५ विषयोः द्धाखल करवामां आव्या छे. वर्त्तमान समयने अनुसारे जिज्ञासु भाइ व्हेनोने उक्त विषयो संबंधी संक्षेपथी बोध पूर्वक शुभ क्रिया रुचिनी द्रोदि थाय अने एम यथाशक्ति ज्ञान अने क्रियाना संमेखनथी वीत्-नाग प्रभुनी पवित्र आज्ञानुसार स्वहित आचरवा तेओ समर्थ याय एवी सन्बुद्धिथी प्रेराइने आ प्रस्तुत प्रयत्न करवामां आव्यो छे. आवा थुभाश्ययुक्त प्रयत्ननी सार्थकता करवा भव्य भाइ ब्हेनोने कंइक साग्रह भलामण करुं तो ते कंइ खोढ़ं कहेवाशे नहि. वर्त्तमानकाळे कंइक जागृत थती जिज्ञासा स्वक्षयोपश्रमानुसार लखी ्ते जिज्ञासु वर्ग समक्ष मूकवाने जेम हुं स्वक्तिव्य समजुं हुं तेम तेनो यथाशक्ति आदर करवा रूप निज कर्तव्य करवाने कृतज्ञ भाइ ब्हेनो चुकरो नहि एम समजीने प्रस्तुत ग्रंथ संबंधी प्रस्तावना पूर्ण करुं छुँ. शुभं स्यात् सर्वे सत्त्वानाम्. सन्मित्र कर्पूरविजयजी.

श्री जैनहितोपदेश माग २जो.

सद्भाषितावली,

श्री गणेन्द्रै विरचिता पीठिका-

जिनाधीशं नमस्कृत्य, संसारांबुधितारकं ॥ स्वान्यस्य हित सुद्दिश्य, वक्ष्ये सङ्गितावलीम् ॥शा धर्मत्वं कुरु दुस्यजं, त्यजं महापापं बुधै नििदितं, सम्यक्तं भज शर्मदं, त्यज महामिथ्यात्व मूलंच वै॥ सच्छास्नं पठ वृत्त माचर, जर्य पंचे न्द्रियाणां च भो, नारी संगमीप स्वयं त्यज, सदा कामं कलंकास्पदम्।।शा दृष्ट्वा स्त्री सुशरीर रूपमतुलं मध्ये विचारं कुरु, श्री तीर्थेश्वर पाद सत्कमलयोः सेवां सदा सद्भुरौ॥ वाह्याभ्यंतर सत्तपः कुरु सदा जिह्वां वशे चानय, आत सर्व त्यज देव राग सहितान् सर्वान् कषायां श्रवै। ३६

, सर्वेषु जीवेष्टद्यां कुरुत्वं, सत्यंवचोबूहि धनं परेषां ॥ वाऽब्रह्म सेवां त्यज सर्वकालं, परिष्रहं मुंच क्रयोनिद्धारं ४ वैराग्य सारं सज सर्वुकालं, नि्प्रंथ संगं कर मुक्ति बीजं।। विमुच्य संगं कुनने पुमित्र, देवाईने त्वं कुरु वीतरागे। ५1 दानं त्वं कुरु पात्रसार्यनय चैत्यालयं भावनां, रात्री भोजनवर्जनं त्यजमहागाईस्थ्यभावसहर् ॥ देहं त्वं त्यज भोग सारमपिवे संसार पारं व्रज, धीरतंकुर मुंच शोकमशुभं शौचं च नीरंविना ॥६॥ सारं त्वं कुरु देहमेव सफ्लं धत्वावतं मा त्यज, सन्यासे मरणं च भोगविषये चाशामिहाऽसुत्र च ॥ मध्यस्यं हितमेव जाप्य जपनं रोगस्य निर्नाशनं, जीवस्या शरणं चलंच विभवं सारं विवेक भज ॥ ७ ॥ संबलं कुरु वै धर्म, मानुष्ये दुर्लमं भवेत्।। अयोग्यं च परित्यं ज्य, मुक्ति योग्यं समाचर ॥ ८॥ ाँ इति पीठिका ॥[•]

सुभाषित रतावली मुख प्रवेशः

मं सार समुद्रथी तारणहार श्री जिनेश्वर देवने नमस्कार करी स्व-परना हितने माटे हुँ सुभाषित रत्नावळीनी व्याख्या करुं हुं

मो भद्र ! तुं धर्म आचरण कर, ज्ञानीए निदेलां महापापनिति त्याग कर, सुखदायी समकीतनुं सेवन कर, महा दुःख-दायी मिथ्यात्वनी त्याग कर, उत्तम ज्ञाननो अभ्यास कर, त्रतनुं सेवन कर अने पांचे इंद्रियोनुं दमन कर, श्लीना संगनो पण त्याम कर, तेमज सदोप काम सेवानो सर्वदा त्याग कर. र

स्त्री संवंधी संदर देहन अतुल रुप देखीने भोभद्र! तुं मनमाँ निर्दोष विचार कर श्री तीर्थकर देवनां चरण कमळनी सेवा कर, सद्-रुनी सदा भक्ति कर वन्ने मकारना शुद्ध तपतुं सेवन कर. अने जीभने वन्न कर, तेमज हे भाइ! राग देष सहित सर्व कषायनो तुं (काळजीथी) त्याग कर है.

हे भंद्र ! तुं सर्वे जीवोमां दया भाव राख्य, सत्यं वाणी यदं, परधन अने अब्रह्म सेवानो सर्वथा त्याग कर, तेमज दुर्गतिदायक परिग्रह मूच्छीने त्यज. ४

सर्वदा श्रेष्ठ वैराग्यने भजः मुक्तिदायक निग्नंथ मुनिनो संग करः, अने दुर्जनोनो संग त्यजी दे, हे मित्र ! तुं वीतराग देवनी भावधी भक्ति करः. ५

वळी पात्रापात्रनो विवेक राखीने तुं दानदे, जिन चैत्य कराव, रुडी भावना भाव, रात्रिभोजननो त्याग कर, तेमज हे मित्र तुं संसारिक मोहने त्यजी दे; केवळ भोगना साधनरुप एचा देहनी ग्रूच्छी त्यज, अने संसारनो पार पाम. तेमज धीरपणुं धारणकर दु:खदायी शोकने त्यज अने मननो मेळ दूर कर. ६

श्रेष्ठ एवा मानव देह पामीने सारां व्रत नियम पाळी तेने सफळ करवो, व्रत भंग निह करवो; समाधिवाळं मरण करवं, आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा तजी देवो; मध्यस्थ रही स्वपर हित साधवं, परमेष्ठिनो जाप जपवो; धर्म रसायण सेववं वैराग्य भावना भाववी, लक्ष्मी विगेरे क्षणिक वस्तु उपरथी मोह त्यजी देवो अने सारभूत एवा विवेकने भजवो. ७

हे सुभग ! तुं धर्महर्षी संवल (भातुं) साथे लड्ले, फरी फरी मनुष्य भव पामवो दुर्लभ छे, माटे अयोग्य आचरण त्यजी न्द्र जेथी जन्म मरणनो अंत आवे एवं योग्य आचरण सेवीले. ८

" इति अस्तावनाः"

धर्मं कुरु.

'धर्मं करोति यो नित्यं, स पूज्य स्त्रिदशैश्वरैः ॥ लक्ष्मीस्तं स्वयमायाति, भुवन त्रय संस्थिता. ॥९॥ धर्मवतोहि जीवस्य, मृत्यः कल्पहुमो भवेत्॥ चिंतामणिः कर्म करः, कामधेनुश्च किंकरीः ॥ १०॥ धर्मेण पुत्र पौत्रादि, सर्वं संपद्यते नृणां;॥ गृह वाहन वस्तूनि, राज्यालंकरणानि च. ॥ १९ ॥ वरं मुहूर्त मेकंच, धर्म युक्तस्य जीवितं ॥ तद्धीनस्य वृथा वर्ष, कोटा कोटि विशेषतः ॥ १२ ॥ यम दम समयातं, सर्व कल्याण बीजं। सुगति गमन हेतु, तीर्थनाथैः प्रणीतं; ॥ भवजलनिधियोतं, सार पाथेय मुच्चै, स्थज सकल विकार्रः धर्ममाराथय त्वम्. ॥ १३ ॥ पार्यत्यज.

पापं शत्रुं परं विद्धि, श्वम्न तिर्यग्गतिप्रदं ॥
रोग क्वेशादि मांडारं, सर्व दुखाकरं नृणाम् ॥ १४ ॥
जीवंतोऽपि मृता ज्ञेया, धर्म हीनाहि मानवाः ॥
मृता धर्मेण संयुक्ता, इहा मुत्र च जीविताः॥१५॥
पापवतो हि नास्त्यस्य, धन धान्य गृहादिकं ॥

वस्नारंकार सदस्तु, दुःख क्वेशानि संति च ॥ १६॥ मित्र शत्रु च विज्ञेयो, प्रण्य पापे शरीरिणां ॥ जीवेन वजतः सार्ध, सुखदुःखफलप्रदम् ॥ १७ ॥ सकल भव निदानं, रोग शोकादि बीजं ॥ नरक गमन हेतु सर्व दारिद्र मुलम् ॥ इह परभव शत्रुं, दुःख दानैक दक्षं ॥ दिंजें मुनिवर निन्धं पाप बीजं समस्तम् ॥ १८ ॥

. १ शिष्ट सेविन सन्मार्गनुं सेवन कर.

जे नित्य स्वर्कतव्य समजीने सन्मार्गनुं सेवन करे छे ते इंद्रोने पण मान्य थाय छे, अने सकल लक्ष्मी तेने स्त्रयं आवी मले छे. पुन्यशालीने पगले पगले निधान छे. ९ सन्मार्गगामी-धर्मी जीवने करूपद्रक्ष सेवक यइने रहे छे, चितामणि रत्न तेन्नुं चितित कार्य साधी आपे छे, अने कामधेनू तेना सकल मनोरथ पूरे छे. १० धर्म सेवनवडे पाणीओने पुत्र पौत्रादिक प्राप्त थाय छे तेमज राज्यना अलंकारभूत एवां घर वाहन विगेरे वस्तुओ पण सहजे मळे छे. ११ धर्मे करीने युक्त एवा जीवनुं वे घडी जेटलुं पण जीवतर लेखे छे, अने धर्महीन जीवनुं तो कोटा कोटी करण सुधीनुं पण जीवन नकामुं छे १२ ते माटे हे भव्य! यम-महाव्रतादि अने दम-इंद्रिय-दमन आदिथी युक्त, सर्व कल्याणनुं मूळ कारण, सद्गति गमननुं हेतु, मव समुद्र्थी पार पमाडवाने प्रवहण तुल्य अने भवान्तरमां सार शंवळ्छ एवा ऋषभादिक तीर्थनाथोए प्रगट करेला धर्मनुं तुं सर्वविकार रहितपणे सेवन कर. १३

२ शिष्ट निंदित पाप कार्यनो परिहार कर.

. प्राणीयोने नर्क तिर्थेच गति आपनार, रोग शोकादि दुः-खना निधान, अने सकल क्लेशनां स्थानरूप पापने तुं परम शहु समज. १४ धर्महीन मानवोने जीवता छतां पण मूआ मानवां, अने. धर्में करी युक्त मानवो मूआ छतां आछोक अने परछोकमां जीवताजः जाणवा. १५ पापवंत प्राणीने धन धान्य ग्रहादिक तथा वस्त्र अलं कारादिक शुभवस्तु प्राप्त थइ शकती नथी, तेने तो केवळ दुःख अने क्लेशन प्राप्त थीय छे. १६ पुण्य अने पाप प्राणीयोना मित्र अने शत्रु छे, एम जाणबुं, केमके मुख दुःख फळने आपनारा ते वंने प्राणीनी साथेन नाय छे. १७ भव भ्रमणना निदानरूप अने रोगः शोकादिकना बीज रुप नर्क गमनना हेतु रुप अने सर्व दारिद्रना मूळरूप आ भव अने परभवना शत्रुरूप अने दुःख देवामां एकारूप एवां समस्त पापनां निंद्य कारणोने हे सुत्रत ! तुं तजीदे. समस्त पापकार्यथी तदन अलगा रहेवुं एज सार छे. १८

सम्यक्लं भज-

सम्यग् दर्शन संशुद्धः सत्य मानुच्यते बुधैः ॥ सम्यक्त्वेन विना जीवः पशुरेव न संशयः ॥ १९ ॥ सम्यक्त युक्त जीवस्य, हस्ते चिंतामणिर्भवत् ॥ कल्पवृक्षो गृहे तस्य, कामग्रव्यनु गामिनी ॥ २०॥ सम्यक्तवाऽलंकृतो यस्तु, मुक्ति श्री स्तं वरिष्यति ॥ स्वर्गश्रीः स्वय मायाति, राज लक्ष्मी सुखी भवेत्।२१। यत्र कुत्रापि सद् दृष्टिः पूज्यः स्याङ्गवनैरिप ॥ सम्यक्त्वेन विना साधुः निन्दनीयः पदे पदे ॥ २२॥ सकल सुल निधानं, धर्म वृक्षस्य बीजं ॥ जनन जलि पोतं, भव्य सत्त्वैकपातं ॥ दुरित तरु कुठारं, ज्ञान चारित्र मूळं ॥ त्यज सकल कुधर्म, दर्शनं त्वं भजस्व ॥ २३ ॥ भाषा बुद्धि विवेक वास्य कुशलः शंकादि दोषोष्ट्रितः। गंभीरः प्रशमिश्रया परिगतो वश्येन्द्रियो धैर्यवान् ॥

न्यादि गुणैरलंकृत तनुः सम्यक्त योग्यो भवेत २४

३ निर्मळ श्रध्यानकर

मयना जाण कहे छे. शुद्ध श्रद्धा दिनाना जीव तो केवळ पशु रूपज छे. एमां संशय नथी. समिकतवंत जीवना हाथमांज चिंतामणि रत्न छे, तेना आंगणामांज करपद्दक्ष उत्यो छे. अने कामधेनु तो तेनी सहचारिणीज छे. जे सम्यकत्व भूषणथी भूषित छे तेनेज मुक्ति कन्या वरनारी छे. स्वर्ग लक्ष्मी तो तेने स्वयं आवी मळे छे. अने राजल- इमीनुं तो कहेंबुंज शुं? समकीतवंत जीव सर्व रीते छुखीज थाय छे. समिकत दृष्टि जीव वणे भुवनमां गमे त्यां पूजनिक थाय छे अने समिकत गुण विनानो ते पगले पगले निंदापात्र वने छे. २२

"वीतराग प्रभुनां एकांत हितकारी वचनतुं सावधानपणे श्र-वण करीने तेमां कृत्याकृत्य, त्याज्यात्याज्य अने हिताहितना निर्णय पूर्वक श्रद्धा-आस्ता वेसवी तेनु नाम समक्तित छे." शंका, वंस्वा, फळ संदेह, भिथ्यात्विनी प्रशंसा, अने तेनो परिचय ए पांच दूषणो समिक्षतवंतने दूर करवानां छे. अने शुद्ध देवगुरु तथा धर्म-तीर्थनी भक्ति प्रभावनादिक उत्तम भूषणो तेणे यत्नशी धारण करवानां छे.

शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने, आस्तिकता रूप पांच रूक्षण पूण समिकतवंत जीवमां अवस्य होवां जोइये. एटले के अपराधि उपर पण क्षमा, अविकारी एवा मोक्ष छुखनी अभिलाषा; संसारथी विरक्तता, दुःखी उपर द्या अने धीतरागना वचननी पूर्ण प्रतीति एथी समकीत ओळखाय छे. " एम समजीने हे भद्र! तुं सकल छुखनुं निधान, धमेदृक्षनु बीज, भवनिधि पार प्रमाहनारुं पोत, भव्यतावंतनेज आप्त थनारुं, पाप तरुन उच्छेदनारुं अने ज्ञान—चारित्रन मूळ एवं समितित सकल छुधमेना त्याग पूर्वक तुं अंगीकार कर. २३

भाषा, बुद्धि, विवेक अने वाक्यमां दुशळ, शंकादि दोषरहित, गंभीर, समतावंत, जितेन्द्रिय, धैर्यवान, तत्त्वग्राही, देव-गुरु भक्त, अने उचितता विगेरे गुणोशी भूषित एवो भव्य आत्माज समिक्ति पामवाने अधिकारी छे. २४

४ मिध्यात्वनो त्याग कर.

अज्ञानथी अथवा सम्यग् ज्ञाननी खामीथी सत्यासत्य या त-च्वातच्व संवंधी शृद्ध समज विनानी अथवा कदाग्रहवाळी विपरीत बुद्धिनु नाम मिथ्यात्व छे, तेथी जीव सत्य मार्गने त्यजी असत्य मार्गे दोरवाइ जाय छे. अथवा सत्य मार्गने सारी रीते समजी शकतो नथी, तेमज कचित गाढ मिथ्यात्व योगे सन्मार्गने त्यजी असत् मार्गनु स्थापन करवा भारे परिश्रम करी अनेक भोळा जीवोने उन्मार्ग खेंची जाय छे. सत्य मार्गमां खोटी शंकाओ करवाथी अथवा मि-ध्यात्विओनो परिचय करी तेमनां परस्पर असंबद्ध वचन सांभळ-वाथी या तेमनी प्रशंसा करवाथी समिकतवंत जीवने पण उक्त महा दोषनी प्राप्ति यइ जाय छे, के जेने पछीथी हठावी काढवा भारे परिश्रम करवानी खास जरुर पडे छे. उक्त मिथ्यात्व योगे जीवो भिन्न भिन्न विपरीत करणी करवामां प्रवर्ते छे. तेथी उक्त दोषना प्रकार तथा तेना स्वामीने जाणवानी जरुर छे.

मिध्यात्वना प्रकार तथा उक्त दोवने सेवनारनां नाम.

- ? आभिग्रहिक-परीक्षा रहित केवळ स्वसम्य प्रमाणे एकांत वादी दर्शनो.
- २ अनिभग्नहिक-विवेक शून्यपणे सत्यासत्यने समज्या विना सर्वे दर्शनने समान समजनार.
- ३ सांशियक-सत्य सर्वेज्ञ वचनमां (न्याय विरुद्ध) शंका धा-रनार गूढात्माः
- ४ अनाभोगिक-उपयोग शून्यपण पूर्चिछत दशामां वर्तनार एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय त्रिगेरे.

५ आभिनिवेशिक-जाणी जोइने हठ कदाग्रहथी सत्य वस्तुनो अनादर करीने असत्य वस्तु (धर्भ) नो स्वीकार करी तेनुंज स्थापन करनार निन्हवो विगेरे.

उक्त भिथ्यात्व महा दोषथी भरेला जीवो सत्य धर्भने सेवी शकता नथी. जेम ज्वरातुर जीवने दूध साकर भावतां नथी तेम मिथ्याम-तिने सत्य धर्म रुचतो नथी. जेम रोगीने कुपथ्य व्हालं लागे छे तेम तेने कुध्मे मिय लागे हे, हतां परोपकारैकिनष्ट सद्देश समान सद्-गुरु मिथ्यामितने वारवा अने शुभ मितने धारवा भव्य जीवोने नीचे गुजब हितोपदेश आपे छे—हे भव्यो! सकल पापनु मूळ, दुःख हक्षनु बीज, नर्कगृहनु द्वार, स्वर्ग, अपवर्गनु मारे विघ्न, परम पुरुष निद्य, अने मृह लोकोए सेवित एवा सकल असार मिथ्यात्व वी-जनो तमे त्याग करो के जेथी समिकत अमृतनु सेवन करी तमे अक्षय मुखना अधिकारी थाओ. "

सम्यग् ज्ञाननु सेवन कर.

जेना वहे (आत्म) वस्तु धर्मनु यथार्थ मान थाय अने अज्ञान अधकार दूर थाय तेमज जेथी तत्काळ मिथ्यात्व भ्रमने दूर करनार समकित गुण मगट थाय तेने ज्ञानी पुरुषो सम्यग् ज्ञान कहे छे.

सम्यग् ज्ञानीने गमे तेवुं ज्ञास्त्र समपणे परिणमे छे. गमे तेमां-

थी ते सार मात्र ग्रही शके छे. इंकाणमां प्राप्त परमार्थथी ते छखें स्वपर हित साधी शके छे. अज्ञानी या शुष्कज्ञानी तेम कदापि करी शकतो नथी.

सम्यग् ज्ञानीने सम्यग् ज्ञानना वळथी संमजायेला राग देवा-दिक अंतरंग शत्रुवर्गने दमवा मुख्य लक्ष रहे छे. तेनी सकल क-रणी तेवा मुख्य रुक्षथीज प्रवर्ते छे. तेथी तेने आ दस्य दुनीया केवळ स्वार्थमय भासे छे. जे एक वस्तुने संपूर्ण जाणे छे ते सर्व वस्तुने संपूर्ण जाणे छे, एटले के जे सर्व भावने सर्वथा जाणे छे. तेज एक भावने संपूर्ण जाणी शके छे. आ वातनी खात्री सम्यग् ज्ञानथी सारी रीते थइ शके छे. माटेज सत्समागम करीने या परी-पकारशील महा पुरुष प्रणीत परमागमनी सहाय मेळवीने सम्यग् ज्ञाननो खप कर्या करवो योग्य छे. एवा खपी पुरुषोज परम पदना अधिकारी थइ शके छे, जेम पूर्वे एक पण पदतु सम्यग् रीत्या श्र-वण, मनन अने निदिध्यासन करवाथी कइक भाग्यवंत भव्योत क-ल्याण थयुं छे, तेम सर्वकाळे थइ शके तेम छे. ज्यारे एक पण पद संवंधी सम्यग् ज्ञाननी आवो अपूर्व महिमा छे तो पछी तेवां अनेक पदवाळा सम्यग् ज्ञानतुं तो कहेवुंज शुं ?

द्वानी पुरुषी सम्यंग् द्वानने अंपूर्व अमृत, अपूर्व रसायण अने . अपूर्व ऐश्वर्य कहिने वोलावे छे. अने ते यथार्थ छे, केमके तेथीज .

अत्मा परमपद्नो भोगी थइ शके छे.

सम्यग् ज्ञानयुक्त आत्माज स्वर्ग अने मोक्ष संवंधी लक्ष्मीनो अधिकारी थाय छे. पण अज्ञान अने अविवेकात्मातो दुःखमय सं-सार सागरमांज भ्रमण करें छे.

ज्ञानवंत-विवेकी गमे त्यां कर्म-मुक्त थाय छे, त्यारे अज्ञानी -प्राणी ज्यां त्यां कर्मथी वंधाय छे.

ज्ञानहीन प्राणी पुन्य, पाप, ग्रुण अवग्रुण, तथा त्याज्यात्याज्य विगरेना विवेकने जाणी शकता नथी। जेम जन्मांध जीव सूर्यना स्व-रूपने जाणी शकता नथी तेम अज्ञांनी अविवेकी जीव पण हिताहित, उचितानुचित, तेमज भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय संवंधी गुणदोषनु यथार्थ स्वरूप समजवाने समर्थ थइ शकतो नथी।

उक्त हेतु मटि सम्यग् ज्ञाननं जेम वने तेम आराधन करवा शासकार आपणुं लक्ष खेंचवा भार दहने कहे छे के—

"हे भन्यो ! निर्मळ गुणनुं निधान, समस्त विज्ञाननुं बीज मुमुक्षुजनोए सेववा योग्य, सर्व तत्त्वप्रकाशक, पापतरुनुं निकंदक अने मनरूप मदोन्मत्त हाथीनो गर्व गाळवाने केसरी सिंह समान, सर्वज्ञ भाषित सम्यग् ज्ञाननुं तमे जरुर यथाशक्ति आराधन करो. तेनुं विराधन तो तमे कदापि करशो नहि.

६ सदाचारतु सेवन कर,

आचारनी शुद्धि करवी, सदाचरणतुं सेवन करवुं एज सम्यग् ज्ञान-दर्शनतुं फळ छे. सम्यग् ज्ञान-दर्शन छतां सदाचार (सम्यक् चारित्र गुण) प्राप्त थयो निह तो वांझीया दृक्षनी पेरे ते ज्ञान-दर्शनने अध्यात्मी पुरुषो नकामां कहे छे, एम समजी जेम वने तमे सद्वतो सेववा आत्मार्थी जनोए अहोनिश उजमाळ रहेवुंज योग्य छे. दश दृष्टांतथी दुर्छभ मनुष्यदेह पाम्यानुं खरुं फळ एजछे.

शुद्ध चारित्र युक्त एक दिवसनुं पण जीवित छेखे छे, परंतु चारित्रहीन कोटी वर्षनुं पण जीवन नकामुं छे. शुभकरणी विनाना दिवस मात्र वांझीया छेखवाना छे.

संघयण-शरीरवळ हीणुं छतां ने चारित्रने सम्यग् आचरे छे ते उत्कृष्ट शरीर वळनी अपेक्षाए सहस्रगणुं फळ पामे छे. संघय-णतुं वातुं काढीने चारित्र गुणमां शिथिल थवाने वदले उलटो अधिक प्रयत्न करवो युक्त छे. छतां शिथिलताने भजनार प्रगट स्वपरनां अहितनाज भागी थाय छे.

चारित्रवंत स्व मर्यादाने सेवतो जे जे वस्तुने इच्छे छे तेने ते तत्काळ आवी मळे छे एवो सम्यग् चारित्रनो महिमा प्रगट छतां तेमां कोण प्रभादी थशे ? हीन संघयण छतां जे एक वर्षनी दीक्षा वरावर पाळवी ते उत्कृष्ट संघयणनी सहस्र वर्षनी दीक्षा वरावर समजवी युक्त छे. एम विचा-री तप, जप, ज्ञान, ध्यान विगेरे सदनुष्टानमां सदा सावधानपणे वर्तवामांज स्वपरहित समायेखं जाणवं.

चारित्रथी चलायमान थइ श्रष्ट थयेलो जीव जीवतो छतो मूआ बरोवर छे. अने चारित्र संयुक्त आत्मा मूआ छतां उभय लोकमां अमर थइ रहे छे. उक्त हेतुथी चारित्र गुणनी पुष्टि माटे शास्त्रकार भार मुकीने उपदिशे छे के—

"सकल मदरहित, देवमान्य, सर्व तीर्थनाथोए सादर सेववा-चोग्य महा गुणसागर पंडितोए सेवित, मुक्ति गुखनु अवंध्य वीज, निर्मेळ गुणनिधान, सर्व कल्याणनं यूळ कारण, अने सकळ विकार-ग्रहित एवं निर्मेळ चारित्र हे भव्यो ! तमे भावथी भजो, जेथी अक्षय अनंत गुखने तमे सहजे वरो."

७ इंद्रियोर्नुं दमन कर.

नायक एवा मने भेरेला इंद्रिय—चोरोए धर्म धनतुं हरण करीने वापडा लोकोने आक्तळव्याक्तळ करी मूवया छे. तथी तेमने वश करवाने भगीस्थ प्रयत्न करवानी जरुर छे. अन्यथा ते सर्वने वश करी जीवनी भारे दुर्दशा करशे. जेम इंघनथी अग्नि तृप्त थतो नथी अने गमे तेटली नदीयोथी पण दरीयो पूरातो नथी तेम विषयमुखथी कदापि पण इंद्रियो तृप्त धवानी नथी. एम मध्यस्थपणे विचार करी विवेकथी संतोषहित्त धारवी योग्य छे.

जेणे वैराग्य खड्गथी इंद्रिय चोरोने हण्या छे तेनोज खरेखर मोक्ष थाय छे. वाकी बीजा कायाक्लेको वडे शुं वळवातुं छे । माटे प्रथम मन अने इंद्रियोनेज वक्ष करी लेवानी जरुर छे. ते विना कर-वामां आवती कष्टकरणी कष्टहरणी थवानी नथी.

मननो जय करीने जेमणे इंद्रियोनो निग्रह कर्यो नथी तेमणे साधु-मुद्रा धारण करीने केंचळ पोताना आत्माने ठग्योज छे. एम निश्रय समजवुं.

जे पोतानी इंद्रियोने पण जीतवाने समर्थ थइ शकता नथी ते-मनी दीक्षा के तपस्यामां कांइ माल जेवुं नथी. इंद्रियोना गुलाम थइने उलटा ते घर्मनी अपभ्राजना रूप महा अनर्थने पेदा करे छे. माटे दीक्षा ग्रहण कर्या पहेलांज योग्य विचार करवानी जरुर छे. दीक्षा लीघा बाद तो इंद्रियो उपर संपूर्ण काबु राखवा अहोनिश लक्ष राखी रहेवानी खास जरुर छे. केमके विरक्त आत्माने पण ते विषयपासमां पाडी नांखतां चूकती नथी. इंद्रियरुपी दुर्धिर चोरो जीवनां त्रतज्ञानादि गुण रत्नथी भरेला जगतारक भांडने क्षणवारमां स्वलना पमाडे छे. तेथी जे मुनीश्वरो संनद्ध थइने महात्रतरुपी वाणो सावधानपणे ग्रही मर्यादामां रह्या छतां ध्यानरुप तीरथी तेमने ममेमां हणे छे, तेओज सुरूसमाधे मोक्षपुरीमां जइ शके छे.

८ स्त्रीनो संग-परिचय तज.

स्त्री केवळ काम विकारतं घर छे, एम समजी साधु जनोए तेनी संगति वारवी योग्य ज छे. भला भला पण साधु स्त्री संगतथी निशान चूकी गया छे. तेथी ब्रह्मचारीजनोए स्त्रीओना परिचयथी दूर रहेवुं ज हितकारी छे. एम वर्तवाथी ज नवकोटि शुद्ध ब्रह्मच-र्यनी रक्षा थइ शके छे.

दुनियामां गहनमां गहन स्त्री चरित्र ज छे. तेथी जेम वने तेम साधु पुरुषोए तेनाथी चेततां रहेवानी जरुर छे. जेवो मूषकने मार्जारी तरफथी भय राखवानी जरुर छे. तेम ब्रह्मचारी साधुने पण स्त्री समुदाय तरफथी भय राखवानी जरुर पढे छे, स्नीजनोनो परिचय साधु जनोने हितकारी नथी ज ए निविवाद सिद्ध छे.

अग्निथी लालचोल थंयेली लोहमय पूतलीतं आलिंगन करवं सारु पण नर्कना द्वारभूत नारीना नितंवतं सेवन करवं सारुं नथीज. स्त्रीने एक दूझती विषनी वेल छे एम समजीने तेनाथी दूर् रहेवुं.

स्त्रीनां मोहमय वचन विलास या हावभावथी लोभाइ पबळ कामथी पीडित थइ अंते आप खुद चालगार साधु ब्रह्म व्रतथी भ्रष्ट थाय छे.

स्नीना चिर परिचयथी साघु कुलवालुकनी पेरें मार्ग भ्रष्ट थइने महा विडंबना पात्र थाय छे, अने क्षणिक सुखने माटे अक्षय सुखयी चूकी जाय छे. तेथी आत्मार्थी साधु जनोए स्नी संगयी दूर रहेवुं ज युक्त छे.

ज्यारे चित्रादिमां निर्माण करेली नारी पण मननो क्षोभ करे छे तो पछी साक्षात् जीवती ज्योत (महामाया) नारी साथे संसर्ग वार्तादिक करतां केम कायम रही ज्ञकाय ए जरूर विचारवा जेवुं छे.

सर्प, व्याघ्र, चौरादिकनी साथे सहवास करतां एटछं नुक-शान नथी जेटछं स्त्रीनी साथे क्षणमात्र रहेतां संभवे. एम समजीने शाणा साधुओए क्षणमात्र पण स्वच्छंदपणे स्त्रीनो संग या परिचयः करवो योग्य नथी. सापणी स्पर्ध करीने करहे छे अने नारी तो दूरथीज इंस मारे छे. तेथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टि-मांज झेर रहेछं छे. एवी स्त्रीतुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चा-स्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं हिर्मिंगी साधु जरुर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजब स्नीना अंगोपांगने पण दृष्टि दहने नीरखता नथी, विकार बु-द्रियी (पशु दृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय मुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थहने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोद्धिने सहजमां तरीने अक्षय मुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाश्रयो नांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कहुं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं।। बंर की त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं।।।।।

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चौरभय, आ लोकमां

पण मुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ट एवी कीर्ति-कौम्र-दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवं आ प्रगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

९ विषय रसनो त्याग कर-

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुंगेधी एवी स्थीनी योनिमां कामांन्ध माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. थवभीरु विवेकात्मा तो स्वममां पण तेनो संग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गधी एवा श्लेष्मा-दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्य माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादियी भरेला कृमा-कुळ स्त्रीना उदरमां कामांन्ध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीयी वींटेलुं अने वस्नाभरणयी भूषित करेलुं स्नीनुं रूप जोइने हे ! भद्र ! तुं विवेकथी विचारकर, पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक इंपलाइ पडीश नहि, नहितो छेवट पश्चाताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु- सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टि-मांज झेर रहे छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चा-ल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं ह्यीसंगी साधु जरुर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजब स्नीना अंगोपांगने पण दृष्टि दृइने नीरखता नथी, विकार बु-दिथी (पशु दृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय सुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यमुं पालन करे छे तेज यहात्माओ आ दुस्तर भवोद्धिने सहजमां तरीने अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाश्यो नांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कहुं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं॥ वर कीर्त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं,॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण सुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ट एवी कीर्त्ति-कौमु-दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवं आ प्रगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

९ विषय रसनो त्याग कर-

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुंगेथी एवी स्थीनी योनिमां कामांन्य माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. भवभीरु विवेकात्मा तो स्वममां पण तेनो संग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गधी एवा श्लेष्मा-दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्ध माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कृ्मा-कुळ स्त्रीना उदरमां कामांन्ध माणस कागडानी जेग क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीथी वींटेलुं अने वस्नाभरणथी भूषित करेलुं स्नीतुं रूप जोइने हे ! भद्र ! तुं विवेकथी विचारकर, पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक इंपलाइ पडीश निह, निहतो छेवट पश्चाताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु-

सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टि-मांज झेर रहे छं छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चा-ल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने वोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं ह्वीसंगी साधु जरुर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजव स्त्रीना अंगोपांगने पण दृष्टि दृइने नीरखता नथी, विकार बु- दिथी (पशु दृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय गुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोद्धिने सहजमां तरीने अक्षय गुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाश्रयो नांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कहुं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं॥ बर की त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं,॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण मुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ट एवी कीर्ति-कौमु-दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवं आ प्रगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

९ विषय रसनो त्याग कर-

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुरीधी एवी स्थीनी योनिमां कामांन्ध माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. भवभीर विवेकात्मा तो स्वममां पण तेनो संग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुंगेधी एवा श्लेष्मा-दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्य माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कृ्मा-कुळ स्त्रीना उद्रमां कामांन्ध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चापडीथी वींटेलुं अने वस्नाभरणथी भूषित करेलुं स्नीतुं रूप जोइने हे! भद्र! तुं विवेकथी विचारकर, पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक इंपलाइ पडीश नहि, नहितो छेवट पश्चाताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अधुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अधु-

चिने वहन करतां छतां चामडाथी मढेला स्त्रीना देहतुं अंतर खरूप विचारीने तुं विवेकथी तेनो परिहार कर.

कामान्ध माणस कामरागने वश थयो थको दोषाकुळ स्त्रीमां ग्र-णनोज आरोप कर्या करे छे, अने विषयरसना त्यागी एवा विवेकी हंसनी पण हांसी करी स्वउत्कर्ष बताववा मागे छे. पण अंते तो काच ते काच अने मणि ते मणिज छे.

घूड दिवसे देखतुं नथी अने कागडो रात्रे देखतो नथी पण का-मांन्य तो रात्रे के दिवसे कंइपण देखी शकतो नथी. मोह महा म-दिराना जोरथी तेनी शुद्धबुद्ध खोवाइ जवाथी ते मृच्छितपाय: थइ जाय छे.

कामान्ध माणस जिह्वा अने कामने वश पडयो जे जे पापकर्म करे छे तेनां अगण्य फळ ते नरकादिक गतिंमां जइने भोगवें छे.

कामान्ध माणस सुख, दुःख, हिताहित, पुण्य, पाप तेमज स-मीपस्थ वध, वंध अने मरणने पण जाणी शकतो नथी. तेने दुर्गति-नो हर होतो नथी, तेथी ते निःशंकपणे पशुक्रीडा (मैथुन-पशुक्रिया) करवामांज मशगूल रहे छे. अने सांदनी जेम स्वच्छंदपणे म्हालवा-मांज सार समजे छे:

तिल मात्र सुखने माटे कामान्ध माणस सारां व्रतने तजीदे छे..

अने आ लोक अने परलोकमां मेरु जेवडां मोटां दुःख माथे व्होरी ले छे.

विषम एवा काम-वाणथी पीडित थइ जे धर्मस्प चिंतामणिने तजी देछे, ते हतभाग्य अनेक जन्ममरण संबंधी दुःखने साधी दुर्ग-तिमां जाय छे.

१० श्री वीतराग देवनी भक्ति कर.

जे सुबुद्धि पुरुष एकाग्रिचित्ते सदा वीतराग पश्चनी सेवा करे छे ते खर्ग अने राज्यादि संबंधी सर्वे सुखने भोगवीने अंते अक्षय पदने पामे छे.

वीतराग प्रभुने तजीने जे राग द्वेष युक्त देवने भजे छे ते दुर्भिति चिंतामणि रत्नने त्यजीने धूळनुं ढेफुं हाथमां छेवा जेवुं करे छे.

जिनेश्वर देवतुं स्मरण मात्र करवाथी रोग शोक भय क्रेश ग्रह साकिणि अने दारिद्रादिक सर्व दुःख दूर थइ जाय छे.

जे मुग्ध अनेक देव अने अनेक गुरुने सेवे छे ते कार्याकार्य सं-वंधी विचार शून्य उन्मत्त जेवो छे, एम जाणवुं.

भव्य कमळोने प्रवोध करनार, सर्व दुःखने दूर करनार, त्रिश्च-

वनपतिने सेववा योग्य, धर्म रत्नना सागर, खपरने अत्यंत हितकारी स्वर्ग अने मोक्षस्रखना मुख्य साधनभूत अने सकळ ग्रुणनानिधान प्वा तीर्थनाथ श्री वीतरागमभुनी हे भव्यो ! तमे भावथी भक्ति करो जेथी अनुक्रमे सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्रस्प रत्नत्रयीने पामी वेतुं सम्यग् आराधन करीने तमे अक्षय—अविनाशी सुखना संपूर्ण अधिकारी थाओ ?

११ सद्गुरुनुं सेवन कर,

जे गुरु ज्ञान अने चारित्रथी युक्त छतां धर्मीपदेशक, निर्लीभी अने भव्य जीवोनो निस्तार करनार छे, तेनुंज आत्महितैषीए सेवन करतुं युक्त छे.

जे सद्गुरु स्वयं भवसमुद्र तरी शके छे तेज अन्य जीवोने पण तारी शके छे. जे पोतेज भवसागरमां डूबे छे ते परने शी रीते तारी शकशे ? एम विचारीने सदोष—सारंभी गुरुनो त्याग करवो.

सद्गुरु सेवक सुबुद्धि पुरुष स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी सुखने पामे छे. पण क्रगुरुकामी दुर्बुद्धि तो नरक अने तिर्थेच गतिनेज प्राप्त थाय छे.

जे निर्प्रथ गुरुने तजीने कुगुरुनी सेवा करेछे ते घरना आंगणे ज्योला कल्पटक्षने छेदीने धंतूराने वाववा जेवुंज करे छे. मातापिता अने सर्व कुटुंवादिक; दुर्गतिमां पडता जीवनो उ-द्धार करवा असमर्थ छे. पण एक संद्गुरु, पवित्र धर्मनी सहायथी. अनेक भव्य जीवोने आ भवसायरथी तारवाने समर्थ थइ शके छे.

जेने स्वपर संवंधी सम्यग् विचार वर्ते छे, जे संसारना पारने. पामेला छे, वली निरुपम गुणे करीने युक्त, ज्ञान विज्ञानमां दक्ष, जीते-न्द्रिय, भव्य जीवोने तारवा पोत समान, अने सकल दोषरहित एवा. सद्गुरुनी हे भव्यो! तमे भावथी भक्ति करो.

१२ तप करवामां यथाशक्ति प्रयत्न कर.

जे सुबुद्धि तपतुं स्वरूप समजीने केवळ आत्मकल्याण माटे तेतुं सेवन करे छे तेने अनुक्रमे सर्व कर्मनो अंत थतां सुक्तिकमळा पणः वरे छे तो पछी स्वर्ग संबंधी सुख अने राज्यना सुखनुं तो कहेबुंज शुं ? तेवां सुख तो प्रासंगिक होवाथी सहजे संपजे छे.

अनशन, ऊनोदरी दृत्ति संक्षेप, रसत्याग, कायक्छेश अने सं-लीनतारुप वाह्यतप तथा प्रायश्चित, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान अने काउरसम्म (समाधि) रुप अभ्यंतर तपने जे विवेकथी सेवे छे ते महाशयनी सकळ मनोरथमाळा फळीभूत थाय छे.

वाह्यतपथी जेम अभ्यंतरतपनी पुष्टि थाय तेम लक्ष राखवानी खास जरुर छे. वळी जेम धर्मसाधनमां वधारे सावधानपणुं रहें।

वनपतिने सेववा योग्य, धर्म रत्नना सागर, खपरने अत्यंत हितकारी स्वर्ग अने मोक्षम्यखना मुख्य साधनभूत अने सकळ गुणनानिधान एवा तीर्थनाथ श्री वीतरागप्रभुनी हे भव्यो ! तमे भावथी भक्ति करो जेथी अनुक्रमे सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्ररूप रत्नत्रयीने पामी वेतुं सम्यग् आराधन करीने तमे अक्षय—अविनाशी मुखना संपूर्ण अधिकारी थाओ ?

११ सद्गुरुनुं सेवन कर,

जे गुरु ज्ञान अने चारित्रथी युक्त छतां धर्मीपदेशक, निर्लीभी अने भव्य जीवोनो निस्तार करनार छे, तेर्नुज आत्महितेषीए सेवन करवुं युक्त छे.

जे सद्गुरु स्वयं भवसमुद्र तरी शके छे तेज अन्य जीवोने पण तारी शके छे. जे पोतेज भवसागरमां डूबे छे ते परने शी रीते तारी शकशे ? एम विचारीने सदोष-सारंभी गुरुनो त्याग करवो.

सद्गुरु सेवक सुवुद्धि पुरुष स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी सुखने पामे छे. पण कुगुरुकामी दुर्वुद्धि तो नरक अने तिंधेच गतिनेज प्राप्त चै.

जे निर्मेथ गुरुने तजीने कुगुरुनी सेवा करेछे ते घरना आंगणे जिंगेला कल्पदृक्षने छेदीने धंतूराने वाववा जेवुंज करे छे. कर्मरुप पर्वततुं भेदन करवा वज् समान, स्वर्ग अने मोक्ष सुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपतुं हे भन्यो ! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपतुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संवंधी मुखने पामी अंते हढ महारीनी जेम अविचल मुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने मुखे साधी शके छे.

१३ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां छंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याछ राखतो नथी ते कुबुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आहु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळ, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सक्तरकंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र-फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, बहुबीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज मेम्रुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छात्रा, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छात्र) मध, माखण, वासी अन, वोळ अथाणुं अने सडी गयेली वस्तु विगरे अमस्यादिकनुं

कषायनी मंदता थाय अने परिणामनी शुद्धि थाय तेम छक्ष राखीने तप करवो. समतापूर्वक तप करवाथी निकाचित कर्मना पण बंध तूटी जाय छे. विवेकयुक्त तप संयमथी गमे तेवां अघीर पापनो पण क्षय थाय छे.

जे करतां दुर्ध्यान थाय अथवा आगळ उपर धर्मसाधन अटकी पढ़े एवां अज्ञान तप घणा करवा करतां विवेकयुक्त स्वल्प तपथी विशेष हित थइ शके छे. जे स्वाधीनपणे तप संयमथी देहतु दमन करे छे तेने कदापि परतंत्रता संबंधी दुःख सहन करवुं पडतुं नथी. पण शरीर—ममताथी जे कंइपण तप जप संयम सेवता नथी तेमने पराधीनपणे वहुज शोचबुं पढ़े छे. अंते पण तप जप संयम विना सकळ दुःखनो अंत नथी तो पछी शा माटे प्राप्त थयेली शुभ साम-प्रीनो लाभ लेवा चूकबुं जोइये ? पुण्य सामग्रीने पामीने तेनो सदुप-योग नहि करनारने तेवी सामग्री पुनः प्राप्त थवीज मुक्केल छे. माटे जेम वने तेम तेनो सदुपयोग करवोज युक्त छे.

च्यार ज्ञाने करी युक्त अने सुर—सेवित एवा तीर्थनाथ पण ज्यारे कमें क्षय माटे तप करे छे तो पछी सामान्य जनोए ते शा माटे करवी न जोइये ? आत्म उन्नति माटे ते करवानी खास आ-बर्श्यकता है। कर्मरुप पर्वतनुं भेदन करवा वजू समान, स्वर्ग अने मोक्ष मुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपनुं हे भन्यो ! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपतुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संबंधी सुखने पामी अंते दृढ महारीनी जेम अविचल सुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने सुखे साधी शके छे.

१३ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां लंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याल राखतो नथी ते कुचुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आदु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळ, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सक्तरतंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र-फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, वहुवीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज प्रमुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छात्र, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छात्र) मध्, माखण, वासी अन्न, बोळ अथाणुं अने सडी गयेली वस्तु विगरे अभस्यादिकनुं

कषायनी मंदता थाय अने परिणामनी शुद्धि थाय तेम छक्ष राखीने तप करवी. समतापूर्वक तप करवाथी निकाचित कर्मना पण बंध तूटी जाय छे. विवेकयुक्त तप संयमथी गमे तेवां अघोर पापनो पण क्षय थाय छे.

जे करतां दुर्ध्यान थाय अथवा आगळ उपर धर्मसाधन अटकी पढ़े एवां अज्ञान तप घणा करवा करतां विवेकयुक्त स्वल्प तपथी विशेष हित थइ शके छे. जे स्वाधीनपणे तप संयमथी देहतु दमन करे छे तेने कदापि परतंत्रता संबंधी दुःख सहन करवुं पढतुं नथी. पण शरीर—ममताथी जे कंइपण तप जप संयम सेवता नथी तेमने पराधीनपणे वहुज शोचवुं पढे छे. अंते पण तप जप संयम विना सकळ दुःखनो अंत नथी तो पछी शा माटे प्राप्त थयेळी शुभ साम-श्रीनो लाभ लेवा चूकवुं जोइये ? पुण्य सामग्रीने पामीने तेनो सदुप-योग नहि करनारने तेवी सामग्री पुनः प्राप्त थवीज मुक्केल छे. माटे जेम वने तेम तेनो सदुपयोग करवोज युक्त छे.

च्यार ज्ञान करी युक्त अने सुर—सेवित एवा तीर्थनाथ पण ज्यारे कमें क्षय माटे तप करे छे तो पछी सामान्य जनोए ते ज्ञा माटे करवो न जोइये ? आत्म उन्नति माटे ते करवानी स्वास आ-बर्धकरों छे. म कर्मरुप पर्वततुं भेदन करवा वज् समान, स्वर्ग अने मोक्ष मुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपतुं हे भन्यो ! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपनुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संवंधी मुखने पामी अंते दृढ प्रहारीनी जेम अविचल मुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने मुखे साधी शके छे.

१३ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां लंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याल राखतो नथी ते कुबुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आदु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळ, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सकरकंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र-फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, वहुवीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज मेम्रुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छात्रा, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छात्र) मध, माखण, वासी अन्न, वोळ अथाणुं अने सडी गयेली वस्तु विंगेरे अभस्यादिकंतुं

स्वरुप समजीने सुबुद्धिजनोए तेनो त्याग करवो योग्य छे. केमके क्षणिक विषय सुखनी खातर तेथी असंख्य के अनंत जीवोनो वि-ध्वंस थाय छे.

एक तलमात्र भूमिकंदमां पण अनंत जीवो रहेला छे. तेथी पश्नी पेरे विवेक रहित तेवी अभक्ष्य, अनंतकाय वस्तुओने प्रमाण रहित खानार माणसो अनंत जीवोनो संहार करी क्षणिक तृप्ति में-ळवी अधोगतिने पामी अनंत जन्म मरण संबंधी दुःखने प्राप्त खाय छे.

तिलमात्र मुखने माटे मेरुथी पण मोटुं दुःख मूर्ख लोको अज्ञा-नताथी मागी लेखे जिहेंद्रियने वश करी अभक्ष्य मात्रनो त्याग कर-नार मुबुद्धिजनो सर्वत्र सुखी थाय छे.

रस लंपट जीवो अनेक व्याधिओने भोग थह पडे छे तेम जीतेंद्रिय कदापि थइ पडतो नथी. एम समजीने पण अभक्ष्य भक्ष-णथी सदंतर दूरज रहेवा प्रयत्न करवो.

औषध उपचारनी खातर मध, माखण विगेरे अभक्ष्य वस्तु वापरी खानारने पण परिणामे अहितज कहेळुं छे. तथी तेवा विषम संयोगोमां विवेकी माणसोए विशेषे सावचेत रहेतुं योग्य छे. (युक्तछे.)

पितत्र दीक्षा ग्रहण कर्या छतां रसनेंद्रियने वश थइ यथेच्छित. मोजन करनार भिक्ष मंगू आचार्यनी पेरे विडंबनापात्र थाय छे.

तेथी उभय लोकनां सुखनें इच्छता आत्मार्थी जीवोए जीहाने जेम वने तेम विवेकथी वश करवा सतत प्रयत्न करवी युक्तज छै.

जेंम कुपथ्य भोजनथी माठां परिणाम आवे छे तेम तेवां विवेक विनानां रागद्वेष युक्त स्वाधीं वचनोथी पण विपरीतज परिणाम आवे छे एम समजीने खपरने हितकारी सत्य अने प्रिय वचनज यसंगोपात वोलवानी टेव पाडवी. जस्र विनातुं, दगर दिचार्यु, स्ब-च्छंद्पणे वहु वोस्रवानी क्टेवथी जीव घणीवार जीवना पण जौ-खममां आवी पडे छे एम विचारीने शाणा माणसीए हित, मित, भिय, एवं सत्य ५ण असंगोपात जस्र जेटहंज नम्रएणे बोलवानी टेव राखवी. आथी सर्व कोइने संतोष मळवानो सारो संभव रहे छे. रांगद्वेष राहत मध्यस्थपणे विचारीनेज प्रसंगोपात प्रिय अने सत्य वचन वद्वाथी ते परने पण प्रायः हितकारीज थाय छे.

१४ राग देवनो त्याग कर

अनादि इकर्मना योगथी जीवने रागद्वेपरूप भारे दुस्तर ं विकार थया छे, जेथी जीव एकने देखी राजी थाय छे अ**ने वीजाने** देखी कराजी याय छे. तेमज़ ते चेपी रोग अनेक भव संतात सुधी चाल्या करे छे.

उक्त महाविकारथी जीवने स्वपरतुं यथार्थ भान थइ शकतुं र्नथी. तेथी तेने गुणदोष संबंधी उलटुं अवळुंज भान थाय छे. रागी दोषं न पद्यति—विषय सुखमां मग्न थयेलो जीव स्त्री आर्दिक पदार्थीमां रहेला दोषोने तेमजं तेमना संग-परिचयथी भावी दोषोने नहि समजतां उलटा तेमां ग्रुणनोज आरोप करीने अंध प्रवित्त कर्या करे छे. एवीज रीते इर्ष्या-द्वेषथी जेतुं अंतःकरण कलुषित थई गयुं छे तेनी मित पण विपरीतज दीरावाथी सामामां गमें तेवा संद्गुणों छतां अने तेवा सद्गुणी-समर्थनी साथे द्वेषबुद्धि राख़वाथी भावी अनर्थने ते मूढात्मा समजी शकतो नथी, एटछुंज नीह पण सामानामा रहेला सद्गुणोने ते जडमति केवळ दोषरपेज छेखे छे अने तेने तृणनी जेम गणी मिथ्याभिमानथी तेनी साथे वर बांधीने उलटो अनर्थन पेदा करे छे. वडना बीननी पेरे आगळ जतां तेनी परंपरा वधतीज जाय छे. एम समजीने शाणा माणसोए जेम वने तेम शीघ्र उक्त महा विकारोने उपशमाववा अवश्य उद्यम करवो घटे छे:

रींग अने द्वेषं हलाहिल झेर करतां पण अधिक दुःखदायी

जो समता भावित सत् पुरुषोनी सोवत करीने तेमनी हित श्रीखामणयी पोतानी अनादिनी भूल समजवामी आवे अने तैथी पोताना विकारोने वारवाने जोइतो प्रयत्न करवामां आवे तो अतु-क्रमे सतत शुभ अभ्यासना वळथी आपणामां जड घालीवेसेला राग द्वेषादि विकारोनो समूळगो अंत आवी शके. पण ज्यां मुधी उक्त महा विकारोनो अंत न आवे त्यां सुधी तेमतुं उन्मलन करवा अडग प्रयत्न कर्याज करवो जोइए.

राग अने द्वेषथी अंध थयेला प्राणीयोनी प्रायः अधोगितज थाय छे. एवा अंध जीवोने खरी आंख आपनारा अलौकिक शक्ष वैद्य समान कोइक सत् पुरुषनो समागम भाग्योदये थइ आवे अने जो तेमनी सम्यग् उपासना करवामां आवे तो सदुद्यमना स्वादिष्ट फळ रुपे आपणा अनादिना महा विकारो नष्ट थइ आपणने समता रुपी दिन्य चक्षुनी स्वतंत्र प्राप्ति थइ शके.

१५ कोवादि कषायने दूर कर

क्रोध, मान, माया, अने छोभ ए च्यार कषाय छे. अपीति लक्षण क्रोध, अहंभाव लक्षण मान, दंभ लक्षण माया, अने असंतोष लक्षण लोभथी अनुक्रमे मीति, विनय, मित्राइ, अने सुख शान्तिनो नाम याय छे. माटे समजु माणसने ते अवस्य परिहरवा योग्यज छे, द्वेष या इर्ष्या थकी क्रोध अने मान पेदा थाय छे तेमज काम या रागान्धताथी माया अने छोभ पेदा थाय छे अने जेम जेम तेमने तेथी पोपण मळतुं जाय छे तेम तेम तेओ शिद्ध पामता जाय छे.

वाह्य अने अंतर वे प्रकारना शत्रुओमां अज्ञानी छोको जेना
प्रति वैरभाव राखे छे ते बाह्यशत्रु छे, अने ज्ञानी पुरुषो जेमनो क्षय
करवा अहोनिश यह कथी करे छे ते अंतरंग शत्रुओ—काम, क्रोधादिक छे. बाह्यशत्रु उपर कषाय करवो ते अपशस्त छे. अने अंतरंग
शत्रुओ उपर कषाय करवो ते प्रशस्त कषाय कहेवाय छे. प्रशस्त
कषायना योगे अपशस्त कषायनो अनुक्रमे अभाव थाय छे, तेथी
प्रशस्त कषाय अपशस्त रागादिने दूर करवा अमोध उपाय छुट्य छे

अंते तो सर्वे प्रकारना कपाय सर्वथा परिहरवाथील परमपदः प्राप्त थाय छे. ज्यां छधी छेश मात्र राग, द्वेषादिक विकार होय त्यां छधी वीतरागता होइ शके निह अने ते विना अक्षयपदना अधिकारीः यह शकायज निह. माटे वीतराग दशाने प्रगट करवा- रागद्वेष अने कषाय मात्रनो क्षय करवाने सतत प्रयत्न करवो जोइये.

क्षमा गुणवंडे क्रोधनो, विनय-नम्रता गुणथी माननो, सरलता— गुणथी माया-कपटनो, अने संतोष गुणथी लोभनो पराजय करवो. कर्षुं छे के— क्षमा सार चंदनरसें, सिंचो चित्त पवित्र; दया वेल मंडप तले, रहो लहो मुख मित्र. देत खेद वर्जित क्षमा, खेद रहित सुखरांज; तामे नहि अचरिज कल्ल, कारण सरिखो काज.

क्षमा खड्गः करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति॥ अतृणे पतितो विह्वः स्वयमेवो पशाम्यति.

> यृदुता कोमळ कमलथें, वज्रसार अहंकार; छेदतहे एक पलकमे, अचरिज एह अपार.

माया सापणी जगडसै, ग्रसै सकळ ग्रणसार; समरो रुजुता जांगुली, पाठ सिद्ध निरधार.

कोड सयंभू रमणको, जो नर पावै पार; सोभी लोभ समुद्रको, लहै न यथ्य प्रचार. मन संतोष अगस्तिकुं, ताके शोष निमित्त; रितृतु सेवो जिनि सो कियो, निजवल अंजलि मित्त. पूर्वोक्त वे प्रकारना कषाय समजवात फळ ए छे के जेनाथी भव संताति वधे एवा अभ्यस्त कषायथी दूर रहेवा माटे प्रथम तो प्रशस्त रागादिक सेववां. एटले के गुद्ध देव, गुरु अने धर्म प्रति प्रेमभाव धारण करवो ने वधारवो. ते एटले सुधी के संसार संवंधी खोटो राग समूळगो नष्ट थइ जाय. अने आत्म—गुणनुं आपफ्ने सहज भान थाय अने छेवटे वीतरागद्या, प्रगट करवाने सर्व प्रमाद दोषनो परिहार करीने सम्यण् ज्ञान, दर्शन अने चारित्रना दृढ अभ्यासथी आपणे सर्वथा निष्कषायपणुं पामीये.

जेओ शुद्ध देव गुरू धर्म उपर निर्मळ राग करवाने वदले उलटो कराग-द्वेष पेदा करे छे ते हतभाग्योने भविष्यमां अनंत भव भ्रमण करवुं पडशे. अने तेमने प्राप्त सामग्री पुनः पामवी दुर्लभ थइ पडशे.

जेओ पाते गुणी छतां गुणवंत उपर राग धरशे तेओ अवश्य उभय लोकमां मुख अने यशना भागी थइ अंते अक्षय पदने पामशे.

दीक्षा ग्रहण करीने जे क्रोधादि कषायने सेवशे—हितकारी व-चन कहेनारनी उपर कोपशे, तपश्चतनो गर्व करके अथवा पूजा प्रतिष्ठादिकथी मनमां अभिमान धरशे, खरा गुण विना खोटो आ-डंवर रची दंभद्यति चलावशे अने वस्त्र पात्र पुस्तक या शिष्य शि-ष्याओनो खोटो लोभ राखशे. तेमनी उपर ममता धारण करशे तो ते स्वचारित्रने निष्फळ करीने अंते अधोगितने पामशे. सहज सु-खदायी चारित्रने धारीने जे भवभीर साधुओं राग द्वेषादिक दुष्ट विकारना उत्पादक अनुकूळ या मितकूळ कारणो मळतां छतां निर-तिचारपणे स्वसंयमने पाळे छे तेज खरा धीर वीर साधुओं छे एम निश्चें जाणवुं. कहां पण छे के:—विकारहेतीसितिविक्तियंते, येषां न चेतांसि त एव धीरा:—राग द्वेष या कामक्रोधादि विकार ऊपजे, एवां कारण विद्यमान छतां जेमनां चित्त जराए क्षोभ पामतां नथी तेज धीर-वीर पुरुषों छे.

१६ अहिंसा व्रतनो आदर कर.

प्रमाद युक्त आचरणथी स्वपर प्राणनो नाश करवो तेतुं नाम हिंसा छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा ए पांच प्रमाद जीवोने दुर्गतिमां पाडनार छे तथी ते अवश्य वर्ज्य छे. सर्व प्रमाद रहित थइने "आत्मवत् सर्व भृतेषु" सर्व प्राणीने स्वसमान छेखनार महाशय अहिंसा व्रतने यथार्थ पाळी शके छे.

सर्व जीवने अभय दान देनार जेवो कोइ उत्कृष्ट पुण्यवान् नथी. केमके सर्व दान करतां अभय दान चढ़ीयातुं छे.

दुनियामां वहालामां व्हाली चीज पोताना माणज गणाय छे. तेथी कोइ खुद्र जीवना पण मिय माण अपहरना यह करवो नहि. सर्वे जीवितज इच्छेछे, कोइपण मरणने इच्छतुंज नथी. एम स-मजी निग्रंथ पुरुषो अहिंसात्रतनो अत्यंत आदर करे छे.

मनथी, वचनथी, के कायथी हिंसा करवा कराववा के अनु-मोदवानो सावधानपणे त्याग करवाथीज अहिंसावतनुं पूर्ण रीते धालन थाय छे.

जे जेवा मंद के उत्कृष्ट परिणामथी परने परिताप करे छे ते तेनो तेत्रान अल्प के अधिक विपाक भोगवे छे. तथा कोइ रीते क्रोइने पण पीडा ऊपने एवं मनथी, वचनथी के कायाथी, करवं, कराववुं के अनुमोदवुं नहि. केम के जेवुं वीज वावीये तेवुंज फळ पामीये. वळी आपणने दु:खगात्र अनिष्ट छतां जो आपणे अन्यने आपणा तुच्छ स्वार्थनी खातर जाणी जोइने असमाधि उपजाविये तो पछी तेना बदला तरीके आपणने पण असमाधिज पेदा थाय तेयां आश्रव हां ? तथा उत्तम रस्तो एज छे के सारा के नरसा अ-नुकूळ के प्रतिकूळ संजोगोामां सहनकीळपणुं धारण करीने कोई जीवने कंइपण असमाधि नहि करतां वनी शके तेटली समाधि क-रवा प्रयत्नशील थावुं. आवा कठीण पण सीधे रस्ते चालनार स-त्पुरुषने कदापि कंइपण कष्ट प्राप्त थवांतुं नथी, एटलंज नाहि पण ते सत्पुरुष पोताना सदाचरणथी श्रेष्ठ सुखनोज अधिकारी थवानो.

शरीर संबंधी अनेक प्रकारना व्याधि, निर्धनता, परतंत्रता, अनं चैर, विग्रह विगरे सर्व हिंसानां फळ समजीने सुबुद्धिजनोए अहिं-सानोज आदर करवो.

अरोग्य, सै।भाग्य, स्वामित्व, अने समाधि प्रमुख अहिंसानां फळ समजीने शाणा माणसोए अहिंसाव्रतनोज अत्यंत आदर क-रवो युक्त छे.

१७ सत्य व्रतनुं पालन कर.

िय अने हितकारी वचनने ज्ञानी पुरुषो सत्य कहे छे, अने सत्य छतां अप्रिय, कटुक अने अहितकारी वचन असत्यज कहुं छे. तथा वक्ताए वचन व्यवहारमां त्रिशेषे विवेक राखवानी जरुर छे.

आंधळो, छच्चो, छवाइ, चोर, दुष्ट, धीठ विगेरे वचनो रा-गद्देषादिक विकारथी उच्चरायेलां होवाथी ते प्रसंगे असत्य ठरे छे.

वेर, खेद, अविश्वासादि अनेक दोषो असत्य वोलवाथी उद्-भवे छे. तेमज आलोकमां वमुराजानी पेरे अपवाद अने परलोकमां अनर्थ परंपराने पामे छे.

असत्य वोलनारने पोताना वचनपर प्रतीति वेसाडवा अनेक कुतकों करवा पडे छे तेथी तेनु मन महा माठा ध्यानमांज मन्न रहेछे. सत्य बोलनारतुं मन निर्भय रहे छे, तेथी तेने खोटा संकल्प विकल्प करवा पडता नथी. सत्य वचनमां टेक राखनारने देवता पण सहाय करे छे.

सत्य वचन क्षीरसमुद्रना जळ जेवुं मीठुं छे तथी सत्यनुंज पान करनारने खारा समुद्रनां जळ जेवां असत्य वचनथी कदापि संतोष वळतोज नथी.

असत्य भाषणथी भोळा लोकोने अवळे रस्ते दोरनार जेवो कोइपण विश्वासवाती—महापापी नथी. तेथी सभासमक्ष भाषण कर-नारे पोतानी जवावदारी सारी रीते विचारी राखवानी जरूर छे. केमके तेना उपर लाखोगमे माणसोना भविष्यनो सवाल रहेलो छे.

सत्यना रागीए लक्षमां राखवुं जोइये के दुनियामां असत्य वोलवानां कारण मात्र क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यज होय छे, अने जेम बने तेम काळजीथी तेवां कारणोंने दूर करीने सत्यज वचन वदवुं एवा सत्यवादीनो सुयश कालिकाचार्यनी पेरे चिर स्थायी रहे छे.

सत्यनी खातर पोताना त्रिय प्राणने पण गणे निह तेज सत्य धर्मनो अधिकारी छे. एम समजीनेज युधिष्टिर प्रमुखे प्राणांत सुधी ते व्रतनुं पालन कर्युं छे. जे माणस विवेकथी विचारीने पसंगीपात, हित, मित, भाष-णथी सर्वने प्रिय लागे एवं सत्य वचन बोले छे. तेतुं वचन सर्व मान्य थवाथी अंते ते अभीष्सित कार्य मुखे साधी शके छे.

तोतडी जीभ, मूंगापणुं, मुखपाकादि रोग, मूर्खता, दुःस्वर अने अनादेयवचनादिक सर्व असत्यनांज फळ समजीने तेनाथी सुबुद्धिजनोए दूर रहेबुं. तेमज बीजा पण योग्य जीवोने दूर रहेवा मेरणा करवी.

चोखी जीभ, सुस्पष्ट भाषित्व, निर्दोषता, पांडित्य, सुस्वर, अने आदेयवचनादिक सर्व सत्यनांज फळ समजीने शाणा माणसोए सदा सत्यनोज पक्ष करीने सत्यवतनुं पाठन करवा उजमाळ रहेवुं.

१८ अदत्तनो त्याग कर.

साक्षात् अन्यायथी दावपेच करीने पराइ वस्तु छीनवी छेवी, तेम करवा वीजाने उक्करणी करवी, तेने सहाय आपंवी, जाणी जोइने चोराइ वस्तु छेवी, थापण ओळववी, अने विश्वासघात क-रवो ए वधा चोरीना पेटामां आवी जाय छे. एम समजीने दक्ष. नीतिवंत अने दयाछ श्रावके तेनाथी बीलकुल दूरज रहेवुं.

दस प्राण उपरांत पैसाने लोको अगीयारमो प्राण छेखे छे ती

एवा प्राणिय द्रव्यतुं अपहरण करनार माणस पराया प्राणना हरण करनार करतां पण अधिक पातकी ठरे छे, अने तथी ते आलोकमां प्रत्यक्ष वध बंधनादिक पामीने परभवमां नरकनो अधिकारी थायछे.

मुमुक्ष साधुने तो एथी पण अधिक वारीकीथी अदत्तनो त्याग करवानो छे. तेने तो मनथी पण अदत्त लेवानो सख्त निषेध -कहेलो छे.

आहार, पाणी, औषध, भेपज, वस्न, पात्र, अने रहेटाण वि-गेरे तेना धणीनी रजा शिवाय लड्ड वापरवाथी स्त्रामी अदत्त लागे छे.

घर धणीये आप्या छतां जो ते ते चस्तु सचेत (सजीव) अथवा अचेत (निर्जीव) निह थयेली एवी मिश्र छती लइ वापर-वामां आवे तो ते लेनार अने वापरनार साधुने जीव अदत्त लागे छे.

द्रव्य, क्षेत्र, काळ, अने भावने प्रधान करीने प्रवर्तती एवी अञ्जानो प्रमाण करवाने वदले स्वच्छंद्पणे व्यवहार चलाववाथी आप खूद वर्तनथी तीर्थेकर अदत्त लागे छे.

तेमज गीतार्थ गुरु महाराजनी तेवीज हितकारी आज्ञाने अवगणी आप मते चालनार साधुने गुरु अदत्त लागे छे.

अदत्ततुं स्वस्प सम्यग् विचारीने जे भवभीरु जनो तेनाथी अलगा रहेशे ते स्वर्गादिकनी संपदाने साक्षात् पामी अंते अविचळ स्वता अधिकारी थाशे.

१९ ब्रह्मचर्यनुं सेवन कर.

देवता, मनुष्य अने तिर्यच संबंधी विषय भोगोथी विरमीने सहज संतोपधारी, धर्मध्यानमां निमग्न रहेवुं तेनुं नाम ब्रह्मचर्य छे.

मनथी पण उक्त विषयोंने नहि इच्छवारूप महात्रत मुमुक्ष पुरु-षोने होय छे, अने यथासंभव सामान्यपणे तो ते व्रत गृहस्थ श्राव-कोने पण होय छे. मुनियोमां स्थूलभद्रादिकनां अने गृहस्थोमां विजय होठ अने विजया होठाणी तथा सुदर्शन होठ विगे-रेनां तेमज अनेक सता अने सतीओनां दृष्टान्तो जग जाहेर छे.

अनादिनी विषय वासना भाग्ययोगे सर्वथा अथवा अंशथी उपज्ञान्त थये छते उक्त महावत सर्वथी के देशथी उदय आवे छे. उक्त महावतना हट अभ्यास पूर्वक भावनाथी तेनी सिद्धि थतां ते महाशयने सहज संतोष जन्य अनंत सुख न्यापी जाय छे अने एवा स्वाभाविक सुखमां निमग्न थयेला योगी पुरुषने कदाच अप्सरा चलायमान करवा यत्न करे तो ते तद्दन निष्फळ जाय छे. एवा स्वाभाविक आत्म सुखनीज कामनाथी जे महाशयो उक्त महाव्रतने सेवे छे ते सकळ सुरासुरने मान्य थइने अक्षयसुखना अधिकारी थाय छे.

उक्त महाव्रतनी रक्षा माटे प्रथम नव ब्रह्म-वाडो पाळवानी जरुर रहे छे. माटे ते वाडोतुं स्वरुप समजी दरेक ग्रुमुक्षुए तेनो खप करवो युक्त छे.

- ? वसति-स्नी, पश्च, पंडक विगेरे रहे त्यां ब्रह्मचारीने रहेवुं कल्पे नहि.
- २ कथा-कामकथा करवी घटे नहि.
- ३ निषद्या स्त्री विगेरेनुं आसन शयन विगेरे वापरवुं नहि.
- ४ इंद्रिय-स्त्री आदिकनां अंगोपांग रागबुद्धिथी नीरखवां नहि.
- ५ कुडयंतर-भींत अथवा पडदा पासे स्त्री आदिकनो वृास तजवो.
- ६ पूर्वक्रीडा-पूर्वे अव्रतीपणे करेली काम क्रीडा संभारवी नहि. ७ प्रणीत भोजन-रसकसवाळा घेवर प्रमुखनुं स्निग्ध भोजन करनुं नहि.

- ८ अतिमात्राहार-प्रमाणथी वधारे लूखुं भोजन पण करवुं नहि.
- ९ विभूषा-स्नान, वस्नार्छकारथी के तैलादिकना मर्दनथी ब्रह्म चारीने स्वशरीरनी शोभा करवी कराववी नहि.

ए प्रमाणे अखंड ब्रह्मचर्यने पाळीने पुर्वे अनेक शुद्धाशयो जेम अक्षय सुखने पाम्या छे तेम वर्तमान अने अनागत काळमां पण पवित्र पुरुषार्थ फोरवनारा अनेक महाशयो ए निर्मळव्रतने निरित-चारपणे पाळीने आत्मोन्नित करी अन्यने हृष्टांतरुप थइने अंते अक्षय संपदाने वरशे.

२० परित्रह-मूर्च्छानो परिहार कर.

सचेत, अचेत, के मिश्र एवी अल्प मूल्य के वहु मूल्यवाळी वस्तुं उपर मूच्छी थवी तेने ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे. ते परिग्रह वे प्रकारनो छे.

धन, धान्य, रुपुं, सोतुं, द्विपद, चतुष्पद विगेरे वाह्य परिग्रह छे. तथा वेदोदय ३, हास्यादि ६, मिथ्यात्व अने कषाय ४ मळीने १४ भकारनो अभ्यंतर परिग्रह कह्यो छे.

ए वन्ने पकारनो परिग्रह सर्वथा परिहरे ते निर्गथम्नि कहेवाय छे अंतरनो परिग्रह तज्या विना बाह्य परिग्रहना त्याग मात्रथी कंइ कल्याण नथी. शुं कांचळी मात्र तजवाथी सपे निर्विष थइ शके छे ?

वंने प्रकारना परिग्रहने तृणवत् तजीने जे संसारथी न्यारा स्-हीने संयमने साधे छे तेनां चरणकमळने त्रणे जगत पूजे छे.

परिग्रह एक एवा प्रकारनो ग्रह छे के जेना योगे आखी जगत् पीडा पामे छे. परिग्रह ग्रहथी घेलो थयेलो साधु पण जेम आवे तेम लव्या करे छे.

जेम अत्यंत भारथी जाझ जळमां हूवी जाय छे तेम परिग्रह ग्रहथी ग्रस्त थयेलो जीव पण आ भयंकर भवसायरमां हूवे छे.

जेम जेग जीवने दैववजात लाभ गळतो जाय छे तेम तेम तेने लोभ वधतो जाय छे, अने ते एटलो वधो के तेनी कंइपण हद रहेती नथी, जेथी ते अनेक प्रकारना पापारंभ करीने पण पैसा पेदा करवा प्रयत्न कर्या करे छे तेथी जिन ज्ञासनानुयायी दरेक आत्मार्थी जी-वने उचित छे के तेणे 'पाणी पहेलांज पाळ' नी पेरे प्रथमथीज परिग्रहनुं प्रयाण करीने रहेवुं. अने नियमित धनधान्य-नीतिथीज प्रदा, करवा खास लक्ष राख्वुं, भाग्यवज्ञात विशेष द्रव्यनी प्राप्ति थइ तो सद्गुरुनी सलाह मुजव पुण्यक्षेत्रमां तेनो विवेकथी व्यय ,करीने कु- तार्थ थावुं ए प्रमाणे जे शुभाशय मूच्छीने मारे छे ते उभयलोकमां अवश्य सुखी थाय छे.

'इच्छा तो आकाशनी जेवी अनती छे एम निश्रयथी समजीने अनहद एवा छोभनो निग्रह करवा परिग्रहनुं प्रमाण तो अवश्य करनुं. अन्यथा मम्मणशेठ विगेरेनी पेरे निर्मर्याद छोभतृष्णाथी माठा हाल थशे.

परिग्रहर्तुं प्रमाण करीने यथापाप्तमां संतोष द्यति धारवाथी उभय लोकमां केवुं सुख मळे छे, तेने माटे आनंद कामदेवादिक अनेक श्रावकोनां अने पुणीया श्रावक विगेरेनां दृष्टान्त जग प्रसिद्ध छे.

धमनां साधनभूत वस्त, पात्र अने पुस्तकादिक उपगरणो परिग्रहरूप नथी पण जो मूर्च्छी राखीने तेमनो सदुपयोग करवामां न
आवे तो ते सर्व परिग्रहरूप थइ पडे छे. केमके मूर्छी एज परिग्रह
छे एम ज्ञातपुत्र श्री महावीर स्वामीए कहेछुं छे माटे मूर्छी तजीने
जम तप जप संयमवडे देहने सार्थक करवामां आवे छे, तेम धर्मोपगरणने पण ते ते धर्म कार्यमां मूर्छी रहित उदार दीलथी उपयोग
पूर्वक वापरी सार्थक करवा ए वीरपुत्रोनी फरज छे.

२१ वैराग्य भाव धारण कर.

संपदो जल तरंग विलोला, यौवनं त्रि चतुराणि दिनानि। शारदाभ्रमिव चंचल मायुः, किं धनैः कुरुत धर्ममनिन्दं।१।

लक्ष्मी जळतरंगनी जेवी चपळ छे, यौवन अल्प स्थायी होवा-थी अस्थिर छे, अने आयुष्य शरदनां वादळां जेवुं चंचळ छे. साटे हे भव्यो ! तमे क्षणिक धननो लोभ तजीने सर्वोत्तम एवा वीतराग भाषित धर्मतुंज सेवन करो.

रागीना उपर रहेनारी या स्तार्थ पूरता कृत्रिम रागने धरनारी एवी नारीने कोण सहदय पुरुष वांछे ? तेतो विरागी उपर पूर्ण प्रे-मने धरनारी एवी मुक्तिकन्यानेज वांछे छे.

दुनियामां सर्व कोइ स्वजनवर्गादिक स्वार्थनिष्ठज छे. एम मुस्पष्ट समज्या छतां कोण सहृदय पुरुप तेमां निष्कारण मग्न थइ रहे? ज्यारे मोह मायानो पडदो दूर खसे छे त्यारे अखंड साम्राज्य मुखने साक्षात् सेवनारा चक्रवर्ती सरखा सिंह पुरुषो पण पूर्ण वै-राग्यथी आ पौदंगिलक मुखनो त्याग करीने सहज आनंदने साक्षा-त् अनुभववाने श्री वीतराग देशित चारित्र धर्मनो स्वीकार करीने तेने सिंहनी पेरे पाळवा महत्त थाय छे. दुःखगर्भित, मोहगर्भित अने ज्ञानगर्भित एम वैराग्य त्रण प्र-कारनो छे. ए त्रणे प्रकारमां ज्ञानगर्भित वैराग्यज ज्ञिरोमणि छे.

जेम इंस क्षीर नीरने स्वचंचुथी जूदां पाडी क्षीरमात्रतुं ग्रहण करी छे छे. तेम ज्ञानगभित वैराग्यवंत-विवेकात्मा शुद्ध चारित्रना चळथी अनादि कर्ममळने दूर करी शुद्ध आत्मच्व (सहजानंद सुख). ने साक्षात पाये छे.

रागद्देषादिक दुष्ट दोषोने दूर करवाथीज शुद्ध वैराग्य मगटे छे, अने उक्त वैराग्यना दृढ अभ्यासथी रागद्देषादिक विकारो समूळगा नाशे छे, त्यारेज आत्मानी सहज वीतराग (परमात्म) दशा सा-क्षात् प्राप्त थाय छे.

आवा वीतराग परमात्मानां वचन सर्वथा प्रमाण करवा योग्य-ज होय छे. आ दुःखमय असार संसार मध्ये श्री वीतराग देशित धर्मेनु सेवन करी छेवुं, एज सारभूत छे, छतां पण प्रमादवशवर्ती जनो सत्य—सर्वज्ञ देशित धर्मेनुं यथार्थ सेवन करी शकताज नथी, जेथीं, पूर्व पुण्योदये प्राप्त थयेछी आ अमूल्य तकने गमावी ते वापदाश्रोंने पाछळथी वहु शोचवुं पडे छे.

समतासागर सत्युरुषोना सदुपदेशतुं विधिवत् अवष्ठ मनन कर् रवाथी भव्य जीवोने पूर्वोक्त उत्तम वैराग्यनो अपूर्व हाभ मुळे छे. विरक्त भावे रहेतां विशाळ राज्यादिक भोगो पण वाधकभूत यह शकता नथी. पण अन्यथा तो गाढमोहथी आत्मा मछीन थया विना रहेतोज नथी. विरक्त पुरुष छती वस्तुए अनासक्त रहे छे, अने मूढात्मा तो तेमां सदाकाळ आसक्तज रहे छे. शुद्ध वैराग्यनीज खरी विष्ठहारी छे, खरा वैराग्यथी चक्रवर्तीने स्वराज्य तज्ज छुं लगारे मुक्केळ नथी. पण मोहग्रस्त भीखारीने तो एक रामपात्र (शकोरुं) तज्ज पण भारे कठण थइ पडे छे. शुद्ध वैराग्यर्वत निष्कलंक चारि-त्रने पाळी सर्व दु:खने शमानी अंते अक्षय सुखने वरे छे.

२२ गुणीजनोनो संग कर.

निर्गुणी एवा खल या दुर्जनोनो संग त्यजीने हे भन्य तुं तार्हें स्वृह्लि साधवाने सद्गुणी-सज्जनोनो सदा समागम कर.

खद्युणीनी सोवतथी निर्गुण पण गुणवंत थाय छे अने नीच प्वा निर्गुणीनी सोवतथी सद्गुणी पण निर्गुणी यइ जाय छे. जुओ! मलयागिरिना संगथी सामान्य हक्षो पण चंदनताने अने मेरुगिरिना संगथी तृण पण गुवर्णताने भजे छे. तेमज लीमहाना संगथी आंवा अने कोळाना संगथी कणकनो वाक विनाश पामे छे.

साधु पुरुषो सदुपदेशवडे सामाना अज्ञान अधकारनो नाम

करी तेने सत्य वस्तुनुं भान करावे छे, जेथी तेनो मोह भ्रम दूर ं

गुणीजनो निर्गुणीजनोने पण सद्गुणी करवा इच्छे छे, गुणी-मांथी गुण ग्रहण करे छे, सद्भूत गुणतुं गान करे छे अने पोताना गुणोनो पण गर्व करता नथी. एवा सद्गुणीनो संग महा भाग्य योगेज थाय.

गुणीजनो मनथी वचनथी अने कायथी निःस्पृहपणे परोपकार करे छे.

सद्गुणीना संगयी सामानां पापनो लोप थाय छे, धर्माचरण करवामां निर्मेळ मंति विस्तरे छे, वैराग्य मगटे छे, स्नेहराग विघटे छे, सर्व इंद्रियो उपर काबु मळे छे, शोक क्लेश अने भयादिक दु:- खनो जय थइ शके छे अने संसारनो पार थाय छे. एम समजीने ख चिरत्रने निर्मेळ करनार एवा सत्पुरुषोनी सोवत तुं निरंतर कर. पात्रापात्रनी योग्य कदर गुणी पुरुषज करी शके छे पण निर्गुणी करी शकतो नथी. तथी जो सामामां पात्रता हशे तो ते तेने स्व समान करवा पण भूलशे निह. परंतु जो पात्रतानी खामी जणाशे तो पहेलुं लक्ष सामाने पात्रता माप्त कराववा दोरशे, अने ते योग्यज छे. केमके सुपात्रमांज करेलो अम सार्थक थाय छे कहुं पण छे के भ पात्रापात्रनो विवेक शिखवाने गाय अने सपेनो मुकावलो करवो.

गायने तृण-भक्षणथी दूध थाय छे अने सापने दूध पावाथी पण झेरज थाय छे. " खुबुद्धिजनोए तो सर्वथा प्रथम पात्रताज प्रगट करवा लक्ष दोरवानुं छे.

२३ श्री वीतरागने ओळखी वीतरागनुं सेवन कर-

जेने संहेशकारी राग, शान्ति भंजक द्वेष अने सम्यग् ज्ञाना-च्छादक तथा विपरीत चेष्टाकारी मोह सर्वथा नष्ट थया छे, अने त्रिस्चनमां जेनो महिमा गवायो छे तेज खरा महादेव छे. जे वीत-राग, सर्वज्ञ, अक्षय सुखना स्वामी, क्षिप्ट एवां कर्मथी सुक्त अने सर्वथा देहातीत—जन्म मरणथी रहित थया छे. जे सर्व देवोना पू-ज्य छे, सर्व योगीयोना ध्येय छे अने सर्व नीतिना कर्ता छे तेज खरा महादेव छे. ए प्रमाणे श्रेष्ट चरित्रवाळा जेमणे सर्व दोष रहित मोक्ष मार्ग प्रकाशक शास्त्र प्ररूपां छे तेज परम देव परमा-रमा छे.

सदा सावधानपणे तेमनी आज्ञानों अभ्यास करवो एज तेमनी आराधनानो खरों उपाय छे. अने ते पण शक्तिना ममाणमां कर-वाथी अवश्य फळदायी निवडे छे. छती शक्ति गोपवीने माप्त साम-ग्रीनो जोइए तेवो सर्वज्ञ आज्ञाने अनुसार सदुपयोग निह करनार ममादशील जनोने श्री वीतराग सेवानो यथार्थ लाभ मली शकतो

नथी. जेम परोपकारशील एवा कुशल वैद्यनां निःस्वार्थ वचनातु-सारे वर्तन करनार व्याधिग्रस्त जनोना व्याधिनो अंत आवे छे, तेम परमात्म प्रभुनां एकांत हितकारी वचनने परमार्थथी अनुसरनार भव्य जीवोनां भवदुःखनो जरुर अंत अवे छे.

एवी रीते परमशांत, कृतकृत्य, अने सवज्ञ-सर्वदर्शी? एवा वीतराग परमात्माने सम्यग् भक्ति-भावथी सदा नमस्कार थाओ!

मोह माया तजीने जे प्रसन्निचत्र्यी परमात्म प्रभुनी पूजा सेवा करे छे ते सर्व अघन टाळी अंते अनघ एवा अक्षयपद्ने वरे छे. जे उपर ग्रुजव परमात्मानुं स्वरुप सद्बुद्धिथी विचारीने विवेक पूर्वक तेमनी पवित्र आज्ञाने यथाशाक्ति आराधवारुपी उपासना निष्कपट-पणे करे छे ते अनुक्रमे हृढ अभ्यासना योगथी सर्व दुःखनो अंत करीने पोतेज परमात्मपदने वरे छे.

२४ पात्रापात्रने समजी सुपात्रने दान दे.

जे संसारथी उदासीन थइ सर्वज्ञ वीतराग वचना मुसारे सर्व आरंभ परिग्रहनो त्याग करी पांच महाव्रतोने धारण वरीने स्व क-तिन्य सावधानपणे साधवा उजमाळ रहे छे ते जैनज्ञासनमां सुपात्र कहेवाय छे तेथी विरुद्ध वर्तन करनार प्रमादी, स्वच्छंदी या दंभी डोळघाळुनी कुपात्रमां गणना थाय छे. कल्याणार्थीए कुपात्रनी उपे-क्षा करीने प्रतिदिन सुपात्रनीज पोषणा करवी युक्त छे.

सुपात्रमां पण न्यायोपार्जित द्रव्यवडे विवेक पूर्वक क्षेत्र काला-दि विचारीने करेलो व्यय अत्यंत हितकारी थाय छे.

सुपात्रने कुपात्र बुद्धिथी के कुपात्रने सुपात्र बुद्धिथी दीधेछुं दान दूषित छे.

पात्रापात्रनी योग्य परीक्षा पूर्वक सुपात्रने स्वल्प पण आपेछं विवेकवाळं दान अमूल्य थइ पडे छे, विवेक विना ते। ते विशेष पण फलीभूत थतुं नथी.

स्वाभाविक प्रेम, उल्लास, उदारता, अने अकुंठित भावना वि-गेरे विवेक युक्त दाननां भूषण छे, तेथी दाताने अत्यंत लाभ थायछे.

स्वाति नक्षत्रनुं जळ जेम जूदां जूदां फळ आपे छे, तेम गमे तेनुं सारुं द्रव्य पण पात्रताना ममाणमांज फळीभत थाय छे. माटेज पात्रापात्र संबंधी विचार प्रथम कर्तव्य छे. सुपात्र दानथी शाळीभ-द्रनी पेरे विशाळ भोग पामी पछी स्वर्ग या मोक्षनां सुखं प्राप्त थाय छे. अरे तेनी अनुमोदना मात्रथी मृगला जेवां मुग्ध पाणी पण सा-क्षात दातारनी पेरे स्वर्ग गित पामे छे. तो पछी परम प्रेम पूर्वक पवित्र चारित्रपात्र साधुजनोने जे सदा उद्धितत भावे दान दे छे, अने अन्य देनारनी अनुमोदना करे छे तेमनुं तो कहेबुंज शुं ? तेतो तेमना पिवत्र आश्रयथी अक्षय सुखनाज अधिकारी थाय छे. तेथी शासकारे योग्यज कहुं छे के हे भव्यो ! तमे अनेक गुणनिधान स्वर्ग मोक्षदायक सकल सुखकारक, पाप ओघ निवारक, स्वपर हितदायी, अने सर्व संतोषकारी एवं अक्षय सुखहेतुक दान निर्प्रथ सुनियोने सदा आपो.

२५ जरुर जणाय त्यांज जिनालय जयणाथी कराववुं.

कोइक भाग्यशाळी भन्यतुंज द्रव्य जयणाथी जिनालयमां वपराय छे.

नवुं जिनालय करवा करतां जूनुं समराववामां सामान्य रीते आठ गुणुं फळ शास्त्रकारो कहे छे. शुद्ध समजयी तो ते करतां अ-नंतगणुं फळ मळे छे.

न्यायोपार्जित द्रव्यवाळो, उदार आशय, मोटी लागवगवाळो, शास्त्र नीति प्रमाणे चालनारो, भवभीरु श्रावकज जिनालय कराव-वानो अधिकारी छे. केमके तेज तेने जयणा पूर्वक निर्विधे करावी साचवी शके छे. जिनालय करावतां कोइपण जीवने लगारे किलामना उपजा-ववी नहि. तेमां उत्तमोत्तम वस्तुओ वापरवी, अने कारीगरोना का-मनी विशेषे कदर करवी. नीच जातिना लोकोने या मद्यमांस भोजीने तेमां कामे लगाडवा नहि. दयाना काममां पूरती का-ळजी राखवी.

चैत्य पूर्ण थये छते तेमां विलंब रहित विधिवत् जिनविंबनी स्थापना करवी. विंब मितष्ठादिक सत् क्रिया यथायोग्य सुविहित साधु पासे कराववी. सूरिमंत्रादिकथी मितष्ठित मसु मितमामां अपूर्व चैतन्य मग्टे छे, जेथी भच्य जीवोने दर्शन करतां शाक्षात् समवसरणतुं भान थाय छे, अने मसु महिमाथी पूजा भक्तिमां भाविक जीवो तिल्लीन थइ जाय छे.

मश्च प्रतिमा शास्त्रोक्त नीति मुजन प्रमाणमां नानी या मोटी कराववामां आवे छे. जेने देखतांज भव्य जीवोने मर्श्वनी पूर्व अव-स्थातुं यथार्थ भान यइ आवे छे, जेथी तेओ छद्मस्थ, केवळी, अन र्वाण अवस्थाने जूदी जूदी रीते भावी शके छे.

स्नानाचिनवडे छद्मस्थ अवस्था मातिहार्यवडे केवळी अवस्था, अने पर्यकासने काउस्सग्गमुद्राथी पश्चनी निर्वाण अवस्था भावी शकाय छे. जिनविंव युक्त जिनां ह्य ज्यां सुधी स्थिर रहे त्यां सुधी अनेक भव्य जीवो उक्त भावना वडे महान् लाभ उपार्जन करी अनेक भव-संचित कर्मनो क्षय करीने नागकेतुनी पेरे अविचल पदवी वरे छे.

आयी केवळ जश की तिं माटे जरुर विना नवां जिनालय क-रवा करतां जीर्ण जिनालय समराववानी केटली वधी जरुर छे ते स्पष्ट समजी, अल्प द्रव्यथी, अल्प श्रमथी अने अल्प वखतथी अचित्य लाभ लेवाने अने एम करीने अक्षय नामना मेळववाने आत्मार्थी जनोए ग्रुलवुं जोइतुं नथी. ज्यां मुधी पूर्व पुण्योदये लक्ष्मी साध्य छे, त्यां मुधीज तेवुं महत्त्वनुं काम स्वतंत्र पण वनी शके तेम छे. एम जाणी विचारमांज वखत निंह गाळतां आवां परमार्थ कार्यमांज तेने सफळ करवो योग्य छे. जीर्णोद्धार करावनार महाशय पोताना आत्मानोज उद्धार करे छे एटछंज निंह पण अनेक भव्यात्माओनो पण उद्धार करे छे. ते वात उपरली हिककत समभावे विचारतां स्पष्ट मालम पडशे.

पूर्वे पण कोफी भूपति, अमात्य अने श्रेष्टीकोनोए आवा जी-णींद्धार करीने स्वपर उद्धार कथीना दाखला शास्त्रमां मोजुद छे.

२६ निर्मळ भावनाओ भाव.

निर्मळ मनथी दान, शीळ, के तप विगेरे धर्मकरणी यथाशक्ति करतां अथवा निह करी शकाय तेने माटे शोच पूर्वक अभ्यास कर-तां या तो कोइ महाशयने विधिवत् धर्मकरणी करतां देखीने मनमां जे शुभभाव पेदा थाय ते विगेरे भावना कहेवाय छे. उक्त भावना बहेज करेली करणी सफळ थाय छे, अभिनव भाव पेदा थाय छे अने अंते भव श्रमणनो अंत आवे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा, अने माध्यस्थ्यरुप भावना चतुष्ट्य दरेक कल्याणार्थी जनोए प्रत्यहं भाववा—आदरवा योग्य छे, तेथी उक्त चारे भावनाओं हुं स्वरुप कंइक संक्षेपथी पण जाणवानी जरुर छे.

१ मैत्री—सर्व कोइ मारा मित्र छे, कोइ मारा शत्रु छेज नहि.
सर्व कोइ सुखी थाओ ! कोइ दुःखी नज थाओ ! सर्व कोइ सुखना
मार्गे चालो ! कोइपण दुःखना मार्गे निह चालो ! सर्व कोइ सत्य
सर्वज्ञ भाषित धर्मनुंज ज्ञरण ग्रहो ! कोइपण अधर्म या कुधर्मना पासमां निह पडो ! एवी पवित्र बुद्धि सर्व प्रति राखवी ते मैत्री०

र मुदिता—या प्रमोद—मेघमाळांने देखी जेम मोर केकारव करे छे, अने चंद्रने देखी जेम चकोर खुशी थाय छे तेम ग्रुण महो- दयने देखीने भव्य जीवो अंतरमां आल्हाद पामी उल्लिस थाय ते मुदिता०

३ करुणा—कोइ दीन दुःखीने देखी स्वशक्ति अद्धुसारे सहायः अपि तेनुं देखीतुं दुःख दूर करवा, अने धर्महीन जीवोने यथायोग्य हितोपदेश दइ धर्म सन्मुख करवा उचित सहाय आपी धर्मना अ- धिकारी वनाववा प्रयत्न करवो ते करुणाभावना कहेवाय छे.

४ मध्यस्थ—देव गुरु धर्मना निंदक, नास्तिक, निर्दय निष्य-तिकार्य (जेने कोइ रीते हितोपदेश लागे निह एवा अनार्य) जीवो उपर पण देष निह करतां कर्मनी विचित्रता मात्र विचारी तटस्थ रही स्वकर्तव्य करबुं पण नाहक रागद्वेषथी कर्मबंध थाय तेम निह करबुं तेन्नुं नाम मध्यस्थ भावना छे.

अथवा भव वैराग्यने करनारी अनित्य, अशरण, संसार, एक-त्व, अन्यत्व आदि द्वादश भावनाओं भव्य जीवोए निरंतर भाववा योग्य छे. उक्त भावनाओंना वळ थकी भरत महाराजा मरुदेवादिक अनेक भावित आत्याओं परमपदना अधिकारी थया छे. तथा दरेक मोक्षार्थी जनोए उक्त भावनाओंनों प्रतिदिन परमार्थथी अभ्यास करवो योग्य छे.

पूर्वोक्त भावना विना करवामां आवती धर्मकरणी पण अलूणा

धान्यनी पेरे लूखीज लागे छे अने भावना युक्त ते अमृत समान स्वादिष्ट लागे छे. एथीज कहुं छे के तद्हेतु अने अमृत क्रिया शीघ्र मोक्ष मुख अर्पे छे.

२७, रात्रि भोजननो त्याग कर-

सूर्य अस्त थया पछी अन्नादि भोजन मांस समान अने जळ पानादि रुधीर समान कहुं छे तेथी ज्ञानी पुरुषोने ते वर्ज्यज छे.

दिवसमां पण भोजन करतां अनेक सूक्ष्म जीवो उडतां भोज-नमां आवी पढे छे तो पछी रात्री वखते तो तेवा असंख्य जीवो भोजनमां आवी पढे एमां तो कहेवुंज थुं? आथीज रात्रि भोजन वर्ज्य छे. दिवसमां पण रसोइ करतां उपयोग निह राखवाथी या भोजन करती वखते गफलत करवाथी कोइ झेरी जीव के तेनी झेरी लाळ मांहे पडया होय तो तेथी भोजन करनारना जीवतुं पण जो-खम थाय छे.

जो दिवसमां पण बेदरकारीथी आटलो भय रहे छे तो रात्रिमां एवा अवनवा वनावो स्वभाविकज बनवा पूरतो भय राखवो जोइये. जो भोजनादिक करतां भोजनमां जू आंवी जाय तो जलोदर रोग पेदा थाय, जो करोळीयो वगेरे आवे तो लृता (कोढ) आदिक रोग पेदा थाय, जो की ही या घने हा विगेरे क्षुद्र जीवो आवे तो वुद्धि नष्ट थाय, मांखी आवे तो वमन थाय, वाळ आवे तो कंट (स्वर) भंग थाय, अने झेरी जीवोनां विष गरळादिक आवे तो पोताना प्राण पण जाय. एम समजीने स्वदेहनी रक्षा माटे पण रात्रि मोजननो सर्वथा त्याग करवो उचित छे. परमार्थ बुद्धिथी तेनो त्याग करवाथी तो असंख्य जीवोने अभयदान देवाना अनंत पुन्यना भागी थइने उभयलोकमां उत्कृष्ट सुख पामी शकाय छे. आधी रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवा शास्त्रकारोए भार दइने कहां छे.

शास्त्र संबंधी पवित्र आज्ञानो भंग करीनेज मूहमितजनो रात्रि-भोजन कर्या करे छे, तेओ पुष्य सामग्रीने निष्फळ करीने, करेलां विलष्ट कर्मना योगथी भवान्तरमां घूड, नोळीया, साप, मार्जार, अने गरोळी जेवा नीच अवतार पामी नरकादिकनी महाच्यथाने पामे छे. रात्रि भोजनने शास्त्र नीतिथी तजनार भाइ ब्हेनोए सूर्य अस्त पहेलां वे घडीथी मांडीने सूर्योदय पछी वे घडी सुधी भोजन-नो त्याग करवो जोइये, अने एम करवाथी एक मासमां १५ उप-वासनो लाभ सहज मळी शके छे. तेमज जो 'गंठसिहयं' प्रमुख पचल्खाण पूर्वक पतिदिन एकाशन अथवा द्यशन करवामां आवे तो एक मासमां २९ या २८ उपवासनो अवस्य लाभ मळे छे.

२८ मोह मायाने तजीने विवेक आदर.

'हुं अने मारुं' ए मोहना मंत्रथी जगत् मात्र आंधछं थइ गयुं छे. परंतु 'निह हुं अने निह सारुं' ए प्रतिमंत्र मोहनो पण पराजय करवाने समर्थ छे.

शुद्ध आत्म द्रव्य एन हुं छुं अने शुद्ध ज्ञानादि गुण एन मारुं धन छे. ते शिवाय हुं अने मारुं कंइ नथी, एवी शुद्ध समन मोहनुं निकंदन करवाने समर्थ छे. तेथी दरेक ग्रुमुश्चए एन आद-रवा योग्य छे.

नाना प्रकारना राग द्वेषवाळा विकल्पो वहे जेणे मोह मिद्रातुं पान कर्यु छे ते पोतानुं भान भूळीने अनेक प्रकारनी विपरीत चे-ष्टाओने वश थइ चारे गितमां भमतोज फरे छे, अने विडंबना पात्र ज थाय छे. तेथी मोह मायामां निह फसातां तेनोज क्षय करवा यत्न करवो युक्त छे. मोह मायाने सर्वथा जीतनारा अप्रमत्त सुनि-योज जगतमां शिरसा वंद्य छे. सर्वथा मोह रिहत वीतराग मुनियोज परम शान्त छे.

वज्जवंधन करतां पण रागवंधन आकरं छे अने तेने माटे मवळ वैराग्यनी पूरती जरुर छे. वैराग्यवर्ड गमे तेवुं राग बंधन दूर यइ जाय छे. अज्ञान-अविवेक ए मोह वंधनतुं, अने ज्ञान-विवेक ए वैराग्यः दशा प्रगट करवातुं प्रवळ कारण छे.

पूर्वे जीवे जेवो शुभाशुभ अभ्यास कर्यो होय छे तैवोज तेने जन्मांतरमां उदय आवे छे, एम समजीने सदा शुभज अभ्यास सेववोः अने अशुभ अभ्यास त्यजी देवो युक्त छे.

जे लक्षपूर्विक सदा शुभ अभ्यासतुंज सेवन करे छे, तेने पूर्वि सोवित अशुभ कर्मोनो आपोआप अनुक्रमे अंत आवे छेज.

जेम निर्मोही-मोहरहित महा पुरुष वस्तु स्वरुपने जाणी जोड़ शक छे तेम मोहाधीन-मृहात्मा कदापि जाणी शकतो नथी. तेतोह वेभानताथी छता गुणमां दोषनो अने छता दोषमां गुणनो आरोप करी छे छे. आवो विश्वमकारी मोह दूर करवा मुमुख्नुओं सततः उद्यम करवो युक्त छे. मोहनो क्षय करवामांज तेमना चारित्रनीह सफळता रहेली छे, एम समजीने जेम रागादिक विकारोनो लोफ थाय तेम तेओ प्रमाद रहित प्रमार्थ पंथमां प्रवर्तवा प्रतिदिन प्रय-त्न शील रहे छे. अने अन्य आत्मार्थी जनोने पण उक्त सन्मार्गमां ज प्रवर्ताववा उपदिशे छे.

२९ खोटी ममतानो त्याग कर

नित्य मित्र समो देहः खजनाः पर्व सन्निभाः ॥ जुहार मित्र समो ज्ञेयो, धर्मः परम बंधवः—

जितशत्रु राजाने सुबुद्धि नामा प्रधान छे. बुद्धि निधान होवाथी ंते राजाने बहु वछभ छे, छतां क्वचित् देववशात् तेना **उपर** क्रपित थयाथी तेणे कोइक मित्रतुं ज्यां सुधीमां राजानो कोप शान्त थइ जाय त्यां सुधी शरण लेवातुं धार्यु. तेने नित्य मित्र, पर्व मित्र, अने जुहार मित्र नामना त्रण मित्र छे. यथम नित्य मित्र पासे गयो तो '' अति परिचयात् अवज्ञा " ए न्यायथी तेनी वात हसी काढ-चाथी ते पछी पर्व मित्र पासे गयो. तेणे कंइक प्रथम तो आश्वासन आप्युं पण सत्यवात निवेदंन करीने दाद मागतां तेणे पोतानं असा-मर्थ्य जणान्युं. छेवट प्रधान कंटाळीने जुहार मित्र पासे आन्यो तो तेणे पोताना उदार स्वभावने अवलंबी प्रधानने असाधारण आवकार आपीने भारे आश्वासन पूर्वक जणाव्युं के मित्र ! आज तमे कंइ भारे आपत्तिमां आवी पडया छो एम तमारी मुखमुद्रा उपरथी हुं समजी शकुं छुं. तेथी कहुछुं के तमे निर्श्वित थइने जे दुःखतुं कारण होय ते मने शीघ्र जणावो. आथी-प्रधानने घणी हिंमत आवी, अने -सत्य हकीकत निवेदन करवाथी तेणे कहुं के भाइ! छगारे कीकर

करशो निह, ज्यां सुधी मारा खोळीयामां त्राण छे त्यां सुधी तमारो वांको वाळ करवाने कोइ समर्थ नथी. तमे सुखेथी अहिं रहो. आवा आवकारवाळा आश्वासनथी अत्यंत खुशी थयेली प्रश्नान जूहार मित्र-नुंज शरण करीने रहाो. काळ जतां राजानो कोप पण उपशांत थयो, अने प्रधाननी भीति नष्ट थइ गइ. पण आवेंही विपत्तिमां तेने मित्र संवंधी यथार्थ अनुभव यइ आच्यो. आपणे पण आमांथी वहु सरस शिखामण छेवानी छे. यमराजाने जितशत्रु राजा समान समजवी. अने आत्माने मुबुद्धि मधान समान समजवो, तेमज देहने नित्य मित्र समान, स्वजन वर्गने पर्व मित्र समान अने परम उपगारी ध-मेने जुहार मित्र समान समजनो. ज्यारे यमराज कुपित थांय छे, अने कोइनो अवसान वखत आवे छे त्यारे ते गाभरो वनीने पोता-ना वचाव माटे वहु बहु फांफां मारे छे. परंतु ते सर्वे निष्फळ जाय छे. प्रतिदीन यत्रपूर्वक पाळी पोषीने पोढो करेलो देह तेने छगारे सहाय देतो नथी, तेमज वळी पसंगे पोषवामां आवता स्व-जनो पण तेने मुखयी मीढुं वोलवा उपरांत कंइपण विशेष सहाय करी शकता नथी. परंतु जुहार मित्रनी जेम अल्प परिचित छतां ऊदार आशयवाळो धर्मज केवळ परम उपकारी बैंघुनी पेरे परमः सहायभूत थाय छे. एम समजीने शाणा माणसोए दुष्ट देहा-दिकनो मोह तजीने एकांत हितकारी परम ग्रुणनियान सद्गतिदाता धर्मनोज आश्रय करवो युक्त छे. तेनी उपेक्षा करी देहादिक उपर

पमता राखवी केवळ अनुचितज छे. विवेकी हंसो तो, देह ममत्वने. तजीने निर्मळ धर्म रसायणनुंज पान करे छे.

३० संसार सायरनो पार पामवा प्रयत कर.

ं नकी, तिर्थेच, महुष्य अने देवता संबंधी ८४ छक्ष जीवायोनी-थी अति गहन अने महा भयंकर भवसायरने तरी पार पामबुं अति अवश्यनुं छे.

्र दुर्बुद्धि, मत्सर अने द्रोहरुपी तोफानथी संसारसायस्मां ख-च्छंद्पणे परिश्रमण करनार लोकोने भारे संकट सहन करबुं पडेले.

कषायरुपी पाताल कळशा, कामरुपी वडवाग्री, स्नेहरुपी ईवन्ह अने घोर रोगशोकादि रूप मच्छ कच्छपथी आकुळ एवा अज्ञानमय तळावाळा संसार समुद्रना मार्गी दुःखना डुंगराओथी आसपास रुघायेला छे. ए सर्व विषम संयोगोमांथी सहजमां पसार थइ जबुं वहुं दुर्लभ छे, तथी तेनी पार जवाने इच्छनारे अत्यंत काळजी राखवानी जरुर छे, संकट समये हिंमत हारी जनार प्रमादीजनो मचनो पार पानी शकता नथी. पण गमे तेवा विषम संयोगोने सममाव भेटी पुरुषार्थ योगे पोतानो मार्ग कापे छे तेज अंते भवनो अंत वरी शके छे.

खरा हिंमतवान पुरुषो आपचिने संपत्तिरूप देखीने मुखे उर्छ-घी जाय छे. पण पुरुषार्थ हीन जनो तो प्राप्त संपत्तिनो पण सदुप-योग करी शकता नथी. एटछुंज निह पण उलटो तेनो दुरुपयोग करीने दुःखी थाय छे.

जेम राधावेध साधनार माणसने राधावेध साधतां बारीक उप-योग राखवो पडे छे, तेम दरेक मुमुक्ष जनने पण अवस्य राख-वानो छे.

सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन (श्रद्धा) अने सम्यग् वर्तन-सदा-चरण (ए रत्नत्रय) आ संसारसायर तरीने पार पामवानो अक-सीर उपाय छे.

जन्ममरणजन्य अनंत दुःख जळथी आ संसार समुद्र मरेला छै. छतां तीर्थेकर जेवा निपुण निर्यामकनी सहायथी तेनो सुखे पार पामी शकाय छे.

दृढ संकल्पथी संसार सागरनो पार पामवानी पवित्र बुद्धिथी सर्वज्ञ वचनानुसारे सदुद्यम सेवनार सत्पुरुष जरुर संसारनो पार पामे छे. उत्तम प्रकारनी क्षमा, सरलता, नम्नता, निर्लोभता, उपरांत तप, संयम, सत्य, शौच, निर्ममता अने ब्रह्मचर्य रुप दशविध यति-धर्मनुं यथार्थ सेवन करनार शीघ्र मोक्ष सुख साधी शके छे. शुद्ध यति धर्मनी अनुमोदना पूर्वक यथायोग्य सहाय अपनार संविक्ष पक्षीय साधु या श्रावको पण निर्देभाचरणथी अनुक्रमे संसार सम्र-द्रनो अंत करी अक्षय सुखने साधी शके छे.

३१. धैर्यने धारण कर. (HAVE PATIENCE)

समतानां फळ मीठां छे. अने ते अनुभव गम्य छे. कंइपण सत् कार्य धीमेथी पण दृढताथी करनार अंते अवश्य फतेहमंद नीवडे छे, तेम अधीरजथी एकाएक करनार भाग्येज फतेह मेळवे छे. नियम वगरनी उतावळ उलटी नुकसानकारी निवडे छे.

दीर्घटिष्ट जनो कोइपण महत्त्वतुं कार्य अथम नाना पायाथी शरु करे छे अने अनुकूल सामग्री मळतां तेने उत्साह पूर्वक आगळ वधारे छे.

अदीर्घदृष्टि ज़नोने तो तेवो पूर्वापर विवेक नहि होवाथी अतु-क्ल सामग्रीना विरहे उत्साहभंगथी आरंभेछं गमें तेवुं महत्त्वतुं कार्य पण छोडी देवुं पढे छे.

व्यवहारिक कार्यनी पेरे कोइपण धार्मिक कार्यमां पण आत्मार्थी पुरुषे अभ्यास पूर्वक हिंमतथी आगळ वधवानी जरुर छे. धर्माथीं माणसे प्रथम पात्रता मेळववाने माटे मार्गानुसारी थर्जुं युक्त छे. अने अक्षुद्रतादिक उत्तम गुणोनो अखंड अभ्यास करीते क्षुद्रता, निर्दयता, शठता, अश्रमाणिकता, अनीति, अन्याय, असत्य, अहंकार, कृतन्नता अने स्वार्थ अंधता विगेरे अनार्य दोषोने प्रथम जरुर देशवटो देवो जोइये.

आ प्रमाणे अनुक्रमे अधिकार पामीने सत् समागमनी टेव पा-डीने तेमांथी वखतो वखत मध्यस्थपणे सत्यने समजी सत्य ग्रहणः करवुं जोइये. आ प्रमाणे वधती जती सत्य तत्त्वरुचिथी अने तत्त्व ज्ञानथी सम्यक्त्व अपरनाम समिकत या सम्यग् दर्शननीः प्राप्ति थाय छे. आनुं नामज तत्त्व श्रद्धाः, तत्त्व दर्शन या विवेक ख्याति कहेवाय छे.

तत्त्व श्रद्धारुपी विवेक दीपक घटमां प्रगट्या पछी अनुक्रमे.
तत्त्वाचरण-सन्मार्ग सेवन करवा माटे सतत प्रयत्न करवो जोइये,
अने तेवो दृढ अभ्यास करीने सद्गुरु समीपे समिकत मूळ उक्त
अहिंसा, सत्य, अस्तेयादिक व्रतो यथाशक्ति आदरवां जोइये. तेमां
पण प्रथम मांस, मदिरा, शीकार, परदारा गमन, वेश्याणमन, चोरी,
अने जूगारुप सप्त व्यसनोने तो उभयलोकः विरुद्ध जाणीने अवश्य
परीहरवां जोइये. तेमज मध, मांखण, भूमिकंद अने रात्रिभोजनः
विगेरे पण वर्जवां जोइए.

सुश्रावके अनुक्रमे सद्गुरु समीपे पांच अणुत्रत, त्रण गुणव्रत अने च्यार शिक्षात्रत मळीने द्वादश व्रत संबंधी दृढ नियम छेवो जोइये. आवा व्रतधारी श्रावकोए प्रश्चनी पवित्र आज्ञाने अनुसरी एवो तटस्थ अने न्याययुक्त—निष्पक्षपात व्यवहार चलाववो जोइए के ते प्रायः सर्व कोइने प्रिय थइ पडया विना रहेज निह, निषुण श्रा- वक न्यायनो एवो नमूनो होवो जोइये के कोइ पण सहृदय पुरुष तेनुं अनुमोदन या अनुकरण करवा चृके निह.

आवा सुश्रावको जरुर स्वपरनी उन्नति पूर्वक पवित्र जिनशा-सननी उन्नति पण करी शके छे, अने अनुक्रमे सत् चारित्रने सेवी अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके छे.

शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिक्य छक्षण सम्यकत्व पूर्वक द्वादश व्रतधारी श्रावको, धर्म आराधक थइने आनंद, काय-देवनी पेरे एकावतारी थइने अंते शास्त्रत सुखने पामी शके छे.

केटलाक भवभीरु महारायो संसारनी असारता विचारीने, पूर्वी-क्त ज्ञतोत्तुं यथार्थ पालन करी, मुनि योग्य महात्रत लेवा उजमाल श्राय छे.

यहात्रत लेवाना अर्थीजनोए त्रथम तेतुं स्वरूप यथार्थ पीछाणीने अथोडो वलत पण पहेलां तेनो अभ्यास पाडीनेज ते लेवां योग्य छे.

अनतुभवीपणे महावृत लेवाथी क्वचित् परीषह उपसमिदिकथी पडी जवातुं वते छे, तेम अनुभवी महात्रयथी महावृत लीघा वाद प्रायः पडी जवातुं वनतुं नथी. कि

मन, वचन, के कायाथी कोइपण जीवनी हिंसा राग के देव वडे जाते करवी नहि, वीजा पासे कराववी नहि अने करनारने सारा जाणवा नहिं ते प्रथम महाव्रत छे.

क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यथी कंइपण असत्य (अभिय-अहितकारी) वचन कदापि कहेर्चु, कहेवराववुं के अनुमोद्वुं नहि. ते वीजुं महात्रत कहेवाय छे.

कोइपण प्रकारे देवगुरु के स्वामीनी आज्ञा विरुद्ध कोइनी कंइपण वस्तु अन्न, पान, वस्न, पात्र, औषघ, भेषज के स्थानादि कदापि लेवी लेवराववी के अनुमोदवी निह. तेमज मन वचन अने कायाथी सचेत (सजीव) के मिश्र (जीविमश्र) एवी उपरली वस्तु कदापि कोइ आपे तोपण ग्रहण करवी निह ए त्रीजुं महात्रत छे.

देव मनुष्य तिर्येच संवंधी मैथुन मन वचन के कायावडे कदा-पि सेवबुं नहि. अन्यने सेववा प्रेरबुं नहि तेमज सेवनारने सारा जाणवा पण नहि ए चतुर्थ ब्रह्मचर्य नामे महाव्रत कहेवाय छे. धर्मोपकरणादिक केवळ धर्म निर्वाहने माटेज जरुर जेटलां राखी तेनो यथार्थ उपयोग करवा उपरांत कोइ पण वस्तु अल्प मल्यवाळी या वहु मूल्यवाळी होय तेना उपर मूर्छी करवी नहि. नि:स्पृहता राखवी, अने परस्पृहा तजी देवी ते परिग्रह त्याग नामे पांचम्रं महावत छे.

उक्त पंच महाव्रत उपरांत मुनिए रात्री भोजननो सर्वथा त्याग करवानो छे. जेथी षटरस पैकी कोइपण वस्तु—अन्न पानादिकनो सर्वथा निषेध सूर्यास्त पहेलां (बे घडीथी) सूर्योदय पछी (वे घडी) सुधी मुनिने माटे निश्चित होवाथी तेवो पण अभ्यास मथमथीज कर्तव्य छे. मुनिने उत्तम मकारनी क्षमा, मृदुता, रुजुता, अने संतोषादि दश्चविध यतिधर्म बहुज बारीकीथी निरंतर आराधवा योग्य छे.

समतादिक श्रेष्ट धर्मना सेवनथी मुनिजनो शीघ्र मोक्ष मुखने प्राप्त थाय छे. तेथी अंतरमां मोक्षार्थीजनोने एतुंज शरण योग्य छे.

३२ दुःखदायी शोकनो त्याग करः

इष्ट वस्तुना वियोगथी के अनिष्ट वस्तुना संयोगथी बहुधा मुग्ध अज्ञानी जनोने जे अंतरमां दुःखकारी मोह पेदा थाय छे अने रुदनादिक विविध चेष्टाओं करावे छे तेनुं नाम शोक कहेवाय छे. सम्यग् ज्ञानी-विवेकी आत्माने उक्त मोह-शोक एटलो सतावी शकतो नथी. कचित् क्षणमात्र अवकाश मेळवी ज्ञानीने पण शोक छळवाने जाय छे, परंतु अंते तो विवेक योगे तेनोज पराजय थायछे.

जे जे कारणो मुग्ध अज्ञानी जनोने मोह-शोकनी द्रद्धीनां छे ते ते ज्ञानी-विवेकीने मोहादिकनी हानिनां एटले के वैराग्य द्रद्धिनां ज थाय छे.

पूर्वे अनेक सतीओ विगेरेने एवां कारणो संसार चक्रमां अने-क्याः मळ्यां छे. पण परिणामे तेवां कारणोथी तेमने लाभज थयोछे.

तेवा ज्ञान विवेक के वैराग्यनी गंभीर खामीथी आज काल मुग्ध अज्ञानी लोको उक्त मोह-शोकने वश पड़ी भारे दुःखी थाय छे, थता देखाय छे, एटछंज नहि परंतु पोतानी अनार्य टेवथी अन्य जनोने पण दुःखी करे छे.

मूर्ल मावापो दीर्घदृष्टिनी खामीथी या स्वार्थ अंधताथी वाळ-लग्न, कजोडां, कन्याविक्रय अने विधमीनी साथे पोतानां पुत्र पुत्रीने परणाववायी तेमने जन्मांत दुःख दिखामां डूवाववाना पातकी थाया छे. उक्त दुःखनो अंत बहुधा मावापनी समज सुधरवाथी आववा संभवे छे. कंइ पण आपत्ति आवी पडतां धीरजथी तेनी सामा थइने तेनो क्षय करवाने वदले मुग्ध जनो अधीरां थइने उलटां वधारे दुःखी थाय छे, तेनो श्रेष्ट उपाय ए छे के तेवे वखते हिंमत नहि हारतां धीरजथी आवेली आपत्तिनी सामा थवुं, एर्टले के युक्तिथी आवेली आपत्तिने उल्लंघी जवा जेटलुं डहापण वापरवा भूलवुं नहिः

जो आवेली गमे तेवी आपत्तिने हिंमतथी अने डहापणथी उल्लंची जाय छे, जे तेवे वखते धीरज राखीने स्वधर्म-न्याय, नीति, सत्य, प्रमाणिकता विगेरेने तजतो नथी तेने अंते आपत्ति संपत्ति रूप थाय छे. त्यारे जे प्रथमथीज आपत्तिने संपत्तिरूप मानीने भेटे छे अने स्वधर्म-कर्तव्यमां सद्दा चूस्त रहे छे तेनुं तो कहेनुंज हुं ?

केटलाक मुग्ध अज्ञानी लोको मूएलानी पछवाडे वहु वहु चोक-विलाप करे छे अने एम करीने उभय अर्थथी चूके छे तेमज स्वपरनी नाहक पायमालीना कारणिक थाय छे, ते खरेखर थि-कारपात्र छे.

यूएलां माणस स्व स्वकरणी प्रमाणे परलोक गमन करी सुख दु:खना भागी थाय छे अने एज नियम हवे पछी परलोक गमन करनार हाल जीवता माणसने माटे छे तो मरनार माणसनी शुभा-शुभ फरणी उपरथी घडो लहने स्वचारित्रनो भविष्यने माटे विचार करवाने वदले नाहक अरण्यमां रुदननी पेरे मरनारनी पछाडी आ-कंदनादिक करवाथी शुं वळवानुं छे? तेथी तो नथी थवानुं मरना-रनुं हित के नथी थवानुं हाल जीवतानुं हित. पण गरफायदो अने अन्याय तो त्रगटज छे. रुद्नादिक करनार पोताना व्यवहारिक अने धामिक कर्तव्यथी चॄके छे. अने अन्य मेक्षक—कौतुकी जनोने पण चूकाने छे. केटलीक वरत तो आवी चेष्टाओं केवळ रुढीनी खात-रज करवामां आवे छे. गमे तेम होय पण तेना व्यर्थ परिश्रम अने काळ व्ययथी मगट गेरफायदोज छे. शिन्नाय रुद्नादिक विरुद्ध चेष्टाथी मरनारनी गति कदापि सुधरती नथी, तेथी केवळ अज्ञानता अने मोहनी मनळताथी स्नार्थ अंघ वनीने अथवा अंघ परंपराथी चालती आवेली रुढीने अनुसरी आवी अनर्थकारी करणी करवामां आवे छे एम स्पष्ट मालम पडे छे.

वीजं जो मरनार माणस मंगळमय धर्मनं आराधन करीने सद्गतिमां सिधाच्यो होय तो तेवा मंगळमय समये सगा संबंधीओए
हर्षने स्थाने शोक करवो ए केटलो वधो अनुचित अने अन्याय
मरेलो छे, ते आपोआप पोतानी स्वार्थ अंधताने दूर करी मध्यस्थपणे शांन्त चित्तथी विचारी जोतां स्वभाविक रीते मालम पडी
आवशे.

३३ मननो मेल दूर कर.

काम क्रोघादिक अथवा रागद्देषादिक अंतर विकारोने उपश्रमावी अथवा क्षय करी देवायीज चित्तनी शुद्धि करी कहेवाय छे. च्यां सुधी मननो मेल धोयो नथी त्यां सुधी गमे तेटला जल स्नानथी पण पवित्र थवानो नथी. जेतुं मन शुद्ध-निर्मळ थयुं छे तेज खरो पवित्र छे.

जे समता कुंडमां स्नान करीने पोताना पापमळने पखाळी नांखे छे. अने फरी मलीनताने पामताज नथी. ते विवेकात्माज परम पवित्र छे.

ज़े कोइ अंतर शुद्धि करवाना उच्च उद्देशथी शाह्ननी पवित्र नीतिपूर्वक प्रवृत्ति सेवे छे, ते पोताना पवित्र लक्षथी चित्तनी शुद्धि करी शके छे.

उक्त छक्ष पूर्वक शुद्ध देव गुरुनी पूजा करवानी अभिलाषा-वाळा सद्गृहस्थने जयणा पूर्वक जळ स्नान करवानी पण शास्त्रमां संमति छे.

तथी अधिकार परत्वे गृहस्थलोको वडे एवा पण पवित्र हेतुथीं जो जयणा पूर्वक जलस्तान करवामां आवे तो ते पण तेमने हित-कारी कहेळुं छे.

परंतु एवा उच्च उद्देशविना स्वच्छंदपणे अनेकवार जळलान करवामां आवे तो ते जळमध्यवर्ती मच्छनी परे कंइपण परमार्थयी हितकारी थइ शकतुं नथीः आथी आत्मार्थीजनोएं अंतरमळ साफ करवानोज मुख्य उद्देश मनमां स्थापी राखीने स्वस्व अधिकार प्र-माणे क्रियाकांड करवो घटे छे. निर्देभ धर्मसेवीनो सरल आशय शीघ्र सफळ थाय छे.

सकळ धर्म साधनमां समता—रागद्देष रहित द्वतिनी प्रथम जरुर छे.

गमे ते दर्शनमां समताभावीनी सिद्धि अवश्य थवानी छे. केम के ते समदृष्टिथी रागद्वेष तजीने गमें त्यांथी तत्त्वतुंज ग्रहण करे छे. मिथ्याआग्रही-कदाग्रहीजनो एम कदापि करी शकता नथी. ते तो उल्लंटा परनिंदादिकमां उतरी पोतानुं सर्वस्व वगाडी संसार चक्रमां पुनः पुनः भटक्या करे छे. तेमनुं अंतर विष नहि टळवाथी तेमने ्वारंवार जन्म मरणना फेरा करवा पडे छे. ते उपर एक कडवी तुं-वडीतुं दृष्टांत लक्षमां लड़ राखवुं वहु उपयोगी छे.—एकदा कोइ ृ दृद्ध डोशीना पुत्रने अडसठ तीर्थमां जइ न्हावानो विचार थयो. ं पुत्रमां पात्रतानी मोटी खामीथी माता तेना कामने अनुमोदन आ--पती नहती, पण प्रथम तेनामां कोइ रीते पात्रता आवे ते जोवाने आतुर हती. पुत्र तो जूवानीना मदमां मातानां हितकारी वचनोनो पण अनाद्र करतो हतो. छेवट ज्यारे ते अडसठ तीर्थमा जवाने तैयार थयो त्यारे माताए तेने मधुर वचनथी कहुं के विटा! आ मारी कड़बी तुंबडीने पण तीर्थ करावतो. आवजे. मातानुं आ वचन तेने

कडण नहि लागवाथी मान्य राख्युं अने माताए आपेली कडवी तुं-बड़ी साथे लड़ने ते तीर्थ करवा निकळ्यो, लौकिक रुढि मुजब बधा तीर्थमां स्नान करी माताए साथे आपेली तुंबडीने पण स्नान करा-चीने अनुक्रमे पोते पोताने स्थाने आव्यो. अने ते तुंबडी माताने पाछीं सोंपी. माताए तेनी समक्ष तपास करीने कहुं के भाइ! अड-सठ तीर्थमां न्हाया छतां तुंबडीनी कडवाश गइ नहि. आ प्रगट दा-खलाथी तेने सरस वोध मळ्यो तेम दरेक धारे ते तेमांथी आवो वोध मेळवी राके के अधिकार-योग्यता विना जेम स्वभावेज कडवी तुंबडी अडसठ तीर्थना जळमां न्हाया छतां पोतानी स्वभाविक कडवाशने ·तजी मोटी थइ शकी नहि · तेम कोइपण · पातता माटे पूरतो प्रयत करीने पालता पाम्या विना गमे तेवी उत्कृष्ट करणीवडे पोतानामां जड घालींने रहेला एवा काम क्रोधादिक अथवा रागद्वेषादिक दोषोने कदापि दूर करीं शकेज नहिं माटे मननी शुद्धि करवाना अधीजनीए अंतरनो मेल साफ करवाने यथम श्रुद्रतादिक दोषोनुं विरेचन करीने योग्यता मेळववानी अति आवश्यकता छै. अने एम सावधानता पूर्वक उपाय करवाथी अंते समता जेवा श्रेष्ट रसायणथी चित्त गुद्धि सहजमां साध्य थइ शके छे.

जेम निर्मळ वस्न उपर जोइए एवो रंग चढी शके छे, अने घटारीमटारीने साफ करेली भींतो उपर आवेहून चीलामण उठी शके छे तेम निर्मळ चित्तवाळाने शुद्ध धर्मनी यथार्थ पाहि:

जेम निर्मळ आदर्शमां वस्तुनुं यथार्थ मितिवंव पडे छे तेम शुद्ध-निर्दोष चित्तमां पण शुद्ध तत्त्व धर्मनुं यथार्थ संक्रमण थइ शकेछेः

जेम निपुण वैद्य रोगीने प्रथम विरेचनादिकथी अंतरशुद्धि कर-वानुंज फरमावे छे, तेम सद्गुरु पण शुद्ध धर्मार्थी जनोने प्रथम मननो मेळज साफ करी लेवानी भलामण करे छे, अने खरुं हित पण एमज संभवे छे.

३४ मानव देहनी सफळता करी छे.

बुद्धेःफलं तत्त्व विचारणं च, देहस्य सारं व्रत धारणं च॥ः वित्तस्य सारं किल पात्र दानं, वाचः फलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥ १॥

तत्त्वातत्त्व, सत्यासत्य, गुणदोष, हिताहित, लीभालाभ, भक्ष्या-भक्ष्य, पेयापेय अने उचितानुचित विगेरेनो विचार करीने सारभृतः तत्त्वनुं ग्रहण-सेवन करवुं एज सद्बुद्धि पाम्यानुं फळ छे.

दश दृष्टीते दुर्लभ मानव देहं, आर्यक्षेत्र, उत्तम कुळजातिमां जन्म, इंद्रिय पहुता, शरीर नीरोगता, सद्गुरु योग, निर्मळ खुद्धि, धर्मरुचि अने तत्त्व-श्रद्धादि श्रुभ सामग्री महा भाग्ययोगे पामीने पांचे प्रमाद त्यजी उद्घसित भावथी सिंहनी पेरे शूरवीरपणे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अने निष्परिग्रहतादिक महाव्रतोत्तं स्वरूप यथार्थ समजीने अभ्यास पूर्वक तेमनो स्वीकार करवो अथवा परि-णामनी मंदता योगे समिकत मूळ श्रावकनां बार व्रत पैकी बनी शके तेटलां समजीने तेत्रां पण व्रत धारण करवां. ए आ उत्तम मानव भव पाम्यातुं फळ छे. सप्त व्यसन, रात्री भोजनादिक अभस्य भक्षण, अने भूमिकंद्दिक अनंत जीवात्म वस्तु, अणगळ जळ-पान विगेरेतुं तो दरेक शाणा माणसे अवस्य वर्जन करवुंज जोइये. मारब्य योगथी माप्त थयेली लक्ष्मीतुं फळ ए छे के तेनो उदार आ-श्चयथी परमार्थ दावे पुण्यक्षेत्रमां उपयोगमां करवो. यशकीर्त्तिनीज खातर दान पुण्य निहं करतां केवळ कल्याणार्थे करवामां आवतुं पात्रदान परिणामे अनंतगणुं उत्तम फळ आपी शके छे. अने वचन शक्ति पाम्यानुं उत्तम फळ ए छे के सर्व कोइने मीति उपने एवं मिष्ट-मधुर अने हितकारीज वचन वदवुं. कदापि पण कोइने अमी-ति के खेद उपजे एवं कडवं के अहित वचन कहेवं नहि. परने पिय एवं प्रसंगने लगतुं हित-मित भाषण करनारज सत्यवादी होवाथी प्रायः सर्व कोइने मान्य थइ शके छे.

आ प्रमाणे हुंकाणमां कहेली हकीकत लक्षमां राखीने विवेकथी वर्तनार पोताना श्रम चित्रियी स्व मानव भव सफल करी शके छे. अथवा पूर्वे प्रसंगोपात बतावेली मैत्री मुद्दिता करूणा अने मध्यस्थ भावनाथी पण मनुष्य देहनी सफलता थइ शके छे. हुंकाणमां यथा-शक्ति तन, मन, धनथी स्वपर हित साधी लेवुं एज आ मनुष्य भव-नुं रहस्य छे. तेमां उपेक्षा करवी ए मूलगी मूडी खोवा जेवुं छे. तेथी जेम वने तेम प्रमाद रहित स्वपरहित साधवा सदा तत्पर र- हेंबुं सहृदय जनोने उचित छे.

सिंद्रवेकथी स्व कर्तव्य समजीने जे शुभाशयो शुद्ध अंतःकरण-थी तेतुं सेवन करे छे, ते मनुष्य छतां दैवी जीवन गाळे छे; पण जे स्व कर्तव्य समजताज नथी अथवा तो समज्या छतां तेनी उपेक्षाज करे छे; ते तो मनुष्य रुपे पशु जीवनज गाळे छे एम कहेवुं युक्तके.

जे पारकी निंदा करवामां मुंगो छे, परस्तीतुं मुख जोवामां अध छे अने परद्रव्य हरण करवामां पांगळो छे, तेणे महापुरुषज स्थोकमां जय पामे छे. जेना घटमां विवेक दीपक मगटयो छे तेल छोकमां खरो पंडित छे, तथा जेणे मद्य, विषय, कषाय, निद्रा अने विकथा-रुप पांचे ममादने वश कर्या छे एवो अप्रमादी पुरुष्ज जगतमां खरो शूरवीर छे.

३५ प्राणान्ते पण वत-भंग करीश नहिं

मयम आपगाथी सुले पाळी शकाय एवीज मतिज्ञा या वत-।नयन लेशा योग्य छे, अने ते लीधा वाद तेने माणान्त सुधी पा-ळशां जरूरनां छे.

जो पथम ग्रहण करवामां आवता व्रत-नियमतुं स्वरूप यथार्थ समजी लेवामां आवतुं होय अने तेनो जरुर जेटलो अभ्यास पण करवामां आवतो होय तो घणुं करीने व्रत भंगनो प्रसंगज आववा पामे नहिं.

, आत्म कल्याणने माटे जे जे सारां व्रत ब्रहण करवां योग्य छे ते वधानुं स्वरूप संक्षेपथा के विस्तारथी प्रथम सद्गुरू समीपे समजी छड् तेमांथी आपणे सुखे पाळी शकीये एवां व्रतज ब्रहण करीने तेमने निरंतर संभारी संभारीने काळजी पूर्वक पाळवा प्रयत्न क-रवो जोइए.

जे व्रत-पच्च ख्लाण उपयोग शून्य या समज्या विनाज लेवामां आवे ते दुःपच्च ख्लाण होवाथी निष्कळ छे. तेथी तेवां व्रत लीघां होय या न होय तोपण प्रसंगोपात या च्हाइने सङ्ग्रह पासे जह ते व्रत संवंधी जहर जेटली समज लड़ने जो सारी रीत सावधान थड़ने ते पाळवामां आवे तो पोताना मयत्नना प्रमाणमां जहर लाभ माषा थड़ शकेन. परंतु केवळ गतानुगतिकपणे संमूर्किंमनी पेरेज

वर्तवामां आवे तो गने तेट छं कष्ट सहन कर्या छतां जोइये एवं फळ कदापि यइ शकेन नहिं. जे जे व्रततुं पालन मीतिथी रुचिथी कर-वामां आवे छे तेनुंन फळ सारुं वेंसे छे. अरु चियी करवामां आवती गमे ते क्रियानुं परिणमन सारुं थर शक्तुंज नथी. तेथी चित्तनी पसन्नता माटे भय (चित्तनी चंचळतां) द्वेष (अरुची) अने खेर् (क्रिया करतां थाकी जर्रु ते) दोषने दूर करवाने प्रथम प्रयत्न क-रवो जोइये. वस्तुनुं स्वरूप यथार्थ समजायाथी अने तेमां पोतानुं मन वेंत्रायाथी उक्त दोषो सहनमां दूर थइ शके छे. पछी खरी छहे-जतयी पाळवामां आवता व्रतीयी आत्माने यथार्थ लाभ थाय छे. आ लोकना के परलोकना सुलने माटे करवामां आवती क्रियाने विष या गरल समान कही छे. क्रियानां फळ हेतु समज्या विना केवळ देखादेखीथी करवाशां आवंती क्रियाने ज्ञानी पुरुषो अननुष्टान कहे छे. ते ते क्रिया संबंधी फळ हेतु, विगेरेने समजी केवळ कल्या-णने माटेज करवामां आवती धर्मिक्रयाने लद्हेतु कहे छे, तेमज ज्यारे हढ अभ्यासथी उक्त क्रिया मन वचन अने कायानी एकता-थी अवंचक पणे थाय छे त्यारे तेमां अमृतनी जेवो स्वाद आववाधी ज्ञानी पुरुषो तेने अमृत किया कहे छे; नद्हेतु, अने अमृत क्रियाज आत्माने मोसदायी छे, वाकीनी त्रण तो भव भ्रमणकारीज कहेली छे. एटलो अधिकार अति उपयोगी होवाथी पसंगोपात कहे-वामां आञ्यो छे.

द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भाव, अने संघयण विगेरे विचारी स्वश-किना प्रमाणमां समज पूर्वक सद्वतोने धारण करीने जे तेमनुं अखंड पालन करे छे तेमनुंज जीवित सफळ छे, परंतु जे कंइ पण पूर्वापर विचार कर्या विना विवेक शून्यपणे व्रत लड्ने विराधे छे तेमनुं जीवित केवळ निष्फळ छे. व्रत खंडीने लुहारनी धम्मणनी जेम जीवनने गाळनार जेवो कोइ कमनशीव नथी. व्रत खंडीने जीवनार करतां व्रतने अखंड राखीने मरनार माणस घणो उत्तम छे, केमके अनेक भव भ्रमण करतां पवित्र व्रत पालननी रुचि थ-वीज मुक्केल छे तो तेने प्राणान्त सुधी अखंड पालन करवानी पवळ कामनानुं तो कहेवुंज शुं?

ग्रहण करेलां पवित्र व्रतोने अखंड पालन करीने परलोक गमन करनार माणसो पोतानी पाछळ अखंड कीर्त्ति अने अमृल्य दष्टांत मूकता जाय छे, जेने अनुसरीने अनेक आत्मिहतेच्छक जनो सन्मा-गीतुं सारी रीते सेवन करे छे. भरतेश्वर, वाहुवली प्रमुख अनेक सताओना अने वाह्मी, सुंदरी प्रमुख अनेक सतीओना एवा उत्तमोत्तम दाखला जगतमां प्रसिद्धज छे.

च्हाय तो स्नी होय या तो पुरुष होय पण पुरुषार्थ परायण-तायीज सद्वतोनी समज मेळवीने ते तेमनुं विधिवत् पालन करी शके छे, अने एम विधिवत् व्रतनुं अखंड पालन करीने स्वजीवन सफळ करे छे. एवी सद्बुद्धि सर्व कोइने जागृत थाओ ? अने वत भंग करवा या कराववा संबंधी कुबुद्धिनो सर्वथा अंत आवो एज इष्ट छे.

३६ मरण वलते समाधि साचववा खूब लक्ष राखजे.

जीवने जीवित पर्यंत जेवा शुभाशुभ अभ्यासनी आदत होय छे तेवीज तेनी शुभाशुभ असर तेना मरण समये समाधिना संवं-धमां थाय छे. एम समजीने शाणा भाइ ब्हेनोए जीवित पर्यंत शुभ अभ्यासनीज आदत पाडवी उचित छे. सारां कारण सेववाथी कार्य पँण साहंज थाय छे. एवा निश्चय अने श्रद्धापूर्वक मरण वखते स-माधि इच्छनार जनोए जीवित पर्यंत शुद्ध भावनाथी शुभ करणी करवा परायण रहेवुं जरुरनुं छे. सतत छक्षपूर्वक खंतथी सत् करणी करनार सत्पुरुषो अध्यवसायनी विशुद्धिथी अंने समाधियुक्त मरण करी सद्गतिना भागी थाय छे.

जो तुं जन्म मरणना दुःखथी त्रास पाम्यो होय तो श्री वीतराग वचनानुसार निदोंष धर्मनुं आराधन करीने जेम समाधि मरणनी प्राप्ति थाय तेम खास लक्ष राखः समाधि मरणथी, जीवित पर्यंत करेला धर्मनी सार्थकता थाय छे. गमे तेटला उंडा कूवामांथी जळ काढवाने माटे लांबी दोरी साथे लोटो विगरे कुवामां नांखतां

दोरीनो अमुक छेडानो भाग हाथमां मजबुत रीते पकडी राखवामा आवे छे अने जो ते जुक्तियी जाळवी शके छे तो पहेला लोटा साथे अभीष्ट जळ मळवी शके छे पण जो छेवटना भागमां कंइपण गफ-न्छत करे छे तो ते सर्वने गमावी पोताना जानने पण जोखममां नांखे च्छे, तेम समाधि मेळवी पोतानो जन्म मुधारवाने आ**खी जिंदगीना** -मोटा भाग मुधी यत्न कर्या छतां जो छेवटना भागमां गफलत-बेद--रकारी करवामां आवे तो पोताना चळचित्तथी ते अभीष्ट समाधिने अंत चरवते मेळववा भाग्यशाळी थइ शक्तो नथी, परंतु दूषित धयेळां -अन, वचन, अने कायाथी उलटी असमाधि पेदा करीने अधोगतिने 'पामी जन्म मरण जन्य अनंत दुःखनोज भागी थाय छे. माटे राग द्वेषादिक अंतर विकारो जेम निर्मूळ थवा पामे तेम यत्नथी जीवित पर्यंत निष्काम चित्त राखी व्यवहारिक नैतिक अने धार्मिक जीवन गाळवामां आवे अने कदापि पण खड्छ कार्यमां गफलत थवा न पामे तो छेत्रट अंत समये समाधि प्राप्त थया विना रहे नहिं. एम समजीने कोण विवेकीनर खड्छ कार्यनी उपेक्षा करी खन्छंद चर्त-नथी संसार परिश्रमण पसंद करे वारु ? अथवा खरेखरं तत्त्व रहस्य बाह्यकारोए कहुं छे के "जेवी गति एवी मति अने मति एवी गति" आ मार्मिक वचन बहु बहु मनन करवा योग्य छे. अने टुंकाणमां सर्व हितोपदेशना सार रुप छे.

ैं समाधि सुखना काँमी जनाए आराधना प्रकरणादिकमां क-

हेलां च्यार शरणां, दुष्कृतिनंदना, सुकृत अनुमोदना सर्व जीव साथे खामणा, संलेखना, पंचाचारनी विशुद्धि तथा नवकार महा-मंत्रादिकनुं लक्ष पूर्वक स्मरणादिक दश अधिकारो वहु सारी रीते समजवा, आद्रवा. अने आराधना अथवा पुन्य मकाशना स्तवनथी पण उक्त अधिकार सारी रीते समजी शकाय तेम होवाथी अंत स-माधिने इच्छत्रावाळा भाइ व्हेनोए तेनुं निरंतर श्रवण मनन करीने तेमां रहेला परमार्थनुं परिशीलन करनुं युक्त छे.

गमे तेवा संयोगोमां पोतानुं सकं निशान निह चृकनार हृढ अ-भ्यासी अंते समाधि मरणने पानी अक्षय मुखनो अधिकारी थइ शके छे.

३७ आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा करीश नहि

आ लोक अथवा परलोकना सुखनी इच्छाथी करवामां आवती धर्म करणी अल्प फलदायी थाय छे, पण जो तेज करणी केवल पारमार्थिक मोक्ष सुखने माटेज सहेतुक समजीने विवेकथी करवामां आवी होय तो तेथी मुख्यपणे मोक्षनो अने गौणपणे सामान्यतः स्वर्गादिक सुखनो सहेजे लाभ मले छेज. मनना परिणाम मुजव सामान्य विशेष फलनी प्राप्ति थाय छे. माटे जेम वने तेम नवला परिणामने मनमां अवकाश आपवो नहि, कहाच तेवो परिणाम थयो

तो तेने दुर करी देवा घटतो प्रयत्न करतो, अने शुभ भावनाने शीघ्रस्थान आपवुं. खेडुत लोको खेड करी खातर नांखीने जेम धा-न्यना मोटा पाकने माटे धान्यनां बीज वावे छे, पण केवळ पलाल (घास) ने माटे वावता नथी, छतां धान्यनी निष्पत्ति साथे पलाल पण साथेज पाके छे; तेम मोक्षने माटे करवामां आवती करणीथी प्रसंगोपात स्वर्गादिकनां सुख पण मळे छे, केवळ स्वर्गादिक सुखने माटेज धर्मकरणी करवानी जरुर नथी। छतां तेवां क्षणिक सुखनी बुद्धिथीज जो धर्मकरणी करवामां आवे तो तेनुं फळ पण प्रायः तेट-लुंज अल्प मळे छे.

आलोक परलोक संबंधी सुखनी बुद्धिथी मोह अने अज्ञान
गिमित करेली करणी गमे तेनी कठण होय तोपण तेथी प्रायः परिणामे हित थतुं नथी पण उलढ़ं भारे नुकसान थाय छे. केमके तुच्छ
आज्ञांसा पूर्वक करेली कठण क्रियाथी क्वचित देवगाति पण मले छे,
परंतु पाछलथी पूर्व पूण्य क्षयानंतर तेनो अधः पात थया विना रहेतो
नथी तेथी ज्ञानी पुरुषोए तेनी विष या गरल क्रियानो मंडूक—चुर्णना न्यायथी निषेध करेलो छे. जेम एक मंडूकी (संमूर्छिम देडकी)ना
चूर्णमांथी लाखो नवनवी मंडूकीओ पेदा थाय छे तेम तुच्छ भोगाग्रंसाथी करेली करणीवडे लाखोगमे नवनवा भोगायतनो (देहो)
धारण करी जन्ममरणजन्य अनंत दुःखना अनेकशः भागी थनं
पडे छे. परंतु जेम दग्ध थयेला ते मंडूकीना चूर्णमांथी एक पण नवी

मंडूकी पेदा थर शकती नथी तेम विवेक पूर्वक भोगाशंसा तजीने निष्कामपणे जो तद्हेतु अने अमृत क्रियाने सेववामां आवे छे तो तेथी अंते भवनो अंत करीने परम समाधिमय मोक्ष सुखनी प्राप्ति थाय छे.

३८ स्व कर्तव्य समजीने स्वपर हित साधवा तत्पर रहे.

जे शुभाशय प्रथम स्वहित यथार्थ समजीन आदरे छे, तेमांज अहोनिश सावधान रहे छे, तेज महाशय कालांतरे परिहत साधवाने समर्थ थइ शके छे. पण जो पहेलां पोतानुं खरुं हितज शुं छे ते पूरुं जाणतो के आदरतो नथी तो ते परिहत शी रीते साधी शकशे? पोते निर्धन छतां अन्यने शी रीते धनाड्य करी शकशे? पोतेज दृश् रिआमां द्वतां छतां अन्यने शुं तारी शकशे? माटे स्व हितने यथार्थ समजीन साधनारज परिहतने पण परमार्थथी जाणी समजीने साधी शकवानो ए वात निःसंशय सिद्ध छे.

ज्ञानी-विवेकीजनो स्वहितनी पेरे पराहितने पण स्व कर्त-व्यज समजे छे, अने तेथीज तेओ निरिममानपणे स्वहित समजीनेज परहित करे छे.

तत्त्वदृष्टि महापुरुषो कदापि पण 'हुं अप्रुक्तनुं हित करुंछुं ' भारा विना अप्रुक्तनु हित थइ शकशे नहिं र एवं कर्तृत्व—अभिमान

लावता नथी. स्वहित अने परहित तेमने मन एक छे, जूदां भासतां नथी, तेथी तेवा मिध्याभिमानने मनमां आववा अवकाश पण मळतों नथी. खर्र कारण तो ए छे के तेमने तेमनुं खर्र हित यथार्थ समजायुं अने अनुभवायुं छे. तेथी स्वहितने सहायभूत सर्व सान्त्रिक विचार या भावनानेज तेमना मनमां स्थान मळे छे पण तेमां विद्रभित बाधक एवा कोइपण क्षुद्र विचार के भावनाने स्थान मळी शकनं तुंज नथी अने ते तेवा तत्त्व दृष्टि विवेकी जनोने केवळ उचितज छे.

आ उपरथी ए वात सिद्ध थाय छे के स्वपर हितैषीए प्रथम स्वहितज सारी रीते समजीने आदरवुं अने अनुभववुं योग्य छे.

स्वहित पण साधवुं सहेज नथी. केमके ते योग्यतावंतनेज प्राप्त थाय छे.

स्विहत साधवाने योग्यता मेळववा माटे नीचे वतावेला गुणोनो खास अभ्यास करवानी जरुर छे. तेवा सद्गुणो मेळव्या विना बा-धकभूत दोषो दूर थताज नथी, जेथी जीव स्विहत साधवाने अञ्चल-अयोग्य थाय छे; तेथी प्रथम आत्मिहिनैपीए नीचेनी हिककत ध्या-नमां लेवी जरुरनी छे. तेतुं यथार्थ परिशीलन करवाथी आत्मा ज-रुर स्विहत साधी शके छे.

१. अक्षुद्र-पारको छिद्र जोवानी कुटेव त्यज्यायी अने एव-

दोषने नीरखी सुधारवानी सारी टेव पडवायी आत्मामां गंभीरता नामे सद्गुण प्रगट थाय छे.

रहे स्प निधि-पांचे इंद्रियो परवर्डी अने देह नीरोगी होवाथी शरीक सौद्धव गुण लाभे छे. विषय लोखपता तजीने मन अने इंद्रियोने नियममां राखनाथी अने आरोग्यताना नियमोने पण लक्ष पूर्वक पाळवाथी उक्त गुण माप्त थइ शके छे. 'शरीर माद्यं खलुः धर्म साधनं '-शरीर ए धर्म साधनोमांनुं एक अति अगत्यनुं सा-यन होवाथी तेनी योग्य संभाल लेवानी सर्व कोइनी प्रथम फरज छे.

- ३. सोम्यता-जेम चंद्रने देखी सर्च कोइने शीतळता वळे एवी मकृतिनी सहज दिशानळता सान्विक विचार, सान्विक भाषण, सान्विक कार्योवडे सहज सिद्ध थाय छे. सहज शीतळ स्वभाववाळा माणसो सर्व कोइने अभिगम्य थाय छे. तेवी ठंडी प्रकृति प्रायः सर्व कोइने शिय होवाथी ते सर्वना विश्वासपात्र थइ पडे छे.
- ४. जनिय-लोक निय गुण सर्व कोइने वल्लभ थवाय एवां सत्कार्य-सुकृत करवाथी अने आलोक परलोक विरुद्ध दुष्कृत तज-वाथी माप्त थइ शके छे. आ गुणथी माणस धारे एवां मोटां कार्य करी शके छे.
- ५, अक्रूर-तामसी प्रकृति तजीने क्षमा, नम्नता तथा अनुकं-पादिक गुणनो अभ्यास करवाथी क्रूरता-कठोरता दोष दूर थाय

- छे. अने हृदयमां, वचनमां, अने कृतिमां सहज कोमळता मगृट थाय छे.
- ६. भीरु-धर्मी माणसोनी संगतिथी अथवा धर्म शास्तुं अवण मनन करवाथी या तो पूर्वना शुभ संस्कारथी जीवने स्वभाविक रीते पापनो या परभवनो हर छागे छे. कंइ पण अनीति के अन्याय करतां मन झट दइने संकोचाय छे, अने पापथी तरत विरम छे. उ-क्त गुणथी पोताना पूज्य वहीछ जनोतुं मन पण न दूभाय एवी काळजी रखाय छे.
- ७. अज्ञाठ-ज्ञाठता (छळ प्रपंचादिक कपट द्वित) तज्याथी ए गुण प्राप्त थाय छे, सरल स्वभाव धारवाथी स्वव्यवहार पण स-रल करी ज्ञाय छे. कपटी माणसोन तो कपट करीने पोतानो दोष गोपववाने माटे बहु वक्र व्यवहार चलाववो पडे छे. सरल स्वभावि-ने तेम करवानी कंइ जरुर रहेती नथी. केमके सरल स्वभाविनां व-चन उपर सर्व कोइने विश्वास आवे छे. कल्याण पण एवा सरल स्वभावीनुंज थाय छे, कपटीनुं थतुं नथी.
- ८. दाक्षिणतावंत—स्व इच्छा होय या न होय पण कंइक ला-भालाभ विचारीने वडीलनी अथवा समुदायनी तीत्र इच्छाने मान आपीने कंइ कार्य करवानी पद्धति लोक मान्य होवाथी तेथी कचित् सारो लाभ पण मळे छे. परंतु उक्त दाक्षिणता कंइक मयोदासर

होबी जोइये. विवेक विनानी दाक्षिण्यतायी विपरीत परिणाम पण आवे छे ए बात भूलवी जोइती नथी, विवेकथीज स्वपर हित साधी अकाय छे.

- ९. लजालु-उत्तम कूळनी अथवा धर्मनी मर्यादा पाळनार माणसोना परिचयथी या पूर्वना शुभ संस्कारथी लज्जानो गुण लाभी शके छे. ए गुणथी कंइपण खोदुं काम करतां जीव ढरे छे अने शुभ काममां पराणे मद्यत्ति करवा दोराय छे. एवी लज्जानी दरेकने आ-वश्यकता छे.
- १०. द्याछ-क्षमा, सहनशीलता अने दुःखी लोकोनी दाझ दीलमां धरवाथी अथवा नीच निर्दयजनोनो सहवास तजीने उदार आश्रयोनी संगति करी तेमना जेवा सद्गुणोनो अभ्यास करवाथी सर्व प्रति द्याभाव रहे छे.
- ११. समदृष्टि—मध्यस्थ—आंधळा राग के द्वेष तजीने निष्पक्ष पातपणे सत्यासत्य संबंधी तोल करवानी देववाळाने ए गुण प्राप्त थइ शके छे.
- १२. गुणरागी-गमे तेमां रहेला सद्गुण मत्येना साचा प्रेम थीज उक्त गुण प्राप्त थाय छे, गुणरागथी गुणनी अने गुणदेषथी दोषनी प्राप्ति थाय छे. निर्गुणना रागथी पण दोषनीज पुष्टि थाय छे केमके केवळ रागअंध दोषने पण गुणन मानी, ले छे. अने देष

अंध पण गुणने दोषज मानी ले छे. विवेक कून्यपंणे रागादिक करतां उल्लं विपरीत परिणामज आवे छे, माटेज ज्ञानी पुरुषो परीक्षा पूर्वकज सद्गुणना रागी थवानुं फरमावे छे, जेथी सकल दोषने अनुक्रमे दूर करीने सद्गुण संपन्न थवाय छे.

- १३. सत्यवादी—जेने असत्य अहित अप्रिय भाषणः हलाहल -झेर जेवुं लागे छे, अने सत्य हित अने प्रिय वचन अमृत जेवुं मिष्ट लागे छे तेज परमार्थथी सत्यवादी थड् शके छे. ते सत्यनी खातर प्राण पाथरशे.
- १४. सुपक्ष-जेनां सगां संबंधी निर्मळ बुद्धिनां, मायाळ, धर्म-शीळ अने टेकीलां होय तेमज बीजांने पण तेवांज धवा मेरणा कर-ता होय ते सुपक्ष (समर्थ पक्ष-बळवाळो) होवाथी सर्व कार्यमां फतेहमंद नीवडे छे.
- १५. दीर्घदशी—कंइपण कार्य सहसा निहं करतां तेनुं भावी परिणाम विचारीने विवेकथी करवा योग्य कार्य करे ते दीर्घदशीं समयज्ञ कहेवाय छे.
- १६. विशेषज्ञ-जे खर्ड स्विहित शुं छे अने ते शी रीते साध्य थइ शके छे ए तथा गुणदोष, लाभालाभ हिताहित, द्रव्य, क्षेत्र, काळ, अने भावने सारी रीते समजीने बीजाने समजावी शके ते विशेषज्ञ गणाय छे.

थेते पण अनुक्रमे सत् चारित्रना परिश्रीलन्धी सारी पंक्तिमां आवी सके छे

- श्रदे विनयवंत-मद, अहंकारादिक दोषने त्यजीने संत पुरु-षोनी सेवाथी या साधुजनोनी हित शिखामणने हृदयमां धरवाथी विनय-नम्रता आवे छे
- १९. क्रतजाण-करेला गुणना जाण माणसो पोताना उपकारी माता, पिता, स्वामीके गुर्वादिकना बनी शके तेटला गुणानुवाद क-रवा चूकता नथी. कृतइ माणस उपकारीना हितने माटे बने तेटली स्वाथनो भोग आपे छे.
- २०. परिहतकारी-सहुने स्विहत व्हार्छ छे एम समजीने स्व-हितनी पेरे परिहत करवामां पण जेने भीति छे ते मनथी, वचनथी के कायाथी कोइनुं अहित थाय एवां कार्यथी दूर रहेवानोज अने हित थाय एवांज भूभ कार्यमां जोडावानो मयत्न करे छे.
- २१. लब्धलक्ष-सर्व बाबतमां जेनी दृष्टि आरपार प्होंची शके छे एवो चकोर पुरुष सुलेथी स्विहत समजीने तेने विवेकथी साधी शके छे. उक्त २१ गुणथी भूषित भव्य स्विहत साधवाने संपूर्ण अ-धिकारी छे. स्विहत साधवाना अनेक मार्ग पूर्वे प्रसंगे प्रसंगे बताव्या छे. एम जेणे यत्नथी स्विहत-स्व कर्तव्य साध्युं छे तेने परिहत पुज

सु साध्यज छे. ते परिहतने स्वहित स्व कर्तव्य समजीने सुसे साथी अके छे. पण जे स्वहित स्व कर्तव्यनेज समजता नथी के सेवता नथी ते बापड़ा निर्धननी पेरे परिहत तो श्री रितेज शाधी शके वारु ?

३९ पंच परमेष्टि महामंत्रतुं निरंतर स्मरण कर.

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, अने साधु ए पांच पर-

जेमणे रागद्देष अने मोहादिक अंतरंग शत्रुगणनो सर्वथा उच्छेद करी सर्वद्र सर्वद्रशी संपूर्ण सहजानंदि अने सर्वशक्तिमान थइ नि-द्रीष वचनवडे अनेक भव्य जीवोनो उद्धार कर्यो छे ते अरिहंत देव कहेवाय छे. जेमणे सर्व घाती अघाती कर्मोनो सर्वथा अंत करीने आत्माना स्वभाविक अनंत गुणोने मगट करी लोकना अग्र भागे स्थिति करी छे ते सिद्ध परमात्माना नामथी ओळखाय छे.

पंचेंद्रिय निग्रह, नवविध ब्रह्मगुप्तिना धारक, च्यार कषायथीं मुक्त, पांच महाव्रत युक्त, पंचाचार पाळवाने समर्थ पांच समिति अने त्रण गुप्तिना पाळक एम ३६ प्रधान गुणोवडे अलंकृत आचार्य भगवंत होय छे. 'तेमनां वचन तीर्थंकरनां वचननी पेरे पान-नीय थाय छे.

सांगोपांग आगमने अर्थ रहस्य युक्त जाणता छता, अन्य शि-च्योने पटाववामां कुञ्चळ अने प्रमाद रहित मूळ-उत्तर व्रतने पाळ-बापां तत्पर छता, शिष्य समूहने धर्मशिक्षा देवामां चतूर एवा अविष्यमां आचार्यपद पामवाने योग्य धर्मगुरु उपाध्यायना, नामधी ओळलाय छे.

बाह्यांतर परिग्रहथी मुक्त मुम्रक्ष जनो जैन दर्शनमां साधु, श्र-मण अने निग्रंथादिना नामधी ओळखाय छे, तेओ अहोनिश श्रमाद रहित धर्मसाधनमां तत्पर छता स्वहित पूर्वक परहित साधे छे. अहि-सा, संयम अने तप छक्षण चारित्र धर्ममां सदा सावधानपणे वर्तता अव्य जीवोने सन्मार्ग वतावे छे.

शुद्ध आत्म धर्मथी अलंकृत होवाथी उक्त पंच परमेष्टी जगतमां सारमूत छे, जेमां अरिहंत अने सिद्ध शुद्ध देवपदे, आचार्य, उपाध्याय अने सर्व साधुजनो शुद्ध गुरुपदे तेमां सारभूत रहेला दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने तप शुद्ध धर्मपदे वर्ते छे. एवो शुद्ध धर्म दरेक आत्म व्यक्तिमां शक्तिरुपे रहेलो छे. अने तेज शक्तिरुपे रहेलो शुद्धधर्म परमेष्टी पुरुषोनी पेरे परम पुरुषार्थ योगे मगट थइ शके छे. परमेष्टी पुरुषोने ते मगट थयेल छे. आपणा मत्येक आत्मामां शक्ति रुपे रहेला ते शुद्ध धर्मने मगट करवानी पवित्र बुद्धि—निष्टार्थी जो पूर्वोक्त पंच परमेष्टि भगवंतनं तन्मयपणे भजन, स्मरण, रमण, पूजन करवामां आने तो आपणामां शक्तिरुपे रहेलो शुद्ध दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने अने तो आपणामां शक्तिरुपे रहेलो शुद्ध दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने

तप लक्षण धर्म अवस्य मिगटमावने पाम ए वात निःसंस्य छे. माटे आपणे शुद्ध देव गुरु अने धर्म संवधी सदगुरु संमीप सारी समज मेळवी, तेतुं मनन करी, तेवा पवित्र लक्षयीज जगतमा सारभूत एवा पंच परमेष्टि महामंत्रतुं अहोनिश रटण करतुं युक्त छे एम पवित्र लक्ष पूर्वक परमेष्टि महामंत्रतुं अहोनिश रटण करतां आपणे पण अंते कीट अमरीना न्यायथी परमेष्टीरुप थइने अविनाशीपदना अवस्य अधिकारी थई शकीशुं.

४० धर्म रसायणनुं सेवन कर.

इदं शरीरं परिणाम दुर्बलं, पतत्यवश्यं श्वथं सन्धि जर्जरं॥ किमोपेंः क्किश्यसि मृद्धं दुर्मते, निरामयं धर्म रसायनं पिव ॥ १ ॥

गमे तेटलुं पाळ्युं पोष्युं छतां परिणामे दुर्वळ एवं आ शरीर, तेना सांधा नरम पडवाधी जाजरुं थयुं छतुं अंते अवस्य (एक दिन) पडवातुंज छे, तो है मृद्ध दुर्मति ! तुं शा माटे अनेक जातनां औषध मेषज करीने देहतुं दमन करे छे ! केवळ नीरोगी अने निरुपम एवा धर्म रसायण तुंज तुं अहोनिश पान कर. धर्म रसायणविना क-दापि तारा जन्म, जरा अने मृत्युरुपी भाव-रोगोतुं निकंदन थइ सक्सेज नहि. जन्म जरा अने मृत्यु एज प्राणीयोना खरेखरा रोग

छे. अते धर्मस्सायनवडेन ते दूर यह शके तेम छे. तो पछी जन्म-मरणजन्य अनंत दुःत्वशी उद्दिग्त शर्येटा मुमुश्च जनोए तेतं पान करता बा माटे दील करवी जोड्ये ? वीरमञ्जूष गौतम स्वामिने पण पूर्वे कहुं छे के गोयम म कर प्रमाद " ए बचन बहु बहु मतन करवा योग्य छे.

आपणा साचा अर्थमां स्वार्थमां अनादर करवो, स्वहितथी चुकतुं, स्व कर्तव्यथी श्रष्ट थवुं, अने निहं करवा योग्य करवाने तत्पर थवुं, तेतुं नाम ब्रानी पुरुषो प्रमाद कहे छे. ढुंकाणमां सर्वक्ष प्रमुनी अति हितकारी आज्ञानी उपेक्षा करीने स्वच्छंद वर्तन करवुं तेतुं नामन प्रमाद छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा मळीने प्रमादना मुख्य पांच भेद छे, जे धर्मार्थीजनोए अवश्य परि-हरवा योग्य छे. अम्मादी पुरुषम धर्मनुं यथार्थ सेवन करी शके छे. प्रमादशील जनो जरुर स्व कर्तव्य कार्यथी चुके छे.

उपराम श्रेणि उपर आरुढ थयेला, चौद पूर्वधर साधुओ पण प्रमाद बशात स्वस्थानथी चूकी पतित थाय छे तो बीजानुं ते शुं गर्जु ? एम समजी जेम बने तेम प्रमाद स्थानने तजी अप्रयत्त यनुं जोइये. थोडा पण वण, रुण, के अधिनी पेरे प्रमादने पण वचतां चार लागती नथी तथी ते ज्यां सुधी निरवशेष नष्ट न थाय त्यां सुधी तेनो विश्वास करवो भवभीर जनोने उचित नथीज.

शुद्ध भावना एज सर्व रसायण है. केपके तेना विना गमे

तेवी धर्म कर्ष्या पण फळीभूत थती नथी अने शुंद्ध भावना मात्रथी सर्व करणी सफळ थाय छे. माटे उक्त भावनानो अवश्य अभ्यास करवो जोइये. 'भावना भव नाशिनी'—भावना जन्म मरणनां दुःख मात्रनो अंत करे छे अने अक्षय अनंत सुख मेळवी आपे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा अने मध्यस्थता रूप भावना चतुष्ट्य प-रम हितकारी छे. तेमज अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्य-त्वादिक द्वादश्च भावना पण भव भयने हरनारी छे.

शुद्ध भावना रहित क्रिया काचना कटका जेवी होवाथी त्या-ज्य छे. पण क्रिया रहित शुद्ध भावना तो अपूल्य रत्न जेवी होवा-थी सेव्य छे. शुद्ध भावना रहित अंध क्रियाथी अहंकारादिक दोषो प्रभवे छे त्यारे केवळ शुद्ध भावनाथी तो शुद्ध गुणानु रागादिक स-द्गुणो प्रगटे छे. शुद्ध भावनावंत कदापि वीतराग देशित सन्मार्गनो अनादर करेज निहं, एटछंज निहं पण यथाशक्ति झान-क्रिया रूप मोक्ष मार्गनो आदर करे छे अने एज खहं रसायण छे.

शुद्ध भावना युक्त धर्म क्रिया दूधमां साकर जेवी, उज्वळ, शं-खमां दूध जेवी अने सुवर्णमां जडेला साचा रत्न जेवी मनोहर थइ पढे छे, अने आत्म कल्याण पण एवी सत्क्रियाथीज साधी शकाय छे तेथी मोक्षार्थी सज्जनोए एवी सत्क्रियानोज खप करवो उचित छे. जेथी शीघ्र स्वमोक्ष थइ शके.

४१ वैराग्य भावथी लक्ष्मी विगेरे क्षणिक पदार्थोंनो मोह तजी दे

अनित्य अने असार क्षण विनाशी पदार्थोमां मोह बांधीने मुन्य-अज्ञानी जीनो महा दुःखी थाय छे. ममतावढे थयेला मित अमथी मूर्व जनो अनित्य वस्तुने नित्य, असार-अशुचि वस्तुने सार-शुचि अने पराइ वस्तुने पोतानी मानी तेमां मुंझाइ मरे छे. जो जीवने वस्तु स्वभावनुंज यथार्थ भान थाय तो खोटी वस्तुमां नाहक मुंझाइ मरवानो वखत आवेज निहं, माटे प्रथम मध्यस्थपणे वस्तु स्वरुप जाणीने विवेकथी वाधकभूत भावोनो त्याग करीने कल्याण-कारी मार्गनुंज ग्रहण करवुं जोइये.

संपदो जल तरंग विलोला, योवनं त्रि चतुराणिदिनानि॥ शारदाभ्रमिव चंचलमायुः, किं धनैः कुरुत धर्म मनिन्द्यम्-

लक्ष्मी जल तरंगनी जेवी चंचल छे, यौवन वय शीघ्र चार्युं जाय छे, अने आयुष्य शरद रुतुना चादलनी जेम अत्यंत अल्पकाल टके एवं छे तो अस्थिर धनने माटे आटली दोडधाम करवानी शी जरुर छे? आटला अल्प समयमां बनी शके तेटली त्वराथी अहिंसादिक शुद्ध निर्दोष धर्मतुंज सेवन करवुं खास जरुरतुं छे. केमके सर्व इच्छित वस्तु भर्मधीन मात्र यह त्राके छे. यह धर्मसबने विना अविष्यमं कंइपण स्रुखनी आज्ञा राखवी व्यर्थन छे. अने धर्म सेवनथी सर्व प्रकारन स्रुख स्वतः प्राप्त थाय छे.

ज्यां सुधी जीव संसारना मोहमय संबंधमां रच्या पच्या रहे छे त्यांसुधी ते मोह मायाना जोर्थी संसारना स्वरूपने यथार्थ सम-ज्यारे जीवने संसार संबंधी दुःखनी खरी ख्याल आवे छे त्यारेज तेथी छूटवाने कंडक साधननी शोध करे छे, अने भाग्ययोगे संस्मा वह धमेनुं स्वरूप समजवाने तेमज समजीने तेने सेववाने ते समर्थ थड़ शके छे, संसारनुं स्वरूप विचारीने तेनो खरी ख्याल लाववाने माटे ज्ञानी पुरुषोए जनित्य, अशरणादिक बार भावनाओ शासमां कही छे तेनु यथार्थ मनन करतां भरत, मरुदेवी, निम राजि, म-ग्रुख अनेक भव्य जीवो मुक्तिपदने पाम्या छे. माटे उक्त भावना-ओनुं स्वरूप लेश मात्र बतावनुं अत्र दुरस्त धार्य छे.

१. अनित्य देह, छक्ष्मी अने कुढुंब विगेरे सर्व संयोगिक व-स्तुओनो वियोग थया विना रहेबानो नथी. सर्व अंतक काळ सर्व-त्र परिश्रमण करी रह्यों छे. काळने काळनो भय छे एम समजीने जीव स्वहित साधवं.

र्ने, अक्टूण-र्वजन देह के छह्मी वैकी कोइपण परभव जता

जीवने संदायभूत थेंद बेकता नथी. देह के इदुनने गमे तेटली पोष्या छतां अंते आपणां यतां नथी. स्वायी नित्य मित्रनी पेरे ते छेत्रटे छेह दे छे. तेथी जूहार मित्रनी जेवा परम उपकारी धर्मतुंज शरण करवं योग्य छे.

मनुष्य अने देव गतिमां गमन करे छे, जेणे जेवं शुभाशुभ कर्म जेवा भावधी कर्य होय छे, तेने तेवं शुभाशुभ फळ तेनी रात भोगववंज पढे छे. विविध कर्म बशात जीवो नटवत विविध चेष्टाओं करे छे. कर्मने वशवती जीवोनी तेनी विचित्र अवस्था जोइने तत्त्व दृष्टि मुं आइ जता नथी, कारण के तत्त्व दृष्टि पुरुषो तेनां मूळ कारणने सारी रीते समजता होवाथी मनवं समाधान करी शक छे, अतत्त्व दृष्टि जनो एवी रीते मनवं समाधान करी शकता नथी, तेथीज दृश्वमय संसारमां पण रच्या पच्या रहे छे.

साथे फक्त पुण्य अने पापज रहेवाथी जीव तद्भुसारे मुख दुःख्ने पामे छे. जीव जेवां जेवां कमें करे छे, तेवां तेवांज आ भवमां के परभवमां फळ भोगवे छे. तेमां कोइ कंइ पण मिध्या करी शकतुं नथी. छतां आणे मारुं सुधार्यु अथवा आणे मारुं बगाइयुं, एम जीव मुख्याथी मानी बेसे छे. तथा एकनी उपर राग अने बीजा उपर

द्वेष करीने नाहक दुःख पेदा करे छे, तत्त्वथी जोता आपणुं सुधार-

- 4. अन्यत्व देह, लक्ष्मी के कुटुंबने आत्मानी साथे अत्यंत संबंध नथी, फक्त अल्प काळने माटे संयोग संबंध थयेलो छे के बेन्नो अवश्य वियोग थवानो छे. अरे नित्य मित्र समान देह पण अंते आपणुं थतुं नथी तो अन्यतुं तो कहेबुंज थुं? बळी देह लक्ष्मी विगेन्रोंनो अने आत्मानो स्वभाव भिन्न भिन्न छे. देह, लक्ष्मी विगेरे जड वस्तुओं छे, त्यारे आत्मा चैतन्य युक्त छे. देह विगेरे वस्तुओं क्षण विनाशी छे अने आत्मा तो अचळ अविनाशी छे एम समजी देहा-दिक संबंधी मिथ्या मोह तजीने निर्मळ झान, दर्शन, अने चारित्रा-दिक आत्मानी सहज संपत्ति संप्राप्त करवा प्रयत्न करवो जोइये.
- ६. अशुचि—आ शरीर मळ मूत्रादिक महा अशुचिथी भरेछुं छे पुरुषने नवद्वारे अने स्नीने द्वादश द्वारे अशुचि वहेती रहे छे. तेमज सडन, पडन अने विध्वंसनज जेनी धर्म छे एवा आ जड देहमां कोण विवेकशील ग्रुंझाय ? आवा असार अस्थिर अने अशुचिमय देहनी खातर कोण तत्वदृष्टि पुरुष पापनो पोटलो शिरपर उठावे ? आवा अशुचिमय देहमां विवेकी हंस तो राचेज निहं, केवळ निर्विवेकी—भूंड जेवाज राची शके, अने तेनी खातर अनेक पाप करीने पण खुशी थाय.

अभिने-हिंसा, असत्य, अदंत, अब्रह्म, अने असंतोष महुन तथा विषय केषायादिक संबंधी सर्व विरुद्ध क्रिया आत्माने सहुन हुन स्वार्थ अंतरायभूत होवायी आश्रव संज्ञायी ओळलाय छे.
कंडक सारा आञ्चयथी मन, वचन, अने कायावडे क्रिया करवायी
पुण्याश्रव अने माठा आञ्चयथी पापाश्रव थाय छे. पुण्याश्रवथी
कंडक सुलनी मतीति अने पापाश्रवथी दुःखनीज मतीति थाय छे.
सोनानी के लोढानी बेडी जेवा बंने आश्रवोने विवेकी पुरुष संबर
वहे छेटी नके छे.

द संवर—आलोक के परलोक संवंधी भोगाशंसा तजीने केवळ आत्म कल्याणार्थ शुद्ध चारित्र धर्मनुं सेवन करीने आश्रवनो अट-काव करवो तेनुं नाम संवर छे. गमे तेवा अनुकूळ के प्रतिकृळ परीषहो सहन करवा, प्रवचन मातानुं यथार्थ पालन करनुं. क्षमादिक दश्विध यतिधर्मनुं सेवन करनुं. मेत्री, मुदितादिक भावना चतुष्ट्य अथवा अनित्यादिक प्रस्तुत भावनानुं विवेकथी परिशीलन करनुं, अने सामायकादिक चारित्र मार्गनुं निष्कपटपणे सेवन करनुं ए संवर सर्व मुखकारी छे, एम समजी यथाशकि तेमां उद्यम करवो, अथवा तेवा सन्मार्गनी वनती सहाय के अनुमा दना करवोज उचित छे. संवर योगे चिलातिपुत्र दृद्धप्र-हारी अने कंड्राजों जेवा निर्देय जीवोनां पण कल्याण थयां छे. संवर विना करापि आ दुःलमय संसारनो छेडो पामी शकाय नहिं,

ः ं ६ निर्जरा-जेथीः पूर्व संचित कर्मनो , शय करी नाकाप एटले के आत्माने कर्मथी जुदो पाडी गुक्त करी शकाय तेतुं नाम निर्जरा छे. तेत्री निर्जरा समेता युक्तः तपु करवाथी थाय छे. इक् जपना छ वाह्य अने छ अभ्यंतर मळीने १२ वार भेद छे. विवेक्शी कर-वामां आवतो बाह्य तप अभ्यंतर तपनी पुष्टि करी आत्मीने अल्यंत निर्मळ करे छे. तथी दरेक आत्माधी जनोए ते अक्ट्रय आदरना योग्य छे. अनंशन-उपवासादि, ऊनोदरी-अल्पानीजन, हति सं-क्षेप-नियमित भोगोपभोग, रस त्याग-अग्रुक रसनी लोखपतानी त्याग्, काय्क्लेश-केश लोच, आतापनादि, अने संलीनता-आस-नजय प्रमुख ए बाह्य तपना ६ छ भेद छे. तेमज प्रायश्चित-पापनी आलोचना, विनय-गुणानुराग, वैयाद्रत्य-सेवा भक्ति, स्वाध्याय, ध्यान, अने काऊसग्ग-देहादिक परथी मूछीनो त्याग ए प्रमाण अस्यंतर तपना छ भेद मळी तपना बार भेद कहा छे. जेम प्रबंध अग्निना तापथी सुवर्णनी शुद्धि थाय छे तेम पूर्वोक्त पर्म पुरुष प्रणीत तपना सम्यग् आराधनथी आत्मानी विश्रुद्धि यह सके छे, एम समजीने उक्त तपतुं सेवन करवा सावधान रहेवुं.

१० लोक स्वभाव—ऊर्ध्व, अधी अने तीर्छी लोकतुं स्वरूप बासमां जेवं कहुं छे तेवं विचारवं. प्होला सम्बद्धीने अने केहे हाथ दहने ऊभेला पुरुषनी जेवी आकृति संपूर्ण लोकनी कहेली छे. ऊर्ध्व लोकमां चराचर ज्योतिष चक्र, बार देवलोक, नव प्रवेपक, पाँच अनुतार विमान तथा सिद्धसीला रहेली छे. अपो लोकमां न्य-तर, श्रीणन्यतर, रेक् अवनपति, तेपज सात नर्क पृथ्वीओ रहेली छे, अने तीच्छी लोकमां असंख्याता द्वीप तथा असंख्याता समुद्र जंबद्वीपनी फरतां बल्याकीरे आदी रहेला छे. आ भावनाथी सम-कितनी हटता थाय छे.

११ बोधि दुर्लभ-इंद्र के चक्रवती जेवी संपत्ति करतां पण जी-वने आ संसार चक्रमां भगतां स्त्रमिक्ति रत्ननी प्राप्ति थवी परम दुर्लभ छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्मतुं स्तरुप यथार्थ जाणवार्थी अने जाणीने तेने सम्यग् आद्रवायीज सम्यक्त्व गुणनी प्राप्ति यह शके छे, समिकतवंतनीज सर्व करणी लेखे पडे छे—मोक्ष महाफळने आपे छे, एम समजीने मोक्षार्थी सज्जनोए प्रथम समिकतनीज भावना हद करवानी जरुर छे. शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, अने आस्तिकता ए पांच समिकतनां श्रेष्ट लक्षण छे. समिकतवंतनुं ज्ञान यथार्थ होय छे. तेथी ते हिताहित, लाभालाभ, अने भक्ष्याभक्ष्यादिने यथार्थ समजे छे.

१२ अरिहंत भाषित धर्म-राग, द्वेष अने मोहादिक सर्व दोष रहित सर्वे प्रभुनी सातिशय वाणीथी अनेक जीवोना हृदगत संशयोनो उच्छेद थइ जाय छे अने तथी, अनेक भव्यो स्वपरहित साधवाने सन्भुख थाय छे. एकांत हितकारी म-

श्रुनी वाणी भव्य चकोरोने अमृतयी पुण् मीठी छागे छे तेथी तेनो कदापि अभावो यतोज नथी. युष्करावर्त मेघनी जेवा अधुना हितोपदेशथी भव्य जीवो पोतातुं सर्ह हित यथार्थ समजीने सेवी शकें छे, अने तेथीज तेओ सर्व पाप क्रियानो अनुक्रमे परीहार करीने निष्पाप एवा मोक्ष मार्गतुं आराधन करवा उनमाळ थाय छे. विश्व जनोने प्वित्र शासनना रागी करवानी अपूर्व भावनाथीज अरिहतपणुं प्राप्त थइ शके छे, अने तेवुं परमपद प्राप्त करीने ते भहानुभाव पूर्व भावनानुसारे त्रिध्वनवती जनोने पवित्र हितोपदेश आपी तेमने साक्षात् शासनना रागी करे छै. तेथी सिद्ध थाय छे के पूर्वोक्त सद्भावना आपणी भविष्यनी उन्नतिनां अवध्य वीजरुप छे. वर्तमान काळमां रसायन शास्त्रीओं पण अनुकूळ भूमिंमां वावना योग्य बीज-वस्तुओनो विविध भावना (संस्कार) दहने वाबी ते वडे इच्छित फळने मेळवी शके छे तो सर्वज्ञ सर्वदर्शी सर्वशक्ति सं-यम्-पूर्णानंदी परमात्मा प्रणीत पवित्र भावना भावित जनो स्वपुरु-षार्थ योगे केम अभीष्ट फळ मेळवी न शके ? अवश्य मेळवी शकेज. फक्त पूर्वोक्त भावना शुद्ध हृदयथीज भाववी जोइये अने एम थाय तोज ते शुद्ध भावनाना वळथी भव्य जीवो आ भयंकर भव दुःखनो सर्वथा अंत करीने अक्षय सुखने मुखे साधी शके.

४२ सारभूत एवा सद् विवेकनुंज सेवन कर. 'सदसद् विवेचनं विवेकः'

ंसत्यांसत्यनो सम्यग् विचार पूर्वक निर्णय करनो के आतो तत्त्वभूतज छे अने आ अतत्त्वरुप छे. आतो संपूर्णज छे. अने वा अपूर्ण छे. आतो आदरवा योग्यज छे, अने आ तजवा यो-न्य छे. आतो हितकारीज छे, अने आ अहितकारी छे. आवुं कर्र्यज चचित छे, अने आवुं अनुचित छे. आगांज लाभ समायेलो छे. आमां नथीज अथवा गेरलाभ छे आतो गुणवानज छे अने आ नधी. अथवा दोषवान् छे, आवी वस्तुओज भक्ष्य छे अने आवी अमध्य छे. आवी वस्तुओज पेय (पीवा योग्य) छे अने आवी अपेय छे. आवा लक्षणवाळा जीवज होय छे, अने आवां लक्षण विनाना अजीवज होय छे. आतुं नामज पुण्य, अने आतुं नाम ते पाप, आतुं नाम ते आश्रव अने आतुं नाम संवर, आवा प-रिणामथी कर्मनो बंध थाय छे, अने आवा परिणामथी निर्जरा अथवा कर्पक्षय मोक्ष थाय छे. आवी रीते आत्महित संवंधी कंइक वारीकताथी अवलोकन करतां विवेक दीपक प्रगटे छे. जे अनादि अज्ञान अंधकारनो नाश करी नांखे छे अने घटमां समाधिकारक ज्ञान प्रकाशने विस्तारे छे.

अंतर राग, द्वेष, अने मोहादिक महा विकारोने छक्षमां राखीने

जेम निर्मिकारता भाष्त थाय तेम मध्यस्थपणे विचार पूर्वक वर्तद्वार्था अने समताभावित सत् पुरुषोना सत्त समागमथी अनादि अविवे-कर्ना पण अंत आवे छे अने हिताहित्तुं यथार्थ भान करावनार विवेकनो उद्य थाय छे. जेने विवेकनी खेबना नथी तेने ते भाष्त पण थतो नथी.

ें सद्विके जागवाथी जीवने सत्य ब्रस्तुतुं यथार्थ भनि थतां खोटी असत्य वस्तुं उपरथी सहेजें अभावं प्रश्चि पेदा थाय छें अने तेम थवाथी साची वस्तु उपर जोइए तेवी रुचि, मीति अने श्रद्धा जागवाथी तेनो सचोट स्वीकार थइ शके छे. अभ्यास अभ्या-सने वधारेज छे तथी विवेकवंत आगळ उपर गुणमां सारी वधी शके छे. विवेक शून्यने एवो संभवज नथी. माटे प्रथम रागद्वेषादिक अंतर विकारोने हठावी मध्यस्थतादिक ग्रुणनो अभ्यास करीने आ-त्मार्थीजनोए विवेक जगाववानी जरुर छे. श्रीमंद् यशोविजयजी म-हाराजाए यथार्थ कहुं छे के-रिव दूजो तीजो नयन, अंतर भावि प्रकाश। करो धन्ध सब परिहरी, एक विवेक अभ्यास ॥ अंतरमां प्रकाश करीने पोतानी ग्रण-संपत्तिने प्रगट-वतावनार विवेक बीजो सूर्य अने त्री छं छोचन छे. एम समजीने श्राणाजनोए ओर उपाधिने तजीने एक विवेकनोज अभ्यास करवो उचित छे. विवेकथी सर्व गुणनी सहजे प्राप्ति **थ**शे, पण मथन अविवेकनां कारणो सदंतर दूर करवां जोइये.

४३ धर्मरुपी संबल बने तेटलुं साथे लइ ले. 🧦

जीवने भवांतर जतां कोइपण परमार्थथी सहायभूत होय तो ते केवळ धर्मज छे. अने तेथी दरेक कल्याण-अधीए ते अवश्य आरा-धवा योग्यज छे. उक्त धर्म साक्षात् करवाथी, कराववाथी के अनुमोदवाथी आराधी शकाय छे, परंतु शक्ति छतां तेनी उपेक्षाः करवाथी अथवा गमे तेवां कल्पित कारणो वडे तेनी मर्यादा उछंघ-वाथी विराधना थाय छे.

जेम दूर गामांतर जतां देहना निर्वाह माटे प्रथमथीज भातानीः सगवड करी राखवामां आवे छे तेम भवांतर जतां जीवे जरूर धर्मः संवल प्रथमथीज तैयार करी राखवुं जोइये. धर्म संवल विना जीचने भवांतरमां भारे विपत्ति सहन करवी पडे छे. अने धर्म संवल्धः वडे छुखे समाधिये सर्व संपत्ति साधी शकाय छे.

आ भयंकर भवाटवीमां शुद्धाशय युक्त करेलो धर्म एक उक्त-मोक्तम भोमिया तरीके भारे उपयोगी थाय छे. यावत् ते क्षेमकुशके मोक्ष नगरे प्होंचाडी दे छे.

अहिंसा (स्वच्छंद्पणे कोइना माण निहं लेवारूप दया), सत्क (हित मित अने मिय भाषण), अस्तेय (अनीतिथी कोइनुं कंइपण्ड इरण निहं करवा रूप ममाणिकता), ब्रद्मचर्य (विषय व्यावृत्तिरूपः

सदाचार), अने असंगता मूर्च्छीरहित पणुं, सहज संतोष, (निःस्पृ-द्धता) विगेरे सद्व्रतोनुं सारी रीते सेवन करवाथी सद्गतिनी अव-इय प्राप्ति थाय छे. एम सर्व शास्त्रकारो एके अवाजे कहे छे. आ शिवाय ' अहिंसा परमो धर्मः ' ए सुद्रालेख खास लक्षमां रा-न्वीने, मांस, मदिरा, मध, माखण, मूलक-मूळादिक भूमिकंद रिंगण विंगण आदिक कामोद्दीपक अने बहुवीज फळ तथा रात्रिभोजन विगेरे अनेक अभध्य वस्तुओतुं पण शास्त्रकारोए वर्जन करवा भार दुइने कहुं छे. आ प्रमाणे अहिंसादिक महा वतोने पुष्टिकारी जे जे नियमावळी शास्त्रकारोए धर्मनी दृद्धि माटे बतावी छे. ते ते लक्षमां छइने दरेक धर्मावलंबी सज्जनोए तेनो यथाशक्ति अमल करवो खास अगत्यनो छे. केमके यथाशाक्ति यतनीयं शुभे-स्वपर हितकारी अपुभ कार्यमां छती शक्ति नहि गोपवतां यथाशक्ति यत करवो ए आपणी फरजज छे.

-४४ मनुष्य भव फरी फरी मळवो मुस्केल छे, एम समजी शीघ्र स्वहित साधीले.

मनुष्य भवनी दुर्लभता एटला माटे स्वीकारवामां आवी छे के ते वीना कोई पण वीजी गतिमां सम्यग् ज्ञान-क्रियानुं अथवा स-म्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्र रुपी रत्नन्नयीनुं यथार्थ आराधन करीने कोइ पण जीव कदापि पण ते ज भवमां सर्व घाति—अघाति कर्मनो सर्वथा अंत करीने अक्षय अविनाशी एवं मोक्ष सुख साध-वाने समर्थ थइ शके निह अने तथी ज आवो मंतुष्य भव देवने पण दुर्छभ कह्यों छे. अर्थीत् सम्यग् दृष्टि देवो पण मोक्ष गतिना द्वार रूप मनुष्य भवनी इच्छा करे छे अने तेवो मानव भव पाभीने तेने सार्थक करवा समजमां आव्या वाद वनतो प्रयत्न पण करे छे.

तेवो मानव भव साक्षात् पामीने मोक्षार्थां जनोए मोक्ष साध-नमां क्षण मात्र पण प्रमाद करवो योग्य नथी। प्रमादज प्राणीयोनो कद्यामां कट्टो दुञ्मन छे, जेथी छोको प्राप्त सामग्रीने पण निष्फळ करी नांखे छे.

प्रमादने परवश पड़ी जे लोको मानवभवने निष्फळ करे छे ते-मने आ संसार चक्रमां परिभ्रमण करतां ते पुनः प्राप्त थवो अति दुर्लभ छे.

आधीज उत्तराध्ययन सूत्रमां आ मानवभव दश दृष्टांते दुर्लभ कहां छे. एटछुंज निह पण भगवान श्री वीरप्रश्रुए पोताना ग्रुख्य शिष्य श्री गौतम गणधरने संवोधीने प्रगट रोत कहुं छे के 'एक क्षणमात्र पण प्रमाद निह करवो '—आ व क्य केटछुं वधुं अर्थ सूचक छे ? तेमांथी आपणने केटलो वधो वोध लेवानो छे ? छतां जो आ-पणे सुखशील थइने प्रमादाचरण नजशुं. निह तो छेत्रट आपणने के-टुछं वधुं शोचबुं पडशे ? तेनो इत्याल पण आवदो अत्यारे शुक्तलके: ज्ञानी पुरुषो ययार्थ कहे छे के क्षणिक सुखने माटे लांवा का-ळर्सु सुख खोइ देवुं जोइये निहं. पण प्रमादने परवश पडेला प्राणीयोः एमन को छे.

' क्षण लाखेणो जाय '-आ अमूल्य मानवभवनो वखत एळे. गुमाववांनो मधी. सारां सुकृतोवडे ते शीघ्र सफल करी लेवानो छे...

धर्महीन मानवनो भव निष्फळ जाय छे अने धर्म युक्तनो ते सफळ थाय छे. धर्महीन माणसो भत्रान्तरमां भारे दुःखना भागीः याय छे, अने धर्मचूस्त माणसो अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके छै, 'देहे दु:खं महाफलं '-खाधीनपणे आत्म कल्याणने माटे देहतुं दमन करवुं बहु हितकारी छे, अन्यथा पराधीनपणे तो दमा-बुंज पडशे, अने एम करतां पण अभीष्ट सुखनी प्राप्ति थइ शकशे नहिं. स्वाधीनपणे तो देहने दमवाथी यथेष्ठ सुख मळी शकशे. ⁴ देहस्य सारं व्रत घारणं च '-यथाशक्ति सद्वत घारण करवा-श्रीज आ मानवदेहनी सार्थकता शास्त्रकार स्त्रीकारे छे, ते विना तो * अजागल स्तनस्येव, तस्य जन्म निरर्थकम् '-वकरीना ग-ळामांना आंचळनी पेठे तेनो जन्म मात्र निरर्थकज छे. जेओ केवळ बिवयकष्राद्यादि प्रमादने वश थइ पोतानो मानवभव व्यर्थ गुपावे छे, तेओ सोनाना थाळमां कस्तूरीने बदले धूळ भरे छे, अमृतनुं पान करवाने वदले तेना वडे पादशोच करे छे, श्रेष्ट हाथीनी पासे लाकडां

बहावे छे, अने चिन्तामणिरत्नने कागडाने उडाडवा माटे हाथमांथी फ़ोंकी देछे.—आवी मृखीइ करे छे. वळी जे स्वच्छंद वर्तनथी क्षणिक मुखने माटे अमृल्य मानवभवने हारे छे ते मध्य दरियामां एक फ़रू-क्कने माटे तारक वहाणने भागी नांखे छे, एक खींटीने माटे आखा महेलने पाडी नाखे छे, अने एक दोराने माटे मोतीनाहारने तोडी नांखे छे. आम आप डहापण करीने अंते पश्चातापनाज भागी थाय छे. आवो पश्चाताप करवानो प्रसंग न आवे माटे स्वहित समज पूर्वक साधवाने सावधान थइ रहेवुं जोइये. बाह्मकार योग्य फरमावे छे के ज्यां सुधीमां जरा आवी पीडे निहं, विविध व्याधिओ दृद्धिगत थाय निहं, अने इंद्रियोनुं वळ घटे निहं त्यां सुधीमां वने तेटलुं धर्मसाधन करी लेवुं. पछी परवशपणे साधन करवुं भारे सुक्केल थइ पडको.

४५ पुरुषार्थं वहेज सर्व कार्य सिद्ध थाय छे माटे पुरुषार्थनेज अंगीकार कर.

पुरुषार्थहीन एवा प्रमादी छोकोना मनना विचार सनमांज रही जाय छे. परंतु पुरुषार्थ युक्त प्रमाद रहित पुरुषोना सात्विक विचार जोइने तेनी भाग्यदेवी पण एवाज विचार करे छे, तेथी ते प्रायः सफलज थाय छे.

पुरुषार्थवंतने दुनियामां कंइपण असाध्य नथी.

पुरुषार्थवंतने मिथ्या आडंवर रचवानी जरुर नथी, तेमज तेने तेवो आडंवर मियं पण होतो नथी. तेओं करे छे घणुं अने वोलें छें थोडं. तेओ जे कंइ स्वपर हितकारी कार्य करे छे ते फक्त स्वकर्तव्य समजीनेज करे छे. तेथी तेमने स्वोत्कर्ष के परापकर्ष करवाना वक्त व्यवहारमां उत्तरवुं पडतुं नथी, अने सार पण एज छे.

पुरुषार्थवंतज सत्य धर्मनुं शोधन या दोहन करीने तेनुं, यथार्थ सेवन करी शके छे. पुरुषार्थहीन लोको तो अंध श्रद्धार्थी केवल जूनी रुढीने अनुसरीनेज चालवावाला होय छे, तेथी तेमां कंइ विशेष लाभ मेळवी शकता नथी. पुरुषार्थ विना कोइएण कार्य परिपूर्ण थइ शकतुं नथी. पूर्वोक्त पांचे प्रकारना प्रमादने तजीने सावधानपणे स्वपरहित साधनारज पुरुषार्थवंत कहेवाय छे. अने उक्त प्रमादने पराधीन थइ पडेला लोको पुरुषार्थहीन कहेवाय छे.

पुरुषार्थन माणसतुं र्वहं जीवन छे, तेथी पुरुषार्थहीन माणस पशु समानज छे. पुरुषार्थहीन, मनुष्यभव पामीने उलदं लेवानुं देवुं करे छे:

पुरुषार्थवंत पोताना पवित्र वर्तनथी आ भू लोकमां पण दैवी जीवन जीवीने अंते अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे.

आपणे धारीये तो पूर्वोक्त ममादने तजी खरो पुरुषार्थ धारी आपणा ममादी बंधुओने पण पुरुषार्थवंत करी सक्रीये. पण ते स्व रष्ट्रांतथीज साक्षात् रहेणीए रहेवाथीजः नहिं के केवळ ल्खा कहेणीं मात्रथी...

आपणे घारीये तो आपणे पोतें सत्य पुरुषार्थथी अरिहतः सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय के साधुपदने साक्षात् पामी शकीये, तेमज तेवी पित्र पद्दी पामीने अन्य अधिकारी जीवोने तेवाज करी शकीये. जे जे पूर्वोक्त पित्र पद्दीने पाप्त थया छे ते ते सर्व सत्य पुरुषार्थने साधीनेज; तो आपणे पण पुरुषार्थनेडे तेवा केम थइ शकिये निर्ह ? पुरुपार्थनेडेज पूर्वे अनेक साधु, साध्नी, श्रानक, अने श्राविकाओं प्रसिद्धिमां आच्या छे. तेथी पुर्वोक्त पमाद रहित थइने स्व स्व कर्तेच्य कर्म करवाने सावधान रहेवं एज आत्म उन्नतिने मादे प्रथम आन्वश्यक छे. एज खरो धर्म छे. अने एज सत्य साधन छे.

एका अभमत्त पुरुषार्थवंतः पुरुषोजः खरेखरः स्वपरहित सार्थीः अके छे, पण ममादशील एवा पुरुषार्थहीन जनो कंइ हित सार्थीः शकता नथी.

पुरुषार्थवंत यहस्य प्रोतातुं यहतंत्र, न्यायः नीतिने अनुस्री प्रमान् णिकपणेन चलावे छे त्यारे पुरुषार्थहीन तथा विरुद्धवर्ती अपमाणिकः प्रेणेन चलावे छे. पुरुषार्थवंत सुखु दुःख्वमां समभावे रहे छे, त्यारे पुरुषार्थहीत हर्प-विवाद धारे छे. पुरुषार्थवंत हिंमतथी अने अद्धारी विपत्तिनी सामा थइ लगार पण स्वधमे कर्तव्यथी चूकता नथी, पणः युरुवार्थहीन तो तेवे वखते दीनता धारण करीने कर्तव्य स्रष्टन थाय छे. पुरुवार्थहीन कर्तव्य कर्मनो अनादर करीने सुखशील थइ, अध्ये या कामनोज आदर करे छे. पुरुवार्थवंत तो गमे तेवा संयो-गोमां प्रमाद रहित धर्मने ज प्रधान पद आपे छे.

पुरुषार्थवंत साधुज अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने अ-संगतादिक महाव्रतोने अलंड-अतिचार रहित पाळीने स्व चारित्रने छज्वळ करे छे त्यारे पुरुषार्थहीन साधु तेवां महाव्रत लइने स्वच्छंद व्यतिनथी तेमने खंडी विराधी स्वचारित्रने कलंकित करी अंते अधो-जातिनाज भागी थाय छे.

पुरुषार्थवंत साधुज विविध पंकारना अभिग्रहने निः हंपृहताथी अलंड पाळी नाना प्रकारनी लब्धियोने पेदा करे छे, पण तेनो क-द्यापि गेर उपयोग करता नथी. पुरुषार्थहीनमां तथी अत्रिपरीतज 'जोवामां आवशे.

पुरुषार्थवंत साधुज सम्यग् ज्ञान अने सम्यक् क्रियानी यथा-योग्य सहायथी रत्नत्रयीनुं आराधन करीने अल्प काळमां अक्षय अ-विनाशी पदने पामे छे. अने पुरुषार्थहीन साधु तो मोक्षना साधन भूत ज्ञानिक्रयामांना कोइनी इच्छानुसार उपेक्षा करी रत्नत्रयीने वि-यांथी पूर्वीक प्रमादने परवश पडी दीर्घकाळ संसार परिश्रम-यां करे छे. सत्य पुरुषार्थवंत साधुज छिद्र रहित प्रवहणनी पेरे आ संसार समुद्रने सुखे तरी जइ स्व परनो उद्धार करी शके छे. पुरुषार्थहीन तो पथ्यरनी पेरे स्वपरने डुवावेज छे.

कोइपण मोक्षाथींए प्वीक्तं पुरुषार्थवंत पुरुषोनोज आश्रय कर-वों योग्य छे. केमके तेथी एवी पुरुषार्थ पामवी सुलभ थइ पडेछे.

पुरुवार्थवंत पुरुपनी दृत्ति सिंहनी जेवी अने पुरुवार्थहीननी दृत्ति खाननी जेवीज होय छे. पहेलानी दृत्ति उंची अने वीजानी केवळ नीची होय छे.

पुरुवार्थवंत गमे तेवी विवम स्थितिमां पण सिंहनी जेन स्व इष्ट कार्य साथे छे पण पुरुवार्थहीन तेन कदापि करी शकतोज नथी. सिंहने कोइए बाग मुर्धु होय तो ते तेतुं उत्पत्ति स्थान शोधीने तेनेज मारे छैं. पांतु स्थान तो तेने मारवामां आवेला पावाग विगरेनेज काटवा (करडवा) जाय छे.

एवी रीत कंड्यण दुःख उत्यन थतां पुरुवार्थवंत तेतुं खरुं का-रण तपासीने ते कारणने न दूर करे छे त्यारे पुरुवार्थहीन—कायर माणस तो तेनी कंड्यण आगळ पाछळ तपास नहिं करतां ते दुःख डमरज रीप करे छे. अने एम करवाशी कंड् मुख तो मळतुं नथी पण डलहुं दुःखज दृद्धि पामे छे. सर्वज्ञ-सर्वदर्शी भगवान कहे छे के कोई कोईनुं बगाइतुं के सुधारतुं नथी. वीजा तो केवळ निमित्त मात्रज छे. पोतेज करेलां कर्मानुसारे पाणी दुःख सुखने पामे छे. तेमां अन्य उपर अज्ञानपणे आरोप मूकवो मिध्या छे. एम समजीने खरा पुरुषार्थवंत पुरुषो प्राप्त दुःखना मूळ कारणभूत कर्मने छक्षमां राखीने तेनेज निर्मूळ करवा प्रयत्न करे छे, अने तेज युक्त छे, छतां कायर अज्ञानी माणसो तेम करी शकता नथी.

पुरुषार्थवंत स्नाः पुरुषज परमार्थभूत एवा मोक्ष मार्गने साथी। शके छे अने धर्म एज खरो पुरुषार्थ छे. एम समजी मोक्षार्थी जनोए। सर्वेद्र भाषित धर्मतुं यथाशक्ति आराधन करवा अवदा उजमाळ रहेवुं युक्त छे.

पूर्व पुन्ययोगे मनुष्य भवादिक श्रुभ सामग्रीने पामीने अने सद् ग्रवीदिकनो विशिष्ट योग पामीने जे स्वहित साधी छेवानी उपेक्षा करे छे तेना पाछळथी केवा हाल यशे. ते संबंधी श्री धनेश्वरमुरी महाराज श्री शत्रुंजय महातम्यमां आ प्रमाणे कहे छे:—

धर्मेणाधिगतैश्वर्यो, धर्म मेव निहन्ति यः ॥ कथं शुभायति भीवीं, स स्वामिद्रोहपातकी ॥ १॥

धर्मवा प्रभावेज सर्व संपदाते पाम्या छतां जे नरावम धर्मनोजः लोग करे छे ते स्वामीद्रोही पापी भविष्यमां केवी रीते सुखी थईः शक्तेः शाः भवमां पण अत्यंत हितकारी धर्मनी कृपाथीज सर्व-सा-हेवी पासीते जो तेज परोपकारी धर्मनोः ध्वंस करवामां. आवशे तो स्वामीद्रोह करनार ते नीच पापीतुं कल्याण पछी शिःरीते थह शकः शें. र खरुं जोतां एवा पापी धर्म द्रोहीनुं भविष्य सुध्रवुं खरेखर दुः शक्यज छेः

जे माणसने आवां हृद्य वेधक शास्त्र वचनोथी पोतानां करें हां पापोनो पुरेपुरी पश्चाताप थाय छे अने फरी एवां पाप नाई कर-वानी पवित्र बुद्धिथी सद्गुरु समीपे प्रायिश्वत्त (करेलां पापोनी शुद्धि) करवा इच्छा थाय छे. एवा पण योग्य जीव उपर कृपाछ धर्म महाराज जरुर कृपा कटाझ करे छे. एटले एवा जीवोनों पण उद्धार आवी रीते थई शके छे.

परंतु पाप करीने खुशी थनारा, अथवा लोक रंजनने माटे फ-क्त मोढेथीन वलापो करनारा अथवा कपट रचनाथी स्वदोषने छुपा-वनारा एवा अयोग्य अने दंभीजनो उपर गुण्ड अने गुण पक्ष-पाती धर्म महाराजानी मेहेरवानी भविष्यकालमां पण कदापि होइ सकेज नहिं.

एम समजी नीच, नादान, अने निर्लं ज्ञा एवा ना लायकजनोनी संगति तथा तेमना अनर्थकारी आचार विचारने तजी दहने, उदार, दमाळ, अने लज्जाळ एवा सुपात्रनीज संगत-अथवा तेमना हितकारी आचार विचारने आदरी आपणे परम उपकारी धर्म महाराजनी कृपाथी माप्त करेल सर्व शुभ सामग्रीनी सफलता करी शकीये एवो सत् पुरुषार्थ सेववो एज आपणुं मुख्य कर्तव्य छे. सर्व ममाद रहित सत् पुरुषार्थ जपरज आपणी, आपणा साधमीओनी, तेमज समस्तजनोनी खरी उन्नतिनो आधार छे. ए वात खुव लक्षमां रा-खीनेज आपणुं व्यवहार तंत्र चलाववुं योग्य छे.

इत्यंलम्.

सुमति अने चारित्रराजनो सुखदायक संवादः

प्रेक्षक भाइयो अने ब्हेनो ? आजे हुं तमने एक अतिवोधदायक संवाद संभळाववा इच्छुंछुं तेथी प्रथम तेमां खास उद्देश कराएछां पा-त्रोनी तमने कंइक विशेष समज आपवी दुरस्त थारुं छुं. अने आशा राखुंछुं के ते सर्व वात तमे छक्षमां राखी तेमांथी एक उत्तम प्रका-रनो वोध ग्रहण करशो.

एकान्त हितबुद्धिथीज मेराइने तमने आ वोधदायक मर्वध संभ-ळाववा मारी खास उत्कंटा थइ आवी छे ते कंइक तमारा भाग्य-तीज मली निशानी होय एम हुं मानुं छुं. हवे हुं मुहानी वात तमने जणांचुं छुं. दरेक आत्माने पोताना सारा नरसा चरित्र (आचरण) ना प्रयाणमां मतिनुं तारतम्य होयज छे. छतां सामान्य रीते सारां

चरित्रवाळाने मुख्यताए सुमतिनो अने माठां आचरणवाळाने मुख्य--ताए कुमतिनोज संग होय एम मनाय छे तेथी तेमनो अरसपरस प्र-संगवशात संवाद थयाज करे छे, तेनी जीज्ञास भाइ ब्हेनोने कंइक झांखी आपवानी बुद्धिथी स्व क्षयोपश्रमानुसारे आ उल्लेख घडयो छे. वीतराग प्रभुनां पवित्र वचनानुसारे विवेकयुक्त वर्तन करनार सत्चारित्रपात्र पुरुष जगत्मां एक महाराजाथी पण अधिक पूजाय-मनाय छे, तेथी तेवा चारित्रवंतने सत् (साचा) चारित्रराज कहेवामां कंइपण वाघ आवतो नथी. पण जेओ वीतराग वचनथी विरुद्ध व-र्तन चलावीने दंभ दृत्तिथी खदोष गोपनवा माटे लोकमां पूजावा-मनावा माटे तथा स्वगौरव वधारवा माटे अहोनिश मथन करी जग-तुमां चारित्रवंत कहेवडाववानो दावो राखे छे तेओ तो केवळ नाम-नाज महाराजा कहेवाय छे. एवा दंभी चारित्रराजने होळीचा राजा इलोजीनीज उपमा घटी शके छे. आवी हलकी पायरीए पोतानी कुटिलताथी उतरवा करतां सरलताथी सत् चारित्रराजना सेवक थइ रहेवागांज खरी मजा छे, केयके 'सिद्धिः स्याद् रुजुभूतस्य' एवां आगम वचनथी सर्व दंभ रहित-रुज-सरल पुरुषनीज सिद्धि थाय छे. आवी सिद्धांतनी वातने खास लक्षमां राखीने जगत् प्रसिद्ध स्व स्वामी चारित्रराजनी आगळ उपर विडंवना न थाय एवा पवित्र उद्देशयी सुमति, चारित्रराजने संबोधन करे छे.

सुमति—स्वामीनार्थ हैं आपने लज्जायी केंद्र हितकारी वात

पण कही शकती नथी तोपण आजे नम्रपणे कंइक कहेवा धारुं छुं तथी आप खोड़ं नहि लगाडतां सार ग्रही मने उपकृत करशो, एवी मारा अंतरनी इच्छा पुर्वक करेली प्रार्थना स्वीकारी मने असंगोपात वे बोल बोलवानी रजा आपशो?

चारित्रराज—अहो सुमित ! माराथी आटलो अंतर राखवातुं कंइ कारण नथी, तारे कहेबुं होयतो सुखेथी कहे, साची अने हित-कारी वात कहेतां कोनो दिवस फर्यों छे के उलटी रीस चढावशे ?

सुमति—स्वामीनाथ! हवे मने कंइक हिम्मत आवी छे तेथी मारा मननी वात कहेवाने कंइक भाग्यशाळी थइ शकीश. न-हितो—तो—

चारित्रराज—तुं आज सुधी कहेवानो केम विलंब करी रही हती ?

सुमति—स्वामीजी! साचुं कहुं छुं के मारा अंतरमां जेवीने तेवी इच्छा छतां आपने एकान्ते कहेवानी मने जोइए तेवी तकज मळी शकी नथी?

चारित्र०—आज सुधी कहेवानी प्रवळ इच्छा छतां केम तक न मळी शकी? तेतुं कारण हवे संकोच राख्या विना कहे. हुं तारी -उपर प्रसन्न छुं. सुमति—आप मारा स्वामीनाथ मारी उपर सुमसन्न थया छो तथी हुं मारुं अहोभाग्य मानुं छुं. आपनी तेवी मसन्नता सदा बनी रहे तेम खरा जीगरथी इच्छुं छुं, पण साचुं कारण कहेतां मन संको-चाय छे.

चारित्र०--धुंदरी! जराए संकोच राख्या दिना खरुं कारण होय ते कहीदे.

सुमिति—आज सुनी आप छांबो वखत थयां मारी उपेक्षा क-रीने मारी सपत्नी (शोक्य) कुमितनेज वश पडचा हता, ए वात शुं आप आटछामां विसरी गया के जेथी मारे मोढे तेतुं कारण कहे-वडावो छो !

चारित्र - सुमित ! तारा स्थायी समागम विना सर्व कोइ कुमितने वश पडीने खुवार थाय छे ते तो तने सुविदितज छे.

सुमति—हा पण आपे तो चारित्र नाम धारीने अने दुनिया-मां पण जेवोने तेवो दमाम राखीने मारी दिगोवणा करी तेत्रं केम?

चारित्र — सुंदरी ! तुं जे कहे छे ते सत्य छे, मारी दांभिक द्यत्तिने संभारतांज हवे तो मने शरम आहे छे. पण जो तारो समा-गम थयो न होततो शुं जाणीये मारा शाए हाल थात, हशे पाळी-तेवी भूल न थाय माटे अने तारो समानम स्थायी वन्यो रहेशे तो-हुं माहं अहो भाग्य मानीश, हवे तारे जे कांइ हितकारी वात कहे- वी होय ते खुळे मनथी कहे. व्हाळी! साची वात कहेतां कंइ पण संकोच राखीश नहि.

सुमित आपनाथी आवे प्रसंगे आंतरों के संकोच राखवीं तेने तो हवे हुं स्वामीद्रोह के आत्मद्रोहज छे बुं छुं. वधारे शुं कहुं ?

चारित्र०—समित ? थोडा वखतना परिचयथी पण मने तारा सरल स्वभावनी खात्री थयेली छे के तुं जे कंइ कहीश ते एकांत हितकारीन हशे तेनी सत्यताने माटे मने संदेह नथी, तेथी तार्थ खरुं मंतव्य कहे.

सुमिति—में आज सुधी आपनी खरी सेवा बजाववानो लाम मेळव्योज नथी तेने माटे शोचुंछुं पण हवे खरी सेवा बजाववानी सो-नेरी तक हाथ आवेली जाणी मनमां घणोज हर्ष थाय छे ते आपने प्रथम जणावुं छुं.

चारित्र०—मारीज कसूरथी कहाके उपेक्षाधीज तुं माराथी आज सुधी दूर रही अने तथीज तुं मने सबळे रस्ते दोरवानी तक न
साधी शकी तेमां तारो तो तल मात्र एण वांक नथी. वांक मात्र
मारा नसीवनोज छे के जेथी हुं छती सामग्रीये तेनो लाभ लेवा
अत्यार सुधी भाग्यशाळी थइ शक्यो नहि. ते वातनो विचार करतां वहुज शोच थाय छे पण तेवा शोच मात्रथी थुं सरे ? हवे तो
जाग्या त्यांथी सवार.

सुमित—आपन्नं करवाण थाओं! खुद आपनो वांक काढवा करतां मारे तो मारी सपित-कुमितनोज वांक काढवो व्याजवी छे. केमके जो आज सुधी तेणीये आपने भंभेयी न होत अने माराथी विमुख कर्या न होत तो तो आपे क्यारनाए मारी स मुख जोइ मने आवकार आप्यो होत, पण मारी शोक्य खाधानपण एम थवा देज केम ?

चारित्र - सुमित ? तुं तो तारी व लीनताने अचितज कहे छे पंग वांक मात्र मारोज छे. केमके मारुं मन जो मारे हाथ होय तो कुमित वापडी शुं करी दके ? हुं पोतेज ममादशील होवाथी सुमित-ने वश पडी रह्यों हतो.

सुमिति—साहेब सहीसलामत रहो ! हवे आपे आपनी गति जाणी छे तेथी फरी हुं इच्छुं छुं के आप सुमितना वदजामां आ-वशो नहि.

चारित्र - हवे तो में तेणीने देशवटो देवानोज निश्चय क्यों है.

सुमित - कुमितनी गित एवी विचित्र छे के ते गमे त्यांथी गमें तेवी रीते अंतरमां पेशी जीवती डाकणनी जेम जीवतुं जोखम करेंछे. मोटा योगी जनोने पण लाग जोइने छळे छे अने असंस्कारी आ-त्माने तो क्षणवारमां उथलावीने उंधो वाळे छे आवी तेनी कुटीलता जग जाहेर छे, माटे क्षणवार पण तेनो विश्वास करवी जिन्त नथींजे.

चारित्र — मारामां जेटली पात्रता हुशे तेंटला तो ते अवस्य फळदायी थशे साथे एकी पण खात्री छे के तारी सतत संगतिथी मारामां पात्रता पण वधती जशे, तथा पात्रताना प्रमाणमां फळकी. अधिकता थतीज जाशे.

सुमति—हुं अंतःकरणथी इच्छुं छुं के आपने संपूर्ण पात्रता. प्राप्त थाओ, अने आप संपूर्ण सुखमय परमपदना पूर्ण अधिका-री थाओ!

चारित्र०—तारा मुखमांज अमृत वसे छे. केमके तारी साथेना आ वार्ता विनोदमां मने एटलो तो स्वाद आवे छे के तेनी पासे स्व-र्मनां मुख पण निहं जेवां छे. जेने तारो संग थयो नथी तेनं जी-च्युं हुं धूळ जेवुं लेखुं छुं.

सुमित—म्हारी शोक्य-ब्हेने जो आपने अनुभव सुखडी चला-डी नहोत तो आपने मारो स्थायी समागम करवानो विचारज क्यांथी थात ? केम खर्रने ? हुं, धारुं छुं के आप तेना स्वभाविक गुणोने स्व-ध्नमां पण भूछशो निहं, सामी वस्तुथी संपूर्ण कंटाळ्या विना अस्-कमां पूर्ण त्रीति वंथाती नथी.

चारित्र०—'कुमितिथी हुँ खूँव कैटाळ्यो छुं ए निर्विवाद छे, कुमितिना कुसंगवडेज हुं आवैि अनुपंम[ि] मुख—संगतिथी चूक्यो छुँ तथी ते वात हुं स्वप्नभां पण केम भूली शकुं! इंशे हवे एक क्षण पण मने तारो विछोह न पडो, एज मने इष्ट छे. एवी मारी अंतरनी इच्छा फळीभृत थाओ!

सुमिति—स्वामीजी! कुमितना छांवा वखतना परिचयथी आ-पनी उपर जे जे विरुद्ध संस्कार वेसी गया होय ते ते सर्वे निर्मूळ याय तेवो अनुकूळ प्रयत्न आपने प्रथमज सेववानी खास जरुर छे. कुमितना कुसंगथी उद्भवेछा माठा संस्कारोने निर्मूळ करवाना सतत प्रयत्नमां हुं पण सहायभृत थइश्च.

चारित्र - केवा क्रमथी मारे उक्त संस्कारोने टाळवानो उ-पाय करवो जोड्ये ?

सुमति—वक्ष्यमाण (कहेवाता) ऋमथी तेमतु उन्मूछन करवा -यत्न करवो जोइये.

- ?. श्रुद्रता-देशशहि तजीने अश्रुद्रता-उदार गुणदृष्टि आ-दरवी जोइये.
- २. रसगृद्धता-विषयलंपटता तजीने हित (पथ्य) अने मित (अल्प) आहारथी शरीरने संतोषी आरोग्य अने श-रीर सोष्ट्रव साचवबुं जोड्ये.
- कोधादिक कषायना त्यागथी अने क्षमादिकना सेवनथी सोम्यतावडे चंद्रनीपेरे शीतळ स्वभावी थावं जोइये ?

चारित्र ० - प्रिये! तेणीने तिलांजिल देवानो मारो संपूर्ण विचार छे, पण ते पुनः मने छळी न शके एवा समर्थ उपाय तुं जाणती होय ते मने कहे के जेनो अभ्यास करीने हुं पुनः तेणीना पापी पाशमां आवी शकुं निह, केमके जेम तुं कहे छे तेम मतीत छे के कुमतिनो स्वभाव कुटील छे.

सुमित—जे कहेवानी मारी इच्छाज इती तेज बाबतनी आप-नी जिज्ञासा थयेळी जोइने मारे तो दूधमां साकर भळ्या बराबर थयुं छे.

चारित्र०—खरेखर आवुं उत्तम नाम धरावीने अने दुनिया आगळ आवो खोटो दमाम राखीने खरा चारित्र संबंधी गुण विना केवळ दंभ—मायाथी जीववा करतां तो मरवुंज मने तो हवे बहेतर लागे छे.

सुमित—स्वामीजी! आप चतुर छो. खरा चारित्रना अर्थी दुरेक शक्सने एटली चानक चढ्या विना ते पतित अवस्थाने तजी शकेज नहि.

चारित्र०—पण मिये ! जे तुं मने हितकारी वचन कहेवा इ-च्छे छे ते हवे विलंग कर्या विना कहे, केमके कहुं छे के 'श्रेप काममां बहु विद्र आवे छे. ' सुपति—आपनुं कहेनुं यथार्थ छे अने तेथी आप साहेबनी आ-क्राने अनुसरीने हुं मारुं कर्तव्य बजाववाने तत्पर थइछुं. जे जे आ-यन यारी फरज विचारीने कहीश तेनु अध्य हक्कपा करीने मनन करता रहेशो.

चारित्र०—ित्रये ! तारां अमृत वचननुं हुं आदर पूर्वक पान करीश अने ते वहे मारा त्रिविध तप्त आत्माने शान्त करीश ए नि-श्रे समजजे.

सुमति—आपना आत्माने सर्वथा शान्ति—समाधि मळो ! तेमज असमाधिनां खरां कारणोनो क्षय थाओ ! अने समाधिनां खरां साधन माप्त थाओ !

चारित्र०—मने खात्री थइ छे के तारो स्थायी समागमज सर्क समाधितु मूळ कारण छे. अने तेथी असमाधिना सकळ कारणोनों स्वतः क्षय थइ जरे.

सुमति—आटला अरुप कालमां पण आपना अपितम मेमनीं मने जे प्रतीति थई छे ते मने आपना भविष्यना सुख-सुधारानीं संपूर्ण आगाही आपे छे. हवे हुं आपने मारा सिंद्रचारो रोशन कर्-वानी रजा लहुईं. आशा छे के आपनी हृदयभृमिमां रोपायेला हु सिंद्रवारो अति अर्भूत फल्दायक नीवडशे. १३२

चारित्र०—मारामां जेटली पात्रतां हशे तेटला तो ते अवस्य फळदायी थशे साथे एवी पण खात्री छे के तारी सतत संगतिथी मारामां पात्रता पण वधती जशे, तथा पात्रताना प्रमाणमां फळनी. अधिकता थतीज जाशे.

सुमति—हुं अंतःकरणथी इच्छुं छुं के आपने संपूर्ण पात्रता. त्राप्त थाओ, अने आप संपूर्ण सुखमय परमपदना पूर्ण अधिका-री थाओ!

चारित्र०—तारा मुखमांज अमृत वसे छे. केमके तारी साथेना आ वार्ता विनोदमां मने एटलो तो स्वाद आवे छे के तेनी पासे स्व-र्मनां मुख पण निहं जेवां छे. जेने तारो संग थयो नथी तेनं जी-च्युं हुं धूळ जेवुं छेखुं छुं.

सुमित—म्हारी शोक्य—ब्हेने जो आपने अनुभव सुखडी चखा-डी नहोत तो आपने मारो स्थायी समागम करवानो विचारज क्यांथी थात ? केम खरुंने ? हुं, धारुं छुं के आप तेना स्वभाविक गुणोने स्व-प्नमां पण भूछशो नहिं, सामी वस्तुथी संपूर्ण कंटाळ्या विना अह-कमां पूर्ण त्रीति वंधाती नथी.

चारित्र०—कुमितिथी हुं खूवं कंटाळ्यो छुं ए निर्विवाद छे, कुमितना कुसंगवडेज हुं आवी अनुपर्म मुख-संगतिथी चूवयो छुं तथी ते वात हुं स्वप्नमां पण केम भूली शक्तं! हुंशे हुवे एक सण पण मने तारो विछोइ न पडो, एज मने इष्ट छे. एवी मारी अंतरनी इच्छा फळीमृत थाओ!

सुमिति—स्वामीजी! कुमितना छांवा वखतना परिचयथी आ-पनी उपर जे जे विरुद्ध संस्कार वेसी गया होय ते ते सर्वे निर्मूळ याय तेवो अनुकूळ प्रयत्न आपने प्रथमज सेववानी खास जरुर छे. कुमितना कुसंगथी उद्भवेछा माठा संस्कारोने निर्मूळ करवाना सतत प्रयत्नमां हुं पण सहायभृत थइज्ञ.

चारित्र०—केवा क्रमथी मारे उक्त संस्कारोने टाळवानो उ-पाय करवो जोइये ?

सुमति—वक्ष्यमाण (कहेवाता) क्रमथी तेमनु उन्मूछन करवा -यत्न करवो जोइये.

- श्वद्रता—देशशहि तजीने अश्वद्रता—उदार गुणहि आ-दरवी जोइये.
- २. रसगृद्धता-विषयलंपटता तजीने हित (पथ्य) अने मित (अल्प) आहारथी शरीरने संतोषी आरोग्य अने श-रीर सोष्ट्रव साचवनुं जोइये.
- ३. क्रोधादिक कपायना त्यागथी अने क्षपादिकना सेवनथी सोम्यतावडे चंद्रनीपेरे शीतळ स्वभावी थावुं जोइये ?

जेथी कोइने स्व संगतिथी अभावो थवानो कदापि म-संग्राजों नहि.

- ४. सर्वे लोक विरुद्ध तजीने स्व पर हितकारी कार्य करवा। वडे लोकप्रिय थवुं जोइये.
- ५. मननी कठोरता तजी कोमळता आदरवी जोइये.
- ६. लोक अपवाद्यी तथा पापयी वीवुं जोइये. वडीलनुं मनः पण न दुभाववुं जोइये.
- ७. सर्व दंभ-पायाने मृकीने निर्देभी-निर्मायी-सरल स्व-भावी थवुं जोड्ये.
- ८. आपणी इच्छा निहं छतां वद्धीलनु मन मसम्न राखवाने व् दाक्षिणता करवी जोइये
- ९. स्वच्छंदता तजीने लज्जा राखर्वा जोइये. निर्मर्यादपणुं. तजीने लज्जा मर्यादा सेववी जोइये.
- १०. निर्देशता तजीने दयाद्रता आदरवी जोड्ये. सर्व उपर अ-मीनी नजरथी जोवुं जोड्ये. द्वेष, मत्सर, इप्योदिकनेर दूर करवा जोड्ये.
- ११.-पक्षपात बुद्धिने तजीने निष्पक्षपातपणु आदरवुं जोइये.

- सद्गुणी मात्र उपर राग धरवो जोइये. सद्गुण रागी थइ रहेवं जोइये.
- १३. प्राणान्त कष्ट आव्ये छते पण असत् भाषण नज करवुं जोइये. सत्यनी खातर प्राण अपण करवा जोइये, एकांतः सत्यिषय थवुं जोइये.
- १४. स्वसंबंधी वर्ष पण धर्मनी तालीम लही सवळ थाय तेम करवुं जोइये. स्वपक्ष धर्मसाधन विमुख न रहे तेनी योग्य काळजी राखवी जोइये. अथवा आत्मसाधन स-न्मुख थयेला स्वसंबंधी वर्गनीज योग्य सहाय लेबी: जोइये.
 - १५. दुंकी दृष्टि तजीने करवामां आवता दरेक कार्यनुं केंचुं प-रिणाम आवशे तेनो पुरुत विचार करी शकाय एवी दिघे दृष्टि राखवी जोइये. एकाएक वगर विचार्यु कंइ पण साहस खेडवुं नहि जोइये.
 - १६. हुं कोण छुं ? मारी स्थित केवी छे ? मारी फरज शीः छे ? मारी कसर केटली छे ? ते कसर सुधारवानो उ-पाय कयो छे ? तेमज आसपासना संयोगो केवा अनु-कूळ के मतिकूळ छे ? तेमांथी मारे शी रीते पसार थइ-

जां जोइये ? एँ आदि संवंधी विशेष जाणपणुं मेळवत्रुं

१७. एवो अनुभव मेळववाने शिष्ट जनोतुं सेवन करबुं जोइये.

३८. सुण विशिष्ट एवा शिष्ट जनोनो यथायोग्य विनय कर-वो जोइये.

१९. उपकारीनो उपकार कदापि भूलवो नहि जोइये. लाग आबे तो तेनो योग्य बदलो वालवा पण चूकवुं नहि जोइये. एवी कृतज्ञता आदरी परम उपकारी—निष्कारण बंधुभूत धर्मनो कदापि पण अनादर न ज करवो जो- इये, किं तु धर्मनी खातर स्व प्राणापण करवुं जोइये.

२०. दनी शके तेटछं परिहत करवा तत्पर रहेवुं जोइये. परतु हित करतां आपणुंज हित थाय छे एवो दढ निश्चय करी राखवो जोइये.

२१. सर्व उपयोगी बाबतमां कुशळता मेळववी जोइये, अने जरुर जणातां कोइ पण वावत अभ्यासना वळथी अल्प ययासे साधी श्वकावी जोइये. एवी निपुणता कहो के कार्य-दक्षता माप्त थइ जवी जोइये. कुमतिना कुसंगयी पडेला माठा संस्कारोने इटाववा उक्त २१ उपायो पैकी

सवळा के वंनी शके तेटला योजवाने हुं आपने नम्र-

चारित्र - अहो सुमित ! दुर्मितने दूर करी दुष्ट संस्कारोने दुळी नाखना समर्थ सद्वोध धारा वर्षाववाथी तें तो तारुं सुमित नाम सार्थक कर्युं छे.

सुमति— स्व स्वामी सेवामां तन मन अने वचननो अनन्य भावे उपयोग करवो एज खरी पतित्रताने उचित छे. तेवी पवित्र फरजो हुं जेटले अंशे अदा करी शकुं तेटले अंशे हुं पोताने कृतार्थ मानुं छुं. पण जे तेथी विरुद्धवर्ती स्वस्वामीने अवळो उपदेश दइने अवळे रस्तेज दोरी जाय छे, तेवी स्वामीने संतापनारी कुमति सी-ने तो हुं स्वामीद्रोही के आत्मद्रोही मानुं छुं.

चारित्र० — खरेखर तारी जेवी सुशीळा अने कुमित जेवी कु-शीळा कोइकज नारी हशे ? अहो ! जेओ वापडा सदाय कुमितनाज प्रासमां पडया छे तेमने तो स्पप्नमां पण आवो सदुपद्देश सांभळवा-नो अवकाश क्यांथी मळे ? अरे ! एता वापडा जीवता पण सुवा वरावरज तो !

सर्व कोइ एवीज दुर्दशाने माप्त थाय छे, ज्यारे तेनो कुसंग तने छे

त्यारेज ते कंइपण तत्त्वथी सुख पामे छे. त्यां सुधी तो ते मूर्छित-मायज रहे छे.

चारित्र०—तुं आवी शाणी अने सोभागी छतां केवळ कुमति-नी कुटीलताथी कदर्थना पामता पामर पाणीयोनो केम उद्धार करती नथी? अहो एकान्त दुःखमांज इनकी मारी रहेला तेवा अनाथ जीवोनो उद्धार करतां तने केवो अपूर्व लाभ थाय?

सुमित—आपनी वात सत्य छे. पण अन्य तो निमित्त मात्र छे, पोतानो पुरुषार्थन खरो काम लागे छे. स्व पुरुषार्थन इष्ट सि-दिमां प्रबळ कारणरूप छे. ते विना स्वेष्ट सिद्धि नथी. आवा सबब-थीज लोकमां पण कहेवत प्रचलित छे के 'आप समान बळ निहं अने मेघ समान जळ निहं.' एम समजीने सर्व कोइये कुमितनी कुटीलताथी थता अनेक गेरफायदाओनो विचार करीने तेनो कुसंग तजवा उद्यम करवो जोइये.

चारित्र - ए कुमितनो कुसंग तजवानो उद्यम करवा ते वाप-डाओने शी रीते अवकाश मळे ? केमके तद्तुकूळ उद्यम कर्या विना कदापि तेना कुसंगनो अंत आवी शकतो नथी. माटे केवो संयोग पामीने ते कुसंग टळे ए मने कहे.

सुपति—कुपतिना कुसंगर्थी विविध विदंबना युक्त जन्म मरण-जन्य अनंत दुःखने सही अकाम निर्जरावडे जीवने क्वचित् सत्समा- गम योगे पूर्वे में आपने जेवो उपाय क्रम बताव्यों छे तेवोज क्रम माप्त थाय-समज पूर्वक तेनो स्वीकार थाय-त्यारेज जीव कुमतिनो संग तजवाने शक्तिवान वने, ते विना कदापि ते तेनो संग तजी शके नहि.

चारित्र०—त्यारे उपर वतावेलो उपाय क्रम जाणवा मात्रथी कंइ वले निहं थुं ? समज पूर्वक तेनो स्वीकार करवाथीज इष्ट कार्यनी संफळता थाय थुं ?

मुमति खरेखर उक्त क्रमनो सारी रीते आदर करवाथीज इष्टः कार्यनी सिद्धि थइ शके छे, पण तेना जाणवा मात्रथी कंइ इष्ट सि-द्धि थइ शकती नथी.

चारित्र-शासमां ज्ञाननीज मुख्यता कही छे तेतुं केम ?

सुमति—ते वात सत्य छे पण तेनो अंतर हेतु ए छे के स्व क-तिव्य कार्यने प्रथम सारी रीते जाणी—समजीने सेव्युं होय तो तेथीः श्रीघ्र शुभ फळनी प्राप्ति थइ शके छे. विलक्कल समज्या विना करेली अंधकरणी तो उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे समजीने स्व कर्तव्य करवाथीज सिद्धि छे.

चास्त्रि अन्य धर्मावलंबी लोको तो ज्ञान मात्रथी पण सिद्धिः माने छे ?

सुमति—तेओनी तेवी मान्यता मिध्या छे, तरतां आवहतुं होयू

पंण तरवानी अनुकूल किया कर्या विना सामे तीरे जइ शकातुं नथी ज तथा मूख लाग्ये छते भक्षण किया कर्या विना शान्ति थती नथी, तेम खरा चारित्रना अर्थीजनोने पण शुद्ध चारित्रनी अनुकूल किया करवानी खास जरुर छे जेम वे चक्र विना गाडी चालती नथी तथा वे पांख विना पक्षी उडी शकतुं नथी तेम सम्यग् ज्ञान अने किया विना कार्यसिद्धि थइ शकती नथी. आथी आपने समजायुं इशे के सम्यग् क्रिया (सद्वर्तन) विनानुं एकछं ज्ञान लूखं—पांगछं छे. अने सम्यग् ज्ञान (विवेक) विनानी केवल क्रिया पण आंधली छे, माटे मोक्षार्थीजनोए ते वंनेनी साथेज सहाय लेवी जोइए.

चारित्र०—हवे मने समजायुं के केवळ लूखी कथनी मात्रथी कार्य सरवानुं नथी. ज्यारे कथनी प्रमाण सरस करणी थशे त्यारेज कल्याण थवानुं छे.

सुमति—आपनी आवी सहेतुक श्रद्धार्थी हुं वह खुशी थाउछुं, अने इच्छुं छुं के आपने वंतावेछो उपायक्रम हवे सफळताने पामशे. परंतु कुमतिनो संग सर्वथा वारवानो अने अक्षय सुखना अवंध्य कारणभूत सत्य चारित्र धर्मनी योग्यता पामवानो जे उपाय क्रम में आपने वात्संत्य भावथी वताव्यो छे तेनो पूर्ण भीतीथी आ-दर करवामां आप छगार पण आळस करशो नहिं एवी मारी विंन्निति छे.

चारित्र — माराज स्वार्थनी खातर केवळ परमार्थ दावे बता-वेला सत्यमार्गथी हुं हवे चुकीश नहिं, तुं पण तेमां सहायभूत थया करशें तो ते मार्ग हुं सेवन करवुं मने वहुं सुलटुं पडशेः

समारि—आपने समयोचित सहाय करवी ए मारी पवित्र फरज छे, एम हुं अंतःवरणथी हेखुं छुं, तेथी हुं समयोचित सहाय व-रची रहीश.

नारित्र—ज्यारे-तुं मारे माटे आटली वधी लागणी धरावे छे त्यारे हुं इवेथी सन्मार्ग सेवनमां प्रमाद नाहि करं, तारी समयोचितः सहाय छतां सन्मार्ग सेवनमां उपेक्षा करे तेना पूरा कमनसीवज.

ं सुमिति आपने वतावे हो सन्मार्ग सेवननो क्रम जेओ वेदरका-रीथीं आदरताज नथी तेओ कदापि सत्य चारित्रना आधिकारी थड़ शकताज नथी. परंतु तेनो योग्य आदर करनारा तो तेना अनुक्रमे अधिकारी यइ शके छेज. माटे कदापि तेमां वेदरकारी करवीज नहिं

चारित्र॰—उपरला सद् उपायने सेट्यावाद आत्माने शुं शुं करवुं अविशिष्ट (वाकी) रहे छे ? अने उक्त उपायथी आत्माने शो साक्षात लाभ थाय छे ?

अस्मिति— उक्त उपायना यथार्थ सेवन कयी वाद पण आत्माने करवातुं बहुज वाकी रहे छे. आर्थातो हृदय—भूमिकानी शुद्धि थायछे. हृद्य चोख्खुं—स्वच्छ थया बाद तेमां चारित्र गुणना आधारभूत सद् विवेक प्रगटे छे. आ सद् विवेकतुं बीजुं नाम समिकत या तत्त्व— श्रद्धा छे. हृदय—भूमि शुद्ध थया बादज तेमां चारित्र—महेलनो सद्विवेक या समिकत रुपी पायो नंखाय छे. तेना विना चारित्र— महेल टकी शकतोज नथी.

चारित्र०—उक्त रीते हृदय शुद्धि कयीबाद जे साद्देवेक या समिकत पामबुं इष्ट छे तेनुं स्वरुप अने लक्षण जाणवानी मने अभि-लाषा थइ छे, तेथी प्रथम संक्षेप मात्र तेनु स्वरुप अने लक्षण क-थन करो.

सुमति—' सद्सद्विचेचनंविचेकः' तत्त्वातत्त्वनी जेवहे यथार्थ समज पहे, गुण, दोष, हिताहित, कृत्याकृत्य, भक्ष्याभक्ष्य, अने
पेयापेय विगरेनी जेथी यथार्थ ओळखाण थाय, देव, गुरु अने धर्म
संबंधी जेथी संपूर्ण निश्चय थाय, तेवो निर्णय—निर्धार कर्याबाद
खोटी बावतमां कदापि मुंझावाय निह अने सत्य वृस्तुनी खातर
प्राण अपण करवा पण तैयार थवाय; आ उपरांत उपश्म, संवेग,
निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिकता ए पांच, समिकतनां खास छक्षण छे
ए छक्षणथी समिकतनी खात्री थइ शके छे. ज्यांसुधी उपश्चमादिकः
छक्षण अंतरमां प्रगट थयेछां देखाय निहं त्यांसुधी सद् विवेक या
समिकत प्रगट थयानी खात्री थइ सकती नथीः तेथी पूर्वेछा क्रमणी
हर्य श्रीद कर्याबाद सद् विवेक या समिकत रत्नमा अर्थी जनोष्ट

इक्त उपन्नमादि गुणनो अभ्यास करवानी आवश्यकता छे. केमके कारणथी कार्य सिद्धि थायज छे प्वो अचळ सिद्धांत छे.

चारित्र — संक्षेपथी नाम मात्र कहेलां चपशमादिक लक्षणोर्छं कंइक स्वरूप समजवानी मारी इच्छा छे ते हुं धारुं छुं के तमे सफळ करशो.

चारित्रराजनो खहित पत्ये विशेष आदर थयेको जाणी सुमिति तेतुं समाधान करे छे.

मुमित—आपनी आवी अपूर्व जिज्ञासा थयेछी जाणीने हुं दि-शेषे खुशी थइ छुं. अने उक्त पांचे लक्षणोतु अतुक्रमे स्वरूप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखवा कृपा करशो. केमके ए पांचे लक्षणथी छ-क्षित थयेछुं समिकत रवज सकळ गुणोमां सारभूत एटले आ-थारभूत छे.

चारित्र०—हुं सावधानपणे समिकतनां पांचे रुक्षणहुं खरूप सांभळवाने सन्मुख थयेलो छुं. तेथी हवे तमे तेतुं निरूपण करो.

सुमति उक्त पांचे लक्षणमां मधानभूत उपक्षमतु स्वरूप आ ममाणे छे. अपराधीतु पण आहेत करवा मनधी पण महित थाय नहिं पनी रीते कोधादि कषायोने अधावी दीधा होय; साध्य दृष्टि-थी सामानु अंतर्थी आहेत नहिं करवानी सुद्धियी तेने योग्य विक्षा पण कराय, किंतु क्लिष्ट भावथी तो मन, वचन के कायानी महित्त तेतुं अहित करवा माटे थायज नहिं ते क्षम अथव् उपराम कहेवायछे।

यत:-अपराधीशुं पण नवी चित्त धकी, चिंतविये प्र-तिकूल सुगुणनर,

चारित्र - खरेखर उपश्वमत आवुं अद्भूत खर्प मनन कर-वा जेवुंज छे, तेमां केवी अद्भृत क्षमा रहेली छे, हवे बीजा संवेगतु खरूप कहो.

सुमित संसार संबंधी क्षणिक सुखने दुःख रूपज लेखाय अने तेवा किएत सुखमां मग्न निह थातां केवळ मोक्ष सुखनीज चाहना बनी रहे. यथाशक्ति अनुकुळ साधनवडे स्वभाविक सुख पाप्त करवा प्रयत कराय अने प्रतिकृळ कारणोथी डरतां रहेवाय तेनु नाम संवेग छे.

यतः—" सुरनर सुख ते दुःख करी लेखवे, वंछे शि-

चारित्र०—अहो संवेगनं स्वरंप पण अत्यंत हृदयहारक छे ते अक्षय सुखमां अथवा अक्षय सुखना साधनमां केवी रित करवा अने क्षणिक सुखमां के क्षणिक सुखनां साधनमां केवी उदासीनता करवा वोचे छे. अहो ! सत्य मार्ग देशकेनी विलिहारी छे ! हवे त्रीजा नि-विद्रुत्त केइक स्वरंप कहो ? सुमित जैम कोइने केदमांथी क्यारे छूटुं अथवा नरक स्थान-मांथी क्यारे नीसरुं एवी स्वभाविक इच्छा मवर्ते, तेम आ जन्म म-रणनां मत्यक्ष दुःखथी कंटाळी तेथी सर्वथा सुक्त थवानी बुद्धिथी पवित्र धर्म-करणी करवा स्वभाविक रीते मेराय ते निर्वेद नामे त्रीजुं लक्षण छे.

"यतः—नारक चारक सम भव उभग्यो, तारक जाणीनेंः धर्म सुग्रुणनरः

चाहे नीकलवुं निर्वेदते, त्रीजं लक्षण मर्म सुगुणनर."

चारित्र०—अहा! आ निर्वेद हुं छक्षण विषय छंपट अने क-ठोर मनवाळाने पण वैराग्य पेदा करवाने समर्थ छे. तेथी चिर प-रिचित एवा विषय भोग उपर ते हुं अंतर स्वरुप विचारतां स्वभा-विक रीते तिरस्कार छुटे छे. प्रम उदासीन विना एवं स्वरुप कोण प्रतिपादन करी शके वारु ? इवे अनुकंपानु कंइक स्वरुप बतावो.

सुमति—दुःखीतुं दुःख दीलमां धरीने तेतुं वारण करवा यथा-शक्ति उद्यम करवो, धर्महीन या पतित जीवोने यथायोग्य सहाय आपीने धर्ममां जोडवा, तेमनी लगारे उपेक्षा निह करतां जेम धर्मनी उन्नतिः थाय तेम स्व शक्ति अनुसारे प्रयत्न करवो, ते अनुकंपा कहेवाय छे. यतः—" द्रव्य थकी दुःखियानी जे द्या, धर्महीणानीरे भाव, सुगुण नर; चोथुं लक्षण अनुकंपा कही, निज शक्ते मन लाव सुंगुण नर; श्रीजिन भाषित वचन विचारीये॥४॥

चारित्र०—अहो! आ लक्षणतो जगत् मात्रनो उद्धार करवा समर्थ छे. तेमां दर्शावेली दयाळता केवी उत्तम छे? एवी उत्तम अने निपुण दयाथीज जीवनुं कल्याण थइ शके छे. केवळ दया दया पो-कारवाथी कदापि कंइ पण वळवानुं नथी. अहो आ दुनियामां धर्मनुं बानुं काढीने पोतानो तुच्छ स्वार्थ साधवाने सेंकडो जीवोनो जान लेवा वाळा केटला बधा दीसे छे. ते बधा हवे तो मने धर्म-ठगज मालम पडे छे. अहो दीन अनाथ एवा ते बापडाओना परलोकमां शा हाल थशे? उपरनुं अनुकंपानुं लक्षण तो मने अभिनव अमृत जेवुं, नवुं जीवन आपनारुं लागे छे. हवे अविशिष्ट रहेलुं आस्तित्रय केवा प्रकारनुं जोइये ते कंइक समजावो.

सुमति—राग, द्रेष, अने मोहादिक दोष समूहथी सर्वथा मुक्त अने अनंत शक्ति संपन्न सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्री जिनेश्वर प्रभु प्रणीत जीव अजीवादिक तत्त्वोतुं स्वरूप समजीने तेतुं यथार्थ श्रद्धान करवुं. गमे तेवी कु—युक्ति कोइ करे तो पण शुद्ध तत्त्व मार्गथी कदापि डगवुं -नहिं. आवा तत्त्वाग्रह अथवा तत्त्व श्रद्धानथी कुमतिनो सर्वथा क्षय -थइ जाय छे.

्यत:-"जे जिन भाष्युं ते नहि अन्यथा, एवो जे हढ रंग; सुगुणनर; ते आस्तिकता रुक्षण पांचमुं, करे कुमतिनो ए भंग सुगुण० ''

चारित्र - अहा ! प्राणिपये ! सुमिति ! आ -लक्षण तो आडो आंकज छे. आवा परमात्माना वचनमांज प्रतीति राखवी, ते विनाना कपोळ कल्पित वचनोनो विश्वास न ज करवो ए खरा परीक्षकर्त्त काम छे केम ?

सुमति—मोटा मोटा गणाता पण अंध श्रद्धाळ खरी तत्त्व परी शामां पास थइ शकता नथी. तेमने मिथ्यात्वतुं मोटुं आवरण आईं आवतुं होवुं जोइये, निहं तो हाही हमरी वातो करी जगतने रंजन करनारा छतां तेओ शुद्ध तत्त्व परीक्षामां केम पसार न थइ शके ? एज तेमनी अंध श्रद्धानी पवळ निशानी छे के साक्षात साची वस्तु तजीने खोटीनेज झाले छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्म संबंधी परिक्षामां पण अंध श्रद्धाळ मोटा भूलावामां पहे छे. तेथीज ते रागद्देष अने मोहादि दोष युक्तने देव तरीके स्वीकारे छे. लोभी लालची अने असंबद्धभाषीने गुरु तरिके स्वीकारे छे. अने उक्त नायकोना कथेला मार्गने धर्म तरीके स्वीकारे छे. देवगुरु अने धर्म जेवा श्रेष्ट तत्त्वमां आवी गंभीर भूलने करनारा केवळ अंध-श्रद्धाळ्य कहेवाय माटे ते-मनुं खरुं स्वरूप जाणवुं जरुरनुं छे.

चारित्र - तो मारा हितनी खातर शुद्ध देव गुरु अने धर्मर्तु

कंइक खरूप समजावशो तो मने अने मारा जेवा बीजा जीज्ञासुने पण कंइक लाभ थाशे.

सुमति—प्रथम हुं शुद्ध देवतुं संक्षेपथी स्वरुप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखशो. नेनां नेत्र युगळ शान्तरसमां निमग्न होय, व-दन (मुखारवींद) सुमसन्न होय, उत्संग (खोळो) कामिनीना संगथी शून्य होय, तेमज हस्तयुगळ पण शक्षवर्जित होय तोज तेने तेनी प्र-माण-सुद्राथी देवाधिदेव मानी शकाय. तात्पर्यके जेनामां राग, द्वेष, अने मोह सर्वथा विलय पाम्या छे तेथी उक्त दोषोनी कंइपण नि-शानी देखाती नथी एवा आप्त-महापुरुषनेज देवाधिदेव तरीके मानी शकाय. आ शिवाय उक्त महादेवने ओळखवाना अनेक साधन शा-स्वमां कहां छे. विशेष रुचि जीवे ते सर्वनो त्यांथी निर्धार करी लेवों.

चारित्र०—अहो ! आवं अद्भूत देवनं स्वरुप कोइकज वि-रला जाणता हशे, अने कदाच कोइ जाणता हशे तोपण कुळाचार कहो के कदाग्रहने तजीने कोइकज तेनो यथार्थ आदर करता हशे. वहोळो भाग तो गतानुगतिक होवाथी स्व कुलाचारनेज वळगी रहे-वामां सार माने छे. एवा वापडा अज्ञान लोको शुद्ध देवने क्यारे ओळखी शकशे ? तेमने ते ओळखावे पण कोण ? खरेखर ते वा-पडा हतभाग्य छे तथीज तेओ एवी करुणाजनक स्थितिमां पडिया रहे छे. हवे शुद्ध गुरुनं स्वरुप कहो.

मुमति—जे अहिंसादिक पांच महात्रतोने धारण करे छे, रात्री

भोजन सर्वथा तजे छे, निःस्पृहपणे अन्य योग्य अधिकारी जनोने धर्मीपदेश दे छे, रायने अने रंकने समान छेखे छे, नारीने नागणी तुल्य
छेखी दूर तजे छे, सुवर्ण अने पथ्यरने समान छेखे छे, निंदा—स्तुति सांभळीने मनमां हर्ष—शोक लावता नथी, चंद्रनी जेवा शीतळ
स्वभावी छे, सायरनी जेवा गंभीर छे, मेरुनी जेवा निश्चळ छे, भारंडनी जेवा प्रमाद रहित छे, अने कमळनी जेवा निर्लेप छे; जेथी
राग द्रेष अने मोहादिक अंतरंग शत्रुओने जीतवाने पूर्वोक्त महादेवना वचनानुसारे पुरुषार्थ फोरच्या करे छे. एवा प्रवहणनी जेम स्व
परने तारवा समर्थ सद्गुरु होय छे, एवा शुद्ध गुरुमहाराजनुं मोक्षार्थी
जनोए अवश्य शरण लेनुं योग्य छे.

चारित्र०—अहो प्राणवल्लभा ! सुमित ! सद्गुरुतु आंचुं यथार्थ स्वरुप सांभळीने लांचा वखतनो लागु पडेलो मारो मद-ज्वर शान्त थइ गयो छे. हवे मारां पडळ खूल्यां. शुद्ध चारित्र पात्र सद्गुरु आवाज होय ते यथार्थ जाणवाथी मारो आगलो भ्रम भागी गयो छे, अने हुं हवे खुलेखुल्छं कही देखं छुं के हुं तो मात्र नामनोज चारित्रराज छुं. अहो समिति ! जो मने तारो समागम थयो न होत तो आ अनादि मायानो पडदो शी रीते दूर थइ शकत अने ते प- हदो दूर थया विना मारा शा हाल थात ? हुं दंभद्यत्तिथी सुग्ध जननोने ठगीने केवो दुःली थात ? अरे मायावी एवा मारा मिध्यालं- वनथी केटलो बधो अनर्थ थात ? हुं कहुं छुं के तारुं कल्याण थजो !

तुं कल्प कोटी काळ सुधी जीवती रहेजो ! अने तारा सत्समागमथी क्रोडो जीवोतुं कल्याण थाजो ! हवे अतुकूळताए मने शुद्ध धर्मतु स्वरुप समजाववा श्रम लेजो.

सुमित—तमारी पवळ तत्त्व—जिज्ञासाथी हुं अत्यंत खुशी थइ छुं. अने आपनी इच्छा अनुसारे शुद्ध धर्म तत्त्वनु स्वरूप समजाव-वान यथामित उद्यम करीश. मने आशा छे के ते सर्व सावधानपणे सांभळी तेमांथी सार खेंची, तेनो यथाशक्ति आदर करीने आप मारो अम सफळ करशो.

चारित्र०—हुं ते सर्व सावधानताथी सांभळी तेनों सार लइ यथाशक्ति आदर करवा चृकीश नाहं. तेथी हवे निःसंशयपणे धर्म तत्त्वनुं स्वरुप समजाववाने सन्मुख थाओं!

सुमित—" अहिंसा परमो धर्मः" ए सर्व सामान्य वचन छे. ए वचन जेटछं व्यापक छे. तेटलंज गंभीर छे. सर्व सामान्य लोको तेनुं यथार्थ स्वरूप समजी शकता नथी. तेथीज तेओ तेमां क्वचित् भारे स्वलना पामे छे. अथवा तेनो यथार्थ लाभ लही श-कता नथी. 'नहिंसा—अहिंसा.' अर्थात् द्या एटले कोइने दुःख नहिं देवुं एटलोज तेनो सामान्य अर्थ केटलाक करे छे. परंतु ते कर-तां घणीज वधारे अर्थ—गंभीरता तेमां रहेली छे ते नीचेनी वातथी आपने रोशन थशे—" प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा." अर्थात् कोइ पण प्रकारना प्रमादवाळा मन, वचन, के कायाना व्या-पारथी कोइ पण वस्तते कोइ पण संयोगमां आपणा के पारका कोइना प्राणनो नाश करवो ते हिंसानो अर्थ छे. तेवी हिंसाथी दूर रहेवं-दूर रहेवा अनुकूळ प्रयत्न सेववो तेनु नाम अहिंसा छे. एवी निपुण अहिंसा, 'संयम ' वहे साधी शकाय छे. अने एवो संयम, सर्वज्ञदर्शित इच्छा निरोधरुपी तपथीज साध्य थाय छे, माटेज सि-द्धान्तकारे सूत्रमां धर्मनुं आवुं स्वरुप बताच्युं छे के

> धम्मो मंगल मुक्किठं, आहिंसा संजमो तवो; देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो.

(दुशवैकालिक)

तेनो परमार्थ एवो छे के-अहिंसा संजम अने तप छे लक्षण जेनुं एवो धर्म उत्कृष्ट मंगलरूप छे. जेनुं मन महा मंगलमय धर्ममां सदा वर्त्या करे छे. तेने देव दानवो पण नमस्कार करे छे. "दुर्गितमां पडतां प्राणीने झीली लड्ने सद्गतिमां स्थापन करे तेज खरों धर्म छे." अहिंसा, संजम अने तप, ए तेनुं असाधारण लक्षण छे. तथीज अहिंसादिकनुं सविशेष स्वरूप समजवानी खास जरुर छे.

चारित्र०—परम पवित्र धर्मना अंगभूत उक्त अहिंसादिकतुं स-हज विशेष स्वरूप जाणवानी मने पण अभिलाषा थइ छे, तेथी हवे ते समजावो. सुमति—प्रथम हुं आपने 'अहिंसा' तुं कंइक सिवशेष स्व-रूप समजावुं छुं. में आपने पहेलां पण जणाव्युं छे के 'प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा' तथी तेमां कहेला प्रमत्तयोग श्री रीते थाय ते पण जाणवुं जोइये. 'मद्य' (Intoxication) विषय (sensual desires) कषाय (Wrath arrogance etc.) निद्रा (Idleness) अने विकथा (false gossips) वहे 'राग द्रेप युक्त कलुषित मन वचन अने कायानुं प्रवर्तन थाय तो प्रमत्त योग कहेवाय. एवा प्रमत्तयोगथी आत्मा पोताना कर्त-व्यथी अष्ट थाय छे. तथी ते शास्त्र संबंधी विहित मार्गनो लोप करे छे. शास्त्रनो विहित मार्ग मूळ रूपमां आवो छे के-

> मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्टवत्; आत्मवत् सर्वे भूतेषु, यः पर्याते स पर्यतिः

परह्मीने पोतानी माता तुल्य छेखने, परद्रव्यने धुळना ढेफां जेवुं छेखने अने सर्व प्राणी वर्गने आत्म समान छेखने तेज खरो ज्ञानी— उनिनेकी के शास्त्र श्रद्धाळ छे, प्रमन्तयोगथी कोइ पण प्राणी आवा पिनित्र मार्गथी पितत थाय छे, अने स्वपरने भारे तुकसान करे छे, तेतुं खरुं नाम हिंसा छे. एवी हिंसाथी पापनी परंपरा वधती जाय छे अने तेथी संसार—संतित वधे छे. आधी पोताने तथा परने अधोगतितुं वारंवार कारण वने छे. एवी दु:खदायक हिंसाथी दूर रहेवुं अने पूर्वोक्त प्रमत्त योगने तजीने अप्रमत्तपणे शास्त्रविहित मागेंज चालीने स्वपरतुं एकांत हित थाय एवी अतुकूल प्रदृत्तिज सेववी
ते अहिंसा कहेवाय छे. आवी साची अहिंसाज सर्व भयहरी अभयकरी अने कल्याणकारी कही शकाय.

चारित्र०—खरेखर उक्त स्वरुपवाळी अहिंसाज सर्व दुःख हर-नारी होवाथी परम खुखदायी अने सर्व कल्याणने करनारी होवाथी उत्कृष्ट मंगळरूप छे. आवी अघहर अहिंसाज जगत मात्रने सेवन क-रवा योग्य छे. हवे उक्त अहिंसाने उपष्टंभकारी संयमनुं कंइक स्व-'रुप समजावशो.

सुमति—"संयमनं संयमः" स्वच्छंदपणे चालता आत्मानो निग्रह करवो, तेने खोटा मार्गथी निवर्तावी साचा मार्गमां जोडवो ते संयम कहेवाय छे. हिंसा, असत्य, अद्त्त, अब्रह्म तथा मूर्छी (परिश्रह) नो सर्वथा के देशथी (जेटले अंशे वने तेटले अंशे) त्याग करी आहिंसादि ५ महाव्रतोनो अने तथामकारनी शक्ति न होय तो ५ अणुव्रतोनो स्वीकार करी तेमनो यथार्थ आदर-नि-वाह करवो, स्वेच्छा सुजव वर्तती स्पर्शनेंद्रिय विगेरे पांचे इंद्रियोनो निग्रह करवो, कोघादिक कषाय चतुष्कनो जय करवो अने मन, वचन, कायारूप योगच्यमी पाप मवृत्तिनो त्याग करीने तेमनी गोपना-गुप्ति करवी. ए ममाणे संयमना १७ भेद कहा छे. ए सर्वनो अंतर आशय अहिंसानी पुष्टि करवानो होय छे तेथी स-त्यादिक सर्वे महाव्रतो, इंद्रिय निग्रह, कषाय जय, विगेरे ते अहिंसानाज सहायक या उपसहायक कहेवा योग्य छे.

चारित्र०—उक्त संयमना अधिकारी कोण कोण छे? ते कं-इक समजावो.

सुमति—हिंसादिक अव्रतोनो सर्वथा त्याग करीने आहिंसा दिक महाव्रतोनो सर्वथा स्वीकार करवारुप सर्व संयमना अ-धिकारी साधु मुनिराज छे. अने अंशमात्र उक्त व्रतोनुं सेवन क-रवाथी देश संयमना अधिकारी तो श्रमणोपासक-श्रावक होयछे.

चारित्र०—सर्व (सर्वाशें) संयम छेवानो शो क्रम छे? सर्व संयम ग्रहण कर्या वाद कदाच कर्मवशात ते वरावर पळी न शके तो तेनो शो उपाय छे ते बतावो!

सुमति—पूर्वे वतावेला अक्षुद्रतादिक गुणना अभ्यासवहें हृद-यनी शुद्धि करी, सद्गुरु योगे सिद्धवेक या समिकत पामवाथी चतु-र्थ गुण स्थानक प्राप्त थाय छे. त्यारबाद शंका कंखादिक दूषण टा-ळीने, शुद्ध देव गुरु संघ साधमीं विगेरे पूच्य वर्गनी यथोचित भक्तिरूप भूषण धारीने, पूर्वोक्त शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, अने आस्तिक्य रूप लक्षण लक्षित समिकत—रत्नने मन, वचन, तथा कायानी शुद्धिथी अजवाळी—शुद्ध करीने सद् अभ्यासना वळथी देश-संयमी श्रावकनी सीमाये (हदे) पहोंची शकाय छे. ते देश--विरति गुण स्थानक पांचमुं गणाय छे. तेमां पांच अणुवत ३ गुण व्रत अने ४ शिक्षाव्रतनो समावेश थइ जाय छे. दृढ वैरागी श्रावक सद्गुरु योगे श्रावकनी ११ पहिमा (प्रतिमा) वहेंछे. परंतु पूर्वोक्त व्रतने धारण कयी पहेलां तेमांना दरेकनो अभ्यास करी जीवे छे, जेथी तेनुं पालन करवुं कंइक वधारे सुतर पडे छे. श्रावक योग्य व्रत अने पहिमाना शुभ अभ्यासथी अनुक्रमे 'सर्व संयमनो ' अधिकार प्राप्त थाय छे. पांच महाव्रतादिकनो एमां समावेश थाय छे. ए गुण स्थानक छडुं ' प्रमत्त ' नामे ओळखाय छे. लीधेलां महावत विगेरे जो सावधानपणे साचवी तेमनी शुद्धि अने पुष्टि करवामां आवे छे तो परिणापनी विशुद्धिथी अपमत्त नामे सातम्रं गुण स्थानक प्राप्त थइ शके छे पण जो उक्त महाव्रतादिकनी उपेक्षा करी स्वच्छंद वर्त-न करवामां आवे छे तो परिणामनी मलीनताथी पतित अवस्थाने पामी छेवट भिथ्यात्व नामना मथम गुण स्थानके जबुं पडे छे, तेथी ज दीर्घट्ट थि थइने जेनो मुखेथी निर्वाह थाय तेवां व्रत ग्रहण कर-वामां आवे तो तेथी पतित थवानो प्रायः प्रसंग आवे नहि॰ "स्व स्व शक्ति मुजव वनी शके तेटली धर्म करणी कपट रहितज करवानी जिनेश्वर भगवाननी आज्ञा छे." एवी अखंड आज्ञानुं उद्घंघन कर-वाथी हानीज थाय छे. तेथी उक्त आज्ञानुं आराधन करवामांज सर्व हित समायेलुं छे. कदाचित सरल भावधी सर्व संयम आदर्या बाद्

तेनो यथायोग्य निर्वाह करवानी ताकात जणाय निह तो शुद्ध बुद्धि थी सद्गुरु समीप खरी हकीकत जाहर करीने गुरु महाराज परमार्थ हिष्टिथी जे हितकारी मार्ग बतावे तेनुं निर्देभपणे सेवन करवामांज खरुं हित रहेलुं छे. दंभ युक्त सर्व संयम करतां दंभ रहित देश—सं-यम (अणुत्रतादिक) नुं पालन करवुं वधारे हितकारी छे. तेथी गुरु महाराज तेम करवा के बीजी उचित नीति आदरवा करहे ते आत्मा-थीं जनने अवक्य अंगीकार करवा योग्य छे. केमके सद्गुरु महाराज आपणुं एकांत हितं इच्छनाराज होय छे.

चारित्र०—उक्त संयमतुं स्वरूप अने तत्संबंधी करेलो खुला-सो मने तो अत्यंत हितकारी थवा संभव रहे छे. अहो आवा स-म्यग् ज्ञान विनातुं तो केवळ अंधारुंज छे. अहो प्राणिपये! तारी निःस्वार्थ वात्सल्यतानां शां वखाण करं ? अहो तारी अनहद करु-णा ? तेनो बदलो हुं शी रीते वाळी शकीश ?

सुमति—आपना प्रतिनी मारी पवित्र फरज अदा करतां हुं कंइ अधिक करती नथी. गुण ग्राहक बुद्धिथीज आपने एम भासतुं हशे. गमे तेम होय पण आ सर्व श्रेयः सूचकर्जें छे.

चारित्र - प्राण प्रिये ! खरुं कहुं छुं के अंतरमां तत्त्व मकाश थवाथी अने अंध श्रद्धा नष्ट थवाथी जाणे हुं कंइक अंपूर्व जीवनज पाम्यो हों एम मने तो जणाय छे. हवे मने श्रद्ध संयम सेवन कर- वानी पूर्ण अभिलाषा वर्ते छे. एवी मारी उच्च अभिलाषा सफळ थाय माटे सर्वज्ञ मधुनी कृपा साथे तारी सतत सहाय मागुं छुं.

सुमति—माराथी बनी शके ते सर्व सहाय समर्पवा हुं सेवामां सदा तत्पर छुं अने खरा जीगरथी इच्छुं छुं के आपनी आवी उच्च अभिलाषा शीघ्र फलीभूत थाओं!

चारित्र॰—िमये! तारी सत्संगतियी हुं दिनमितिदिन अपूर्व आनंद अनुभवतो जाउं छुं तेथी मने खात्री थाय छे के मारी उच्च अभिलाषा एक दिवसे सफळ-थाशेज! हाल तो मने धर्मना पवित्र अंगभूत अविशिष्ट रहेला तपनु स्वरुप जाणवानी मबळ इच्छा वर्ते छे, तेथी तेनु कंइक विशेष स्वरुप समजावीने समाधान करनुं घटेछे.

सुमित—जेथी पूर्व संचित कर्ममळ दग्ध थइने क्षय पामे तेतु नाम तप छे. अनादि अज्ञानना योगथी विविध विषयमां भटकता मननो अने इंद्रियोनो निरोध करी सहज स्वभावमां स्थित थावुं तेज खरो तप छे. ते तपना ६ वाह्य अने ६ अभ्यंतर मळीने १२ भेद छे, जे खास रुक्षमां राखवा जेवा छे. आत्म विश्चाद्धि करवाना कामी जनोने ते सर्वे अत्यंत हितकारी छे. तेमांथी प्रथम ६ वाह्यभे-दन्नु किंचित् स्वरूप कहुं छुं.

१: अनशन—सर्व प्रकारना अन्न पाणी विगेरे भोज्य पदा-थोंनो अग्रुक वखत सुधी अथवा कायमना माटे त्याग करीने सहज संतोष राखवो ते.

- उणोदरी (औनोदर्य) भोजननो अम्रुक भाग जाणी जोइने ओछो खावो. निद्रा—तंद्रादिकना जय माटे जा-णी जोइने ऊणुं रहेवुं अथवा संतोष मुखनी अभिष्ठद्धि माटे जरुर जेटला आहारमां पण कमी करता जवुं. पोंणा, अधी अने छेवट पा भागना भोजनथी निर्वाह करी लेवो ते.
- वृत्तिसंक्षेप-भोजन करती वखते वापरवानी वस्तुओतुं
 प्रमाण करवुं, अमुक चीजोथीज चलावी लेवुं, तेमज एक
 के वे वखत नियमसर वावरवुं.
- ४. रसत्याग-षट्रस भोजनमांथी जेटला रसनो त्याग थइ शके तेटलानो करवो. खाटो, खारो, तीखो, मीटो, क-डवो, अने कषायलो, एवा षट् रस छे. तेमज दूध, दहीं, घी, तेल, गोळ, अने तळेल पकवान ए षट् वि-कृति-विगइयो छे. तेमांथी जेटली तजाय-तेटली तजीने वाकीथी संतोष राखवो.
- ५. कायक्लेश-ठंडी रुतुमां टाढ सहन करवी, ग्रीष्म रुतुमां ताप सहन करवो, अने वर्षारुतुमां स्थिर आसनथी रही झान ध्यान तपजपमां मशगूळ रहेवुं. केशनो छोच कर-वो तथा भूमी शय्यादिक कष्ट स्वाधीनपणे खुशीथी सहन

करवुं एवं विचारीने के 'देहे दुखं महा फलम्' देहने दमवामां बहु फळ छे. समजीने सहनशीळता राखवामां आवशे तो आगळ उपर ते बहु लाभकारी थाशे. स्वेच्छाए सुखलंपट थवाथी पोताना बंने भव वगडे छे.

६. संस्रीनता—आसननो जय करवा अंगोपांग संकोचीने स्थिर आसने वेसबुं. आ प्रमाणे समजीने पूर्वोक्त बाह्य तपनुं सेवन करनार अभ्यंतर तपनी पुष्टि करे छे.

चारित्र - ए बाह्य तप शरीरनी आरोग्यता माटे पण बहु उ-पयोगी छागे छे. उक्त तप विविध व्याधिओनो संहार करवाने काळ जेवो छागे छे. ए उपरांत तेतुं विधिवत् सेवन करवाथी जे अभ्यंतर तपनी दृद्धि थाय छे तेतुं कंइक स्वरुप मने समजावो.

सुमित—प्रायिश्वत्त, विनय, वैयादृत्य, (वेयावृद्ध्व) स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग (काउस्सग्ग) एवा अभ्यंतर तपना ६ भेद छे. अंतर आत्माने अत्यंत उपकारी होवाथी ते अभ्यंतर तपना नामधी ओळखाय छे. तेमनुं कंइक स्वरूप आपनी तेवी जिज्ञासाधी कहुं छुं ते आप खास ध्यानमां राखी छेशो.

 जाणतां के अजाणतां जे अपराध थयो होय ते गुरुमहा-राजने निवेदी निःशल्य थया वाद गुरु महाराज तेनुं निवारण करवा जे शिक्षा, आपे ते वरावरः पाळवी तेतुं नाम प्रायित्रत समजवुं थयेलाः अपराध संबंधी पोताना मनमां पण पूर्ण पश्चाताप करीहिफरीः तेवी अपराध वीजी वार थइ न जाय तेवी पुरती संभाळ राखवी जोइए.

- सद्गुणी अथवा अधिक ग्रुणीजनो साथे भक्ति, बहुमा-नादि उचित आचरण करतुं ते विनय कहेवाय छे. ग्रुण स्तुति, अवगुणनी उपेक्षा, अने आशातनानो त्याग क-रवो ए सर्व विनयनाज अंगभृत छे. विनय, अनेक दु-र्धर शत्रुओने पण नमावे छे. वळी जिन, अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, साधर्मीभाइ, अने चैत्य (जिनमुद्रा या जिनमंदिर) विगेरे पुज्य वर्ग उपर पूर्ण प्रेम राखवो ए विनयतुं प्रवळ अंग छे.
- श्वाळ, ग्लान, दृद्ध, तपस्वी, संघ, साधर्मीने, वनती स-हाय आपवी, तेमनी अवसरे अवसरे संभाळ लेवी, निः स्वार्थपणे तेमनी सेवा बजाववी ते वैयावच्च कहेवाय छे.
- ४. अभिनव शास्त्रनी वाचना, तेमां पडेला संदेहना समाधान माटे गुरुने पृच्छना, भणेलुं विस्मृत थइ न जाय माटे तेनी परावर्तना—पुनराष्ट्रित करवी, तेमां समायेला गंभीर अर्थनुं चिंतवन करवुं ते अनुमेक्षा अने निश्चित—संदेह

विनानी धर्मकथावडे अन्य आत्माथीजनोने योग्य अव-छंवन देवारुप पांचपकारना स्वाध्यायथी आत्माने अत्यं-त उपकार थतो होवाथी ज्ञांनी पुरुषोए तेने अभ्यंतर तपरुप लेख्यों छे.

अंप्रशस्त अने प्रशस्त अयवा शुभ अने अशुभ अथवा शुंद्ध अने अशुद्ध एवा मुख्यपणे ध्यानना वे भेद छे. आर्त अने रौद्र ए वे अन्शस्त तथा धर्म अने शुक्ल ए वे प्रशस्त ध्यानना भेद छे. कोइ पण वस्तुमां चित्ततुं एकाग्रपणुं थवु ते ध्यान कहेवाय छे. तेथी जो शुभव-स्तुमां चित्त परोवायुं होय तो शुभ ध्यान अने अशुभ - वस्तुमां चित्त परोवायुं होय तो अशुभ ध्यान कहेवाय. छे. मलीन विचारवाळं ध्यान अशुद्ध कहेवाय छे अने निर्मळ विचारवाळुं ध्यान शुद्ध कहेवाय छे. ' मनुष्योने वंध अने मोक्षतुं मुख्य कारण मनज छे. ' एम जे कहे-वाय छे ने आवा शुभाशुभ ध्यानने लड्नेज समजवार्त्र छे. क्षणवारमां प्रसन्नचंद्र राजिष्ण जे सातमी नर्कनां दळीयां मेळव्यां अने पाछां विखेरी नांख्या ते तथा भ-रत महाराजाए क्षणवारमां आरीसो अवलोकतां केवल ज्ञान प्राप्त कर्युं ते सर्व ध्याननोज महिमा छे.

4

देह उपरनो सर्व मोह तजीने अने मन वचनने पण नियममां राखीने एकाग्रपणे—निश्चळ थइ आत्माने अरिहंत सिद्ध संबंधी शुद्ध उपयोगमां जोडी देवों ते कायोत्सर्ग नामे अभ्यंतर तप कहेवाय छे. आवा कायोत्सर्गथी अनेक महात्माओं अक्षय सुखने पाम्या छे, अने अनेक स्वर्गना आधिकारी थया छे; तेथी द-रेक मोक्षार्थी जने तेनो अवस्य अभ्यास करवो योग्य छे. अभ्यास करतां करतां अधिकार वधतो जाय छे. तेथी गमे तेवुं कठिन कार्य पण सुलभ थइ पडे छे अने आत्माने अनंत लाभ प्राप्त थई शके छे.

चारित्र ० — प्राणित्रये! आ तारी अमृत वाणीतुं में अत्यंत रु-चीथी पान कर्युं छे. तेथी मने पण आवा अतुपम धर्मनी प्राप्तिद्वारा अंते अक्षय मुखनी प्राप्ति थशेज एम आ मारुं अंतः करण साक्षी भरेछे.

सुनित—प्राणितय! आ आपनी प्रौढ वाणी खरेखर शुभ अर्थ-सूचक छे. ते सर्वीशे सफळताने पामो! अने आप अपूर्व पुरुषार्थयोगे मारी स्वामिनी शिव-सुंदरीना शीघ्र अधिकारी थाओ! एवी अंत-स्थी दुवा दं छुं:

चारित्र - सुमित ! हुं साचेसाचुं कहुं छुं के धर्मतुं आवं अ-पूर्व स्वरुप समजी, तेतुं गंभीर महात्म्य मनमां भावी, हवे हुं शुद्ध धर्म सेवन द्वारा स्वनाम सार्थक करवाने माराथी वनतुं साहस खे-डवा वाकी राखीश निह, तारी समयोचित किंमती सहायथी हुं मारी धारणामां अवस्य फतेहमंद नीवडीश.

सुमति—तथास्तु ! किंतु आपनो पवित्र हेतु संपूर्ण सिद्ध कर-वाने सबळ सहायभूत पूर्वोक्त धर्मनुं निश्चय अने व्यवहारथी स्वरुप कंइक वारीकीथी समजी लेवानी आपने जरुर छे.

चारित्र - व्यवहार धर्म अने निश्रय धर्मनो मुख्य शो तफावत छे अने तथी शो उपकार थइ शके छे ?

सुमति—व्यवहार धर्म साधन छे, अने निश्रय धर्म साध्य छे. शुद्ध-निश्रय धर्म साक्षात् प्राप्त करवाने व्यवहार धर्म पुष्ट कारणभृत छे. व्यवहार साधन विना निश्रय साधी श्रकाय निहं.

चारित्र ० — पूर्वे वतावेछं धर्मनुं स्वरूप मुख्यताथी केवा प्रकारनुं छे ?

सुमति—धर्मनुं पूर्वोक्त स्वरुप सुख्यताथी व्यवहारनी अपेक्षाये कहेटुं छे तेथी तेमां निश्चयनुं स्वरुप केवळ गौणपणेज रहां छे.

चारित्र त्यारे हवे मने निश्चय धर्मनुं कंइक स्वरुप समजावो.

सुमति—सर्वथा कर्म कलंक रहित निर्मळ ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्य (शक्ति) रुप आत्मानो सहज (निरुपाधिक) स्वभाव एज निश्रय धर्म छे. सत्ता रुपे तो ते सदा आत्मामां स्थित रहेलोज छे.

चारित्र—सत्ता रुपे रहेलो ते धर्म आत्माने उपकारी केम थड़ शकतो नथी अने ते क्यारे अने शी रीते आत्माने उपकारी थड़ शके छे ते समजावो ?

सुमित—आत्मा अनादि कर्म कलंकथी कलंकित थयेली होवा-थी सत्ता मात्र रहेलो धर्म आत्माने सहायभूत थइ शकतो नथी. ज्यारे पूर्वोक्त व्यवहार धर्मनुं रुचि पूर्वक सेवन करवामां आवे छे त्यारे परिणामनी विश्विद्धिथी जेटले जेटले अंशे कर्म मळना हटवाथी आत्म स्वभाव उज्वल थाय छे तेटले तेटले अंशें प्रगट थयेला सत्तागत ध-मेथी आत्माने सहज उपगार थायज छे. यावत शुद्ध व्यवहार धर्मना संपूर्ण वळथी ज्यारे धनघाति कर्म मळनो क्षय थइ जाय छे, त्यारे तो अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र अने अनंत वीर्य रुप सहज अनंत चतुष्ट्यी प्रगटे छे. तथी आत्मा सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, संपूर्ण सुखी अने सर्व शक्तिवंत थाय छे.

चारित्र - व्यवहार धर्म क्यां मुधी कही शकाय छे ते सम-

सम्यग् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्रनी सहायथी राग, द्वेष अने मोहादि

दुष्ट दोषोनो सर्वथा क्षय थाय निह त्यां सुधी तेमनो संपूर्ण क्षय क-रवा माटे काळजी पूर्वक जे जे धर्म करणी करवामां आवे ते ते सर्व व्यवहार करणीयांज लेखाय छे. परंतु एटलो विशेष (तफावत) छे के जेम जेम आत्मा पूर्वोक्त दोषोनो क्षय करवाने विशेषे सन्मुख थतो जाय छे तेम तेम सहज सन्मुख भावे सेवन करवामां आवतो ते व्यवहार शुद्ध, शुद्धतर, अने शुद्धतम कहेवाय छे.

चारित्र०-पूर्वोक्त निश्चय अने व्यवहार धर्मतुं कंइक वधारे स्फुट थाय तेम समजावो ?

सुमित—अनादि कर्म संयोगथी प्रभवता राग द्वेषादिकने पू-वींक्त अहिंसा संयम अने तप रुप धर्मनी सहायथी दूर करीने आ-त्माना स्वाभाविक ज्ञानादिक गुणोने प्रगट करी तेमनुं रक्षण करतुं. पूर्वोक्त प्रमाद योगे तेमनुं विराधन थवा न देवुं तेज निश्रय धर्म छे. सत्तागत रहेष्टा आत्माना स्वभाविक गुणोने ढांकी देनारा कर्म आवरणो ने हठाववाने अनुकूळ जे जे सड़ा-चरण सेवनुं पड़े ते ते सर्व व्यवहार धर्म कहेवाय छे. आधी स्फुट समजाशे के व्यवहार मार्गनुं विवेकथी सेवन करतुं ए निश्रय धर्म सिद्ध करवानुं अवंध्य (अमोध) साधन छे. एटले के व्यवहार का-रण रुप छे अने निश्रय कार्य रुप अथवा फळ रुप छे.

चारित्र०—उक्त खरुपतुं समर्थन करवा मुखे समजी शकाय एवं कोइ पद्यात्मक प्रमाण टांकी देखाडो ? सुमति—महोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी उक्त वातनुं आ प्र-माणे समर्थन करे छे.—

"जेम निर्मलतारे रतन स्फटिक तणी, तेम ए जीव स्वभावः

ते जिन वीरेरे धर्म प्रकाशियो, प्रबल कषाय अभाव, श्री सीमंघर साहिब सांमळो० १

जेम ते राते फूले रातडं, श्याम फूलथीरे श्यामः पुण्य पापथीरे तेम जग जीवने, राग द्वेप परिणाम. श्री सीमंधर० २

धर्म न कहियेरे निश्चय तेहने, जेह विभाव वड व्याधिः पहेले अंगेरे एणी पेरे भाषियुं, कर्मे होय उपाधि. श्री सीमंधर० ३

जे जे अंशेर निरुपाधिकपणुं, ते ते जाणेरि धर्मः सम्यग् दृष्टिरे गुणठाणा थकी, जाव लहे शिव शर्मः श्री सीमंधर० ४

एम जाणीनरे ज्ञान दशा भजी, रहीये आप स्वरूपः

पर परिणतिथीरे धर्म न छंडीये, नाव पडिये भव कूप. श्री सीमंधर साहिब सांभलो० ५ "

आवी रीते वन्ने मार्गनुं योग्य समर्थन करीने उभयनुं आरा-धन करवा आ प्रमाणे कहेलुं छे.

"निश्चय दृष्टि हृदय धरीजी, पाले जे व्यवहार ; पुण्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार. सोभागीः जिन सीमंधर सुणो वात!"

अम दुंकाणमां उक्त महापुरुषे जणान्युं छे के निश्रयने पामवहः इच्छनारे तेनेज हृदयमां स्थापीने—तेना सन्सुखज दृष्टि राखाने विवेकः पूर्वक व्यवहार मार्गनुं सेवन करता रहेनुं. एम करवाथीज अंते साध्य सिद्धि—भवसमुद्रनो अंत आवी शकशे. ते विना भवभ्रमणनो कदापि अंत आवी शकशे निहं. एम समजीने अक्षय मुखना अथीं सर्वे भाइ घहेनोए स्फटिक रत्न जेवो निर्मळ आत्म स्वभाव प्रगट करवानाः परम पवित्र—उद्देशथी तेमां वाधकभूत राग, द्रेष अने मोहादिक कर्म-मळ जेम दूर थाय तेम उपयोग राखी सर्वज्ञभाषित अहिंसा, संयम अने तप लक्षण धर्मनुं सदा यत्नथी सेवन करवुंज उचित छे. अप-भीनुं पण एथीज कल्याण थवानुं निश्चित छे.

धर्म रत्ननी प्राप्तिने माटे अवश्य प्राप्त करवा योग्य गुणो अथवा धर्मनी खरी कुंची.

' जेन चिंतामणी रतन भाग्यहीन जीवोने मळबुं ग्रुस्केल छे तेम अक्षुद्रतादिक उत्तम गुणरहित जनोने पण धर्मरतन मळबुं ग्रुक्के-लज छे.'

'अक्षुद्रतादिक एकवीश गुणोवडे युक्त जीवने जिनमतमां धर्म रत्नने योग्य कहेलो छे. माटे ते गुणोने उपार्जवा धर्माभिलाषीजनोए जरुर यत्न करवो घटे छे. ' उक्त वातनुं समर्थन करता छिता श्रीमद् यशोविजयजी महाराज आ ममाणे कथे छे—

" एकवीश गुण परिणमे, जास चित्त नित्यमेव;
धर्म रत्नकी योग्यता, तास कहे तुं देव. " १
डक्त एकवीश गुणोनी नोंध आ प्रमाणे आपेल छे के—
" क्षुद्र निहं वळी रुपनिधि, सौम्य जनिप्रय धन्न;
क्रूर निहं भीरु वळी, अशड सुद्खिन. २
लज्जालुओ द्यालुओ, सोम दिष्टि मज्जध्य;
गुणरागी सतकथ्य, सुपछ्ख दीर्घदर्शी अध्य. ३
निशेषश द्यानुगत, विनयवंत कृत जाण;
परिहतकारी लब्ब लक्ष, एम एकवीश प्रमाण. ४

गुणगुणीनो कथंचित अभेद संबंध होवाथीज उपर गुणने वदले गुणीतुं निरुपण कर्युं छे. अर्थात् धर्म रत्नने योग्य आवा गुणी थवुंज जोइये. केवा गुणी थवुं जोइये ? तेतुं उपर मुजब प्रथम संक्षिप्त व-णीन करीने पछी कंइक ते संबंधी विशेष वर्णन करवाने बनतो प्रय-त्न कर्युं.

- १. क्षुद्र निहं एटले अक्षुद्र, गंभीर आशयवाळो, सुक्ष्म रीते वस्तुतत्त्वनो विचार करवाने शक्ति धरावनार समर्थ जीव विशेष धर्भ रतनने पामी शके.
 - २. स्पनिथि एटले प्रशस्त स्पवालो, पांचे इंद्रियो जेने स्पष्ट रीते प्राप्त थयेल ले एवो अर्थात् श्वरीर संबंधी सुंदर आकृतिने धार-नार आत्मा.
 - ३. सौम्य एटले स्वभावेज पापदोष रहित, शीतळ स्वभाव वान् आत्माः
 - ४. जनिय एटले सदा सदाचारने सेवनार लोकिय आत्मा.
 - ५. क्रूर निहं एटले क्ररता या निष्टूरतावडे जेतुं मन मलीन थयुं नथी एवो अक्लिष्ट याने प्रसन्न चित्तयुक्त शांत आत्मा.
 - ६. भीरु एटले आलोक संवंधी तथा परलोक संवंधी अपा-यथी हरवावालो अर्थात् अपवादभी^{रु} तेमज पापभीरु होवाथी वधी

रीते संभाळीने चालनार, उभय लोक विरुद्ध कार्यनो अवश्य परि-हार करनार.

- ७. अञ्चठ एटले छळ प्रपंचवडे परने पासमां नाखवाथी दर रहेनार.
- ८. सुदिखन एटले शुभ दाक्षिणतावंत, उचित प्रार्थनानो भंग निहं करवावाळो, समय उचितवती सामानुं दील प्रसन्न करनार.
- ९. लज्जालुओ एटले लज्जाशील, अकार्य वजी सत्कार्यमां सहेजे जोडाइ शके एवा मर्यादाशील पुरुप.
- १०. दयाछओ एटले सर्व कोइ प्राणी वर्ग उपर अतुकंपा राखनार.
- ११. सोमदिष्टि—मज्जथ्य एटले राग द्वेप रहित निष्पक्षपात-पणे वस्तुतत्त्वने यथार्थ रीते ओळखी मध्यस्थताथी दोषने दूर करनार.
- १२. गुण रागी एटले सद्गुणीनोज पक्ष करनार, गुणनोज पक्ष लेनार.
- १३. सत्कथ्य एटले एकांत हितकारी एवी धर्मकथा जैने भिय छे एवो.
- १४. सुपल्ख एटले मुजील अने सानुकूळ छे कुडुंव जेनुं एवो जाडाविळयो.

- १५. दीर्घद्शीं एटले प्रथमथी सारी रीते विचार करीने परि-णामे जेमां लाभ समायो होय एवा शुभ कार्यनेज करवावाळो.
- १६. विशेषज्ञ एटले पक्षपात रहितपणे गुण दोष, हित अहित, कार्य अकार्य, उचित अनुचित, भक्ष अभक्ष्य, पेय, अपेय, गम्य अगम्य विगेरे विशेष वातनो जाण.
- १७. दृद्धानुगत एटले परिपक्व बुद्धिवाळा अनुभवी पुरुषोने अनुसरी चालनार, निहं के जेम आव्युं तेम उच्छृंखलपणे इच्छा म्रजव काम करनार.
- १८. विनयवंत एटले गुणाधिकनुं उचित गौरव साचवनार सुविनीत.
- १९. कृत जाण एटले वीजाए करेला गुणने कदापि निहं वि-सरी जनार.
- २०. परहितकारी एटले स्वतः स्वार्थ विना परोपकार करवा-मां तत्पर, दाक्षिणतावंत तो ज्यारे तेने कोइ प्रेरणा अथवा प्रार्थना करे त्यारे परोपकार करे अने आतो पोताना आत्मानीज प्रेरणाथी स्व कर्तव्य समजीनेज कोइनी कंइ पण अपेक्षा राख्या विनाज परो-पकार कर्या करे एवा उत्तम स्वभावने स्वभाविक रीते धारनार भव्य.

२१. लब्ध लक्ष एटले कोइ पण कार्यने सुखे साधी शके एवो कार्य दक्ष.

हवे उपर कहेला २१ गुणोतुं कंइक सहेतुक व्यान करवानो उपक्रम करवामां आवे छे. जेम शुद्ध करायेला वहा उपरज रंग जो-इये एवो वरावर चढी शके छे परंतु अशुद्ध एवा मलीन वस्न उपर रंग चढी शकतो नथी तेमज उपर कहेला गुण विनाना मलीन आ-त्माने धर्मनो रंग लागतोज नथी. उपर कहेला गुणोवडे विशुद्ध थ-येला आत्मानेज धर्मनो रंग चढे छे. वळी जेम खडवचरडी अने पालीस कर्या विनानी ³भींत उपर चित्र आवेहूव उठतुं नथी परंतु घठारी मठारीने साफ करेली सरखी भींत उपर चित्र जोइये एवं आवेहुब उठी नीकळे छे तेम उपर कहेला गुणोना संस्कार विनाना असंस्कृत हृदय उपर धर्मनुं चित्र वरावर पडी शकतुं नथी पण उक्त गुणोथी संस्कारित हृदय उपर सत्य धर्मनुं चित्र वरावर खीली उठ छे. उक्त गुणोनी पाप्तिद्वारा भव्य आत्मा सत्य धर्मनो उत्तमोत्तम लाभ पामी शके छे एथी उपर कहेला सद्गुणोनो खास अभ्यास करवानी अत्यावश्यकता स्वतः सिद्ध थाय छे, अने तेथीन ते गुण संवंधी वनी शके तेटली समज लेवी पण जरुरनी छे. एमांज जीव्हं खरुं हित समाये छुं छे.

⁹ Rough. 2 Unpolished.

- १ " क्षेद्र स्वभाववाळी अगंभीर अने उछांछळो होवाथी धर्मने सांधी शकतो नथी. ते नथी तो करी शकतो स्वहित के नथी करी शकतो परहित; स्वपरहित साधवानी तेनामां योग्यताज नथी. तेथी स्वपरहित साधवाने अक्षुद्र स्वभावी एवो गंभीर अने ठरेल प्रकृति-वाळोज योग्य अने समर्थ होइ शके छे.
- २ हीन अंगोपांगवाळो, नवळा संघयणवाळो, तथा इंद्रियोमां खोडवाळो स्वपरहित साधवाने असमर्थ होवाथी धर्मने अयोग्य कह्यो छे. केमके धर्म साधवामां तेनी खास अपेक्षा रहे छे. ते विना धर्म साधनमां घणीज अडचण आवे छे. तेथी संपूर्ण अंगोपांगवाळो, पांचे इंद्रिय पूरेपुरी पामेलो अने उत्तम संघयणवाळो सुंदर आकृतिवंत पाणी धर्मने योग्य कह्यो छे. एवी श्रम सामग्रीवाळो जीव शासननी शोभा वधारी शके छे अने सर्वज्ञ भगवाने भाखेला धर्मने सम्यक् पाळी शके छे.
- ३ प्रकृतिथीज शांत स्वभाववाळो जीव प्रायः पापकर्ममां प्रहृति करतोज नथी अने सुखे समागम करी शकाय एवा शीळा स्वभावने छीथे अन्य आकळा जीवोने पण समाधिनुं कारण थइ शके छे. अ-र्थात् आकरी प्रकृतिवाळा पण शीळा स्वभाववाळा सज्जनोना समा-गम्यी ठंडी प्रकृतिना थइ जाय छे. तथी ठंडी प्रकृतिवाळा प्राणी सुखे स्वपरहित साधी शके छे परंतु आकळी प्रकृतिवाळा तेम करवाने असम्थ होवाथी धर्म साधवाने अयोग्य कह्या छे.

४ दान विनय अने निर्मळ आचारने सेवनार माणस सर्व जनोने िमय थइ शके छे अने ते आलोक विरुद्ध तथा परलोक विरुद्ध कार्यने स्वभाविक रितेज तजनार होवाथी सम्यग् दृष्टि जीवोने पण मोक्षमार्गमां वहुमान उपजावनार थइ पढे छे. सदाचार सेवी लोकि प्रिय पुरुष पोतानी पवित्र कहेणी करणीथी अन्य जनोने पण अनुकरणीय थइ पढे छे, तेवी रीते इच्छा मुजव वर्ती अतडो रहेनार माणस कंइ पण विशेष स्वपरहित साधी शकतो नथी.

५ क्रूर माणस क्लिष्ट परिणामथी पोतानुंज हित साधवाने अ-शक्त छतो परनुं हित शी रीते साधी शके ? तेथी ते धर्मरत्नने अयो-ग्य समजवो. सम परिणामने धारण करनार एवो अनुकंपावान— अक्रूर आत्माज मोक्षमार्ग साधवाने अधिकारी होइ शके छे.

६ आलोक संबंधी तथा परलोक संबंधी दुःखनी विचारणा करनार पाप कर्ममां प्रदृत्ति करतो नथी अने लोकापवादथी पण ड-रतो रहे छे एवो भवभीरु माणसज धर्मरत्नने योग्य होइ शके छे. परंतु जे निर्भयपणे—लोकापवादनो पण भय राख्या विना खच्छंद वर्तन करे छे ते धर्मरत्नने योग्य नथीज.

७ अञ्चाठ माणस कोइनी वंचना करतो नथी तेथी ते विश्वास-पात्र अने प्रशंसापात्र वनेछे. वळी ते पोताना सद्भावथी उद्यम करेछे तेथी ते धर्मरत्नने योग्य टरे छे. कपटी माणस तो पर वंचनाथी पो- ताना कुटिल स्वभावने लड़ परने अप्रीतिपात्र वने छे तेमज स्वहितथी पण चूके छे माटे ते धर्मने माटे अयोग्य छे.

८ सुदाक्षिणतावंत पोतानुं कार्य तजी बनी शके तेटलो वीजा-नो उपगार करतो रहे छे तथी तेनुं वचन सह कोइ मान्य राखे छे तेमज सह कोइ तेने अनुसरीने चाले छे. आवा स्वभावथी सहेजे स्वपरहित साधी शकाय छे तथी ते धर्मरत्नने योग्य छे. जेनामां ए गुण नथी ते स्वार्थसाधक अथवा आपमतलवीयाना उपनामथी निं-दापात्र थाय छे माटे ते धर्मरत्नने अयोग्य ठरे छे.

९ छजाशील माणस लगारे पण अकार्य करतां डरे छे तेथी ते अकार्यने दूर तजी सदाचारने सेवतो रहे छे तेमज अंगीकार करेला शुभ कार्यने ते कोइ रीते तजी शकतो नथी. तेथी ते सद्धमेंने योग्य गणाय छे. छजाहीन तो कंइपण अकार्य करतां डरतो नथी तेथी ते अशुभ आचारने अनायासे सेवतो रहे छे. गमे तेवा उत्तम कुळमां उत्पन्न थया छतां ते कुळ मयीदाने तजी देता वार करतो नथी तेथी छजाहीन धर्म रत्नने अयोग्य छे.

१० दया ए धर्मनुं मूळ छे अने दयाने अनुसरीनेज सर्व सद्-अनुष्ठान प्रवर्ते छे एम जिन-आगममां सिद्धांत रुपे कहे छे तेथीज सर्वज्ञ भाषित सत्य धर्मनुं यथार्थ आराधन करवाने दयाळ होवानी खास जहर छे अर्थात् दयाळज धर्म रत्नने योग्य छे. दयाहीन कोइ रीते धर्मने योग्य नथीं केमके तेवा निर्देय परिणामवाळातुं सर्व अतु-प्रान निष्फळ थाय छे.

११ मध्यस्थ एटले पक्षपात रहित एवो सौन्य दृष्टि पुरुष राग देष दूर तजीने शांत चित्तथी धर्म विचारने यथास्थित सांभले छे अने गुणनो स्वीकार तथा दोषनो त्याग करेछे माटे ते धर्मने लायक छे. परंतु पक्षपात गुक्त बुद्धिवालो माणम अंध श्रद्धार्थी वस्तुतत्त्वनो यथास्थित विचारज करी शकतो नथी तो पत्री गुणनो आदर अने दोषनो त्याग शी रीते करी शके ? तथी पक्षपात बुद्धिथी एकांत खेंचताण करी वेसनार धर्म रत्नने योग्य नथीज.

१२ गुणरागी माणस गुणवंतनुं वहु मान करे छे, निर्गुणनी उपेक्षा करेछे, सदगुणनो संप्रह करे छे अने संप्राप्त गुणने सारी रीते साचवी राखे छे. प्राप्त थयेछा गुणोने दोपित करतो नथी. तेथी ते धर्मने योग्य छे. निर्गुण माणस तो बीजा गुणवंतने पण पोतानी जेवा छेखे छे तेथी ते नथी तो करतो तेमनी उपर राग के नथी करतो गुण उपर राग. परंतु उछटो गुणदेषी होइ सदगुणनो पण अनादर करे छे अने आत्म गुणने मछीन करी नांखे छे माटे ते धर्म रतने माटे अयोग्यज छे.

१३ विकथा करवाना अभ्यासवडे कछिषत यनवाळो माणस विवेक रत्नने खोइ देछे अने धर्मयां तो विवेकनी खास जरुर छे. तेथी धर्मार्थी माणसे सत्य पिय थवानो अने सत्य—हितकारी वातनेज कहे वानो अथवा सांभळवानो ढाळ राखवो जोइये. आवा सत्यिपय अने उ सत्यभाषक जीवथी स्वपरतं हित सहेजे थाय छे तेथी तेवा गुणवाळाजः धर्मरत्नने योग्य छे. विकथावंतथी उभयने हानि पहोंचे छे तेथी ते अयोग्य छे.

१४ जेनो परिवार अनुकूळ वर्तनारो, धर्मशील अने सदाचारने सेववावाळो होय एवो जाडाविळयो माणस निर्विध्नपणे धर्मसाधन करी शके छे. पूर्वोक्त स्वभाववाळा कुटुंबथी धर्मसाधनमां कंइ पण अंतराय आववानो संभव रहेतो नथी केमके एवं सानुकूळ कुटुंव तो धर्मसाधनमां जोइये तेवी सहाय दइ शके छे. तेथी धर्मशील अने स-दाचारवाळा अनुकूळ परिवारवाळो धर्मने दीपाववाने योग्य गणांय छे तेवो मतिकूळ आचार विचारवाळा परिवारवाळो योग्य गणांति नथी, केमके तेथी तो धर्म मार्गमां वखतोवखत विघ्न उभा थाय छे माटे शुद्ध अने समर्थपक्षनी पण खास जरुर छे.

१५ दीर्धदर्शी माणस पूर्वापरनो अथवा लाभालाभनो विचार करी जेनुं परिणाम सारंज आवनानो संभव होय, जेमां लाभ वधारे अने क्केश अल्प होय अने जे घणा माणसोने प्रशंसनीय होय तेवां कामनोज आरंभ करेले. तेवा दीर्घदर्शींजनो धर्म रत्नने योग्य छे

केमके ते विचारशील अने विवेकवंत होवाथी सफल प्रवृत्तिने कर-नारा होय छे. ते कंइपण वगर विचार्यु निह बनी शके एवं असा-ध्य कार्य सहसा आरंभताज नथी. जे कार्य सुखे साधी शकाय एवं मालम पढे तेनोज ते विवेकथी आदर करेछे. सहसाकारी बहुधा असाध्य कार्य करवा मंडी जाय छे अने तेमां निष्फल नीवडवाथी ते पश्चातापनो भागी थाय छे तथी ते धर्मरत्नने लायक ठरतो नथी.

१६ विशेषज्ञ पुरुष वस्तुओना गुण दोषने पक्षपात रहितपणे विद्यांनी शके छे तथी पायः तेवा माणसज उत्तम धर्मना अधिकारी कहा छे. जे अज्ञानतावंडे हिताहित, कृत्याकृत्य, धर्माधर्म, मक्ष्याम-क्ष्य, पेयापेय के गुणदोष संबंधी विलक्कल अज्ञात छे ते धर्मने अयोग्यज छे. केमके जे पोतानुं हित शुं छे तेटलुं समजता पण नथी ते शी रीते स्वहित साधी शकशे ? अने स्वहित साधवाने पण असमर्थ हो-वाथी परहितनुं तो कहेवुंज शुं ? तथी पशुना जेवा अज्ञान अने अ-विवेकी जनो धर्मने माटे अयोग्य छे.

१७ परिपक बुद्धिवाळा अर्थात् सिद्दविकादिक गुण संपन्न एवा छद पुरुपो पापाचारमां महित करताज नथी. एम होवाथी तेवा ह-दने अनुसरीने चालनार पण पापाचारथी दूरज रहे छे कैमके जी-वोने सोवत प्रमाणे गुण आवे छे. कहेवत छे के 'जेवी सोवत तेवी तेवी असर.' तेवा शिष्ट पुरुपोने अनुसारे चालनार धर्मरत्नने योग्य

थाय छे परंतु स्वच्छंदे चालनार माणस कदापि धर्मने योग्य थइ श- कतो नथी. केमके ते सदाचारथी तो प्रायः विद्युख रहे छे.

१८ सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सर्वे सद्गुणोनुं मूळ विनय छे, अने ते सद्गुणो वहेज खरुं सुख मेळवी शकाय छे. माटेज जैनशा- शनमां विनयवंत-विनीतने वखाण्यो छे. लौकिकमां पण कहेवाय छे के 'वनो (विनय) वेरीने पण वश करे.' तो पछी शास्त्रोक्त नीति मुजव विनयनो अभ्यास करवामां आवे तो तेना फळनुं तो कहेवुंज शुं? विनयधी सर्व इष्ट्रनी शाप्ति धाय छे. तथी इष्ट्रमुखना अभिलाषी जनोए अवश्य विनयनुं सेवन करवुंज जोइये. अविनीत माणस धर्मनो अधिकारी नयीज. केमके ते तेनी असभ्य द्यत्तिथी कंइ पण सद्गुण पेदा करी शकतो नथी, अने उलटो ठेकाणे ठेकाणे क्लेशनों भागी थाय छे.

१९ कृतज्ञ पुरुष धर्मगुरुने तत्त्वबुद्धिथी परोपकारी जाणीने तेतुं वहुमान करे छे. तेथी सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सद्गुणोनि दृद्धि थाय छे तेथी कृतज्ञ माणसज धर्मरत्नने छायक छे. कृतज्ञ माणस उपर सामान्य उपगार कर्यो होय तो तेने पण ते भूछतो नथी तो असाधारण उपगारने करनार उपगारीने तो ते भूछेज केप? कृतव्र माणस उपगारीए करेछा उपगारने विसरी जङ्ग तेनो उछटो अपवाद करवा तत्पर थइ जाय छे. दूध पाइने उछरेछा सापनी जेम कृतव्र नुकसान करे छे माटे ते धर्मने योग्य नथी.

२० धन्य कृत पुन्य एवे। परिहतकारी पुरुष धर्मनुं खर्र रहस्य सारी रीते समजी प्राप्त करीने निस्पृह चित्त छतो पोताना पूर्ण पुरुष्ययोगे अन्य जनोने पण सन्मार्गमां जोडी दे छे. अर्थात् धर्मनुं खर्र रहस्य जाणनार अने निस्पृहपणे पोतानुं छतुं वीर्य फोरवनार एवा परिहतकारी पुरुषोनीज विष्ठहारी छे. तेवा धन्य पुरुषो स्वपरनुं हित विशेषे साधी शके छे. तेवा भाग्यशाळी भव्यो धर्मने सारी रीते दीपावी शके छे तेथी ते धर्मरत्नने अधिक छायक छे. केवळ स्वार्थ हित्त वाखायी तेवो स्वपर उपगार संभवतो नथी. तेथी नि.स्वार्थ हित राखवानी खास जरूर छे. नि:स्वार्थी जनो परोपकारने पोताना शुद्ध स्वार्थियी भिन्न समजता नथी. अर्थात् परोपकारने पोतानुं खास कर्तव्य समजीने कोइनी परणा विना स्वभाविक रीतेज सेवे छे.

२१ लब्ध लक्ष पुरुष सकळ धर्मकार्यने सुखे समजी शके छे अने ते दक्ष—चंचळ तथा सुखे केळवी शकाय एवो होवाथी थोडा वस्वतमांज सर्व उत्तम कलामां पारगामी थइ शके छे. आवो कार्य दक्ष पुरुप धर्मरत्नने लायक होइ शके छे. परंतु अकुशळ, अशिक्ष-णीय अने मंद परिणामी तेमज अति परिणामी जनो धर्मने लायक थइ शकता नथी. केमके तेमनी नजर सापेक्षपणे सर्वत्र फरी वळती नथी. तेथी तेओ सत्य धर्मथी बाहेर रह्या करे छे, अशीद धर्मना स्वरा रहस्यने पामी शकताज नथी. माटे धर्माथीं जनोए कार्यदक्ष अने कर्तव्य परायण थवानी पण पुरी जरुर छे."

आ प्रमाणे ए एकवीश गुणीनुं कंइक सहेतुक वर्णन ' धर्मअक-रण' ग्रंथने अनुसार करवामां आव्युं छे. ए उपर वर्णवेला गुणो जेमणे संपाप्त कर्या छे ते भाग्यशाळी भव्य जनो धर्मरत्नने लायक थाय छे. ए एकवीश गुण संपूर्ण जेमने त्राप्त थया छे ते उत्कृष्ट रीते लायक छे. चतुर्थ भागे न्यून गुणवाळा भव्य मध्यम रीत्या लायक छे अने अर्था भागथी न्यून गुणवाळा भव्यो जधन्य भागे लायक छे. परंतु तेथी पण न्यून गुणवाळा होय तेतो दरिद्रत्राय—अयोग्य समजनवाना छे. एम समजीने सर्वज्ञ भाषित शुद्ध धर्मना अभिलाषी जनाए जेम वने तेम उक्त गुणोमां विशेषे आद्र करवो योग्य छे. कारण के पवित्र चित्त पण शुद्ध भूमिमांज शोभे छे अने भूमि—शुद्धि उक्त गुणोबहेज थाय छे.

उक्त गुण भूषित भव्य सन्त्रोए शुद्ध धर्मनी प्राप्ति माटे शुद्ध सं-यमधारी सद्गुरु पासे गुश्रुषा पूर्वक धर्मनुं स्वरूप सांभळवा अने तेनुं यनन करवा साथे यथाशक्ति तेनुं परिशीलन करवाने प्रयत्न सेववो जोइये. ते धर्म मुख्यपणे वे प्रकारनो छे. देशविरित धर्म अने सर्व विरित धर्म. देशविरित धर्मना अधिकारी गृहस्थ लोक होइ शके छे अने सर्व विरित धर्मना अधिकारी साधु मुनिराज होइ शके छे. स्थूल धर्का हिंसा, असत्य, अदत्त, मैथुननो त्याग अने परिग्रहनुं प्रमाण करवारूप पांच अणुत्रत, दिग् विरमण, भोगोपभोग विरमण अने अ-नर्थदंड विरमणरूप त्रण गुणत्रत तथा सामायक, देशावगासिक, पौ- षध अने अतिथि संविभागरुप द्वादशवत गृहस्थ (श्रावक) ने होइ शके छे. साधु मुनिराजनें तो सर्वथा हिंसा, असत्य, अदत्त, अब्रह्म तथा परिग्रहना परिहारथी अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने अ-संगतारुप पांच महावतो पाळवा साथे रात्रीभोजननो सर्वथा त्याग करवानो होय छे. (विवेकवंत गृहस्य पण रात्रीभोजननो त्यागज करे छे,) ते उपरांत साधु मुनिराजने नीचेनी दश शिक्षा संपूर्ण रीते पाळ-वानी होय छे अने गृहस्थने वनी शके तेटला प्रमाणमां ते पाळवानी होय छे.

'धर्मनी दश शिक्षा"

१ क्षमा-अपराधि जीवोतुं अंतःकरणथी पण अहित निह इ-च्छतां जेम स्वपरिहत थइ शके तेम सहनशीलता पूर्वक उचित पृष्टिति या निष्टित्ति करवी अने जिनेश्वर प्रश्चना पिवत्र वचननो तेवो मम स-मजीने अथवा आत्माना एवोज धर्म समजीने सहज सहनशीलता धारवो ते.

२ मृदुता—जातिमद, कुळमद, वळमद, प्रज्ञामद, तपमद, रूप-मद, लाभमद अने ऐश्वर्यमद्तुं खरूप सारी रीते समजी तेथी थती हानिने विचारी ते संबंधी मिध्याभिमान तजीने नम्नता याने लघुता थारण करवी. गुणगुणीनो द्रव्य भावथी विनय साचववी, तेमनी उ चित सेवा चाकरी करवी तेमनं अपमान करवाथी सदंतर दूर रहेबं विगेरे नम्रताना नियमो ध्यानमां राखीने स्वपरनी परमार्थथी उन्नति थाय एवो सतत ख्याल राखी रहेबं ते.

३ सरलता—सर्व प्रकारनी माया तजी निष्कपट थइ रहेणी कहेणी एक सरखी पवित्र राखवी। जेम मन, वचन अने कायानी प— वित्रता सचवाय, अन्य जनोने सत्यनी प्रतीति थाय तेम प्रयत्नथी। स्व उपयोग साध्य राखीने व्यवहार करवो ते.

४ संतोष—विषय तृष्णानो त्याग करी, ते माटे थता संकल्फः विकल्पोने शमावी दइ, तुष्ट द्वत्तिने धारण करी, स्थिर चित्तथी सम्यग् दर्शन ज्ञान अने चारित्ररूप रत्नत्रयीतुं सेवन करवुं तेमज सर्व पापः उपाधिथी निवर्तवुं ते.

५ तप—मन अने इंद्रियोना विकार दूर करवा तेमज पूर्व क-र्मनो क्षय करवा समता पूर्वक वाह्य अने अभ्यंतर तपनुं सेवन करवुं. उपवास आदिक वाह्य तप समजीने समता पूर्वक करवाथी ज्ञान ध्यानः प्रमुख अभ्यंतर तपनी पुष्टिने माटेज थाय छे. तेथी ते अवश्य करवाः योग्यज छे. तपथी आत्मा कंचनना जेवो निर्मळ थाय छे.

६. संयम—विषय कषायादिक प्रमादमां प्रवर्तता आत्माने नियममां राखवा यम नियमनुं पालन करवुं, इंद्रियोनुं दमन करवुं, कषायनो त्याग करवो अने मन वचन कायाने वनता काबुमां राख्य वा ते.

- ७ सत्य—सहुने पिय अने हितकर थाय एवुंज वचन विचा--रीने अवसर उचित बोलवुं, जेथी धर्मने कोइ रीते बाधक न आवे ते.
- ८ शौच मन वचन अने कायानी पवित्रता जाळववाने बन-तो प्रयत्न सेव्या करवो. प्रमाणिकपणेज वर्तवुं, सर्व जीवने आत्म समान छेखवा. कोइनी साथे अंशमां पण वैर विरोध राखवो नहि. सहुने मित्रवत् छेखवा, तेमने बनती सहाय आपवी अने गुणवंतने देखी मनमां प्रमुदित थवुं, पापी उपर पण द्वेष न करवो ते.
- ९ निष्परिग्रहता—जेथी मूर्छी उत्पन्न थाय एवी कोइपण व-स्तुनो संग्रह निह करवो. परिग्रहने अनर्थकारी जाणी तेनाथी दूर रहेवुं, कमलनी पेरे निर्लिपपणुं धारवुं. परस्पृहाने तजी निस्पृहपणुं आदरवुं.
- १० ब्रह्मचर्य—निर्मळ मन वचन अने कायाथी किंपाकनी जेवा परिणामे दुःखदायक विषयरसनो त्याग करी निर्विषयपणुं याने विविकारपणुं आदरबुं. विवेक रहित पश्चना जेवी कामक्रीडा तजी सुज्ञीलपणुं सेवबुं. लज्जाहीन एवी मैथुन क्रीडानो त्याग करी आ-रमरित धारवी ते. आ द्याविध धर्मिशिक्षानुं शुद्ध श्रद्धापूर्वक सेवन करवाथी कोइ पण जीवनुं सहजमां कल्याण थइ शके छे. माटे तेनुं यथाविध सेवन करवानी अति आवश्यकता छे. सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र एज मोक्षनो खरो मार्ग छे.

॥ अथ परमातम छत्रीशी. ॥

परम देव परमातमा परम ज्योति जगदीस ।। परमभाव उरआ-नकें प्रणमत हुं नीस दीस ।। १ ।। एक ज्युं चेतन द्रव्य है. तामें तीन प्रकार ॥ विहरातम अंतर कह्यो, परमातम पद सार ॥ २ ॥ वहिरातम ताक़ुं कहै, छखे न ब्रह्म स्वरूप ॥ मगन रहे परद्रव्य है, मिथ्यावंत अनूप ॥ ३ ॥ अंतर आतमा जीव सो, सम्यक् दृष्टि होय ॥ चोथै अरु फुनि वारमै, गुणथानक छों सोय ॥ ४ ॥ परमा-तम परब्रह्मकों, त्रगटयो ग्रुद्ध स्वभाव ॥ लोकालोक प्रमाण सब, झलके तिनमें आय ।। वाहिर आतम भाव तज, अंतर आतमा होय ।। परमातम पद भजतु है, परमातम वहे सोय ।। ६ ।। परमातम सोइ आतमा, अवर न दुजो कोइ ॥ परमातमक ध्यावते, एह पर-मातम होय ॥ ७ ॥ परमातम परब्रह्म है, परम ज्योति जगदीस ॥ परसु भिन्न निहारीथे, जोइ अलख सोइ इस ॥ ८॥ जे परमातम सिद्ध मैं, सोहि आतमा माहिं ॥ मोह मयल इग लगी रह्यो, तामे सुझत नांहि ।। ९ ।। मोह मयल रागादिके, जा छिन कीजे नास ।। ता छिन एह परमातमा, आपहि छहे प्रकास ॥ १०॥ आतम सो परमातमा, परमात सोइ सिद्ध ॥ विचकी दुविधा मीट गइ, प्रगट भइ निज रिद्ध ।। ११ ।। मेंहि सिद्ध परमातमा, मेंहि आतमराम ।। मेंहि ग्याता गेयको, चेतन मेरो नाम ॥ १२॥ मेंहि अनंत सुखको धनी, सुलमें मोहि सोहाय ॥ अविनासी आणंदमय, सोऽहं त्रिभ्रवन

राय ॥ १३ ॥ सुद्ध हमारो रुपहें, शोभित सिद्ध समान ॥ गुण अ-नंत करी संयुत, चिदानंद भगवान ॥ १४॥ जेसो सिवपें तहिवै वसें, तेसो या तनमांहि ॥ निश्रय दृष्टि निहारतां, फेर रंच कछुं नां-हि ॥ १५ ॥ करमनकें संजोग ते, भए तीन प्रकार ॥ एक आतमा द्रव्यकुं, करम नटावण हार ।। १६ ।। कर्म संघातें अनादिके, जोर न कुछ बसाय ।। पाइ कला विवेककी, राग द्वेष छिन जाय ।।१७।। कैरमनकी जर राग हे, राग जरे जर जाय।। परम होत परमातमा, भाइ सुगम उपाय ।। १८ ।। काहेर्कुं भटकत फीरे, सिद्ध होनकें काज ।। राग द्वेषकुं त्याग दे, भाइ सुगम इलाज ॥ १९॥ परमातम पदको धनि, रंग भयो विल्लाय ।। राग द्वेषकी पीति सौ, जनम अकारथँ जाय ॥ २० ॥ राग द्वेषकी मीति तुम, भुले करो जन रंच ॥ परमा-तमपद ढांकके, तुमहि किये तिरयंच ॥ २१॥ जप तप संजम सब भले, राग द्वेष यौ नाहि॥ राग द्वेष जो जागते, ए सव भये ज्युं नाहिं ॥ २२ ॥ राग द्वेषके नासते, परमातम परकास ॥ राग द्वेषके भासते, परमातम पद नास ॥ २३ ॥ जो परमातम पद चहें, तो तुम राग निवार ।। देखी संजोग स्वामीको, अपने हिये विचार ॥२४॥ लाख वातकी वात इह, जोक्क देइ वताय ॥ जो परमातम पद चहे,

१ जेम सिद्ध भगवान सिद्धक्षेत्रमां विराजे छे. २ कर्मनुं मूळ राग छे, राग गये छते निमूळ थये छते कर्मनो अंत आववानो छे अने त्यारेज परमात्मपद प्राप्त थवानुं छे. ३ निष्फळ

राग द्वेष तज भाइ ॥ २५ ॥ राग द्वेष त्याग वित्तु, परमातम पद नाहिं ।। कोटि कोटि जप तप करे, सब अकारथ जाय ।। २६ ।। दोष आतमाकुं इह, राग द्वेषको संग ॥ जेसे पास मजीउमें, वस्त्र और हि रंग ।। २७ ।। तेसे आतम द्रव्यकुं, राग द्वेषके पास ।। कर्म रंग लागत रहे, कैसे लहे प्रकाश ॥ २८ ॥ इण कर मनको जीतवो, कठीन वात हे वीर ॥ जरै खोदे वित्तं निह मिटें, दुष्ट जात वे पीरें ॥ २९ ॥ छैल्छोपतो के कीयो, ए मिटवे के नाहि ॥ ध्यान अ-गनी परकाशके, होम देहि ते मांहि ॥ ३०॥ ज्युं दारु के गंजकुं, नर नहि शके उठाय।। तनकैं आग संजोग ते, छिन एकमें उड जाय ॥ ३१ ॥ देह सहित परमातमा, एह अचरीजकी वात ॥ राग द्वेषके त्यांग ते, करन शक्ति जरी जात ॥ ३२ ॥ परमातम के भेंद द्वय, निकल सगल परवान ।। सुख अनंतमें एकसे कहेवे के द्वय थाय ॥ ।। ३३ ।। भाइ एह परमातमा, सोहं तुममें याहि ।। अपणि भक्ति संभारके लिखा वग देतांहि ॥ ३४॥ राग द्वेष कुं त्यागके, धरी परमातम ध्यान ॥ युं पावे सुख सास्वत, भाइ इम कल्यान ॥३५॥ परमातम छत्रीसी को, पढियो जीति संभार ॥ चिदानंद तुम प्रति लखी आतम के उद्धार ॥ ३६ ॥ इति.

१ मूळ. २ पीड, आपदा. ३ छछोपतो कर्ये, खेद मात्र धारवाथी कंइ वळवानुं नथी, ते माटे तो प्रवळ पुरुषार्थनी जरूर छे. ४ तणखो, अरुप मात्र.

अथ श्री अमृतवेलीनी सङ्झाय.

चेतन ज्ञान अजुवालीयें, टालीयें मोह संतापरे, चित्त डमडो-लतुं वालीयं, पालीयं सहज गुण आपरे ॥ चे०॥ १॥ उपशम अ-मृत रस पीजीयें, कीजीयं साधु गुणगानरे, अधमवयणें नवि खीजीयें, दीजीयें सज्जनने मानरे. ॥ चे०॥ २ ॥ ऋोध अनुबंध निव राखीयें भाखीयें वयण मुखे साचरे; समिकत रत्न रुचि जोडीयें, छोडीयं क्रमति मति काचरे ॥ चे० ॥ ३ ॥ शुद्ध परिणामने कारणें, चारनां शरण धरे चित्तरे, प्रथम तिहां शरण अरिहंततुं, जेह जगदीश जग ³मित्तरे ॥ चे० ॥ ४ ॥ जे समोसरणमां ^४राजतां, भांजतां भविक संदेहरे; धर्मना वचन वरसे सदा, पुष्करावर्त्त जिम मेहरे ॥ चे० ॥ ॥ ५॥ शरण बीजुं भने सिद्धनुं, जे करे कर्म "चकचूररे; भोगवे राज शिवनगरतुं, ज्ञान आनंद भरपुररे ॥ चे० ॥ ६ ॥ साधुनुं शरण त्रीजं धरे, जेह साधे शिव पंथरे; मूल उत्तर गुण जे वर्या, भवतर्या भाव रिनंग्रंथरे ॥ चे० ॥ ७ ॥ शरण चोथुं करे धर्मनुं, जेहमां वर दया भावरे, जे सुखहेतु जिनवर कहां, पापजल तारवा नावरे ॥चे० ८ ।। चारनां शरण ए पडिवजे, वली भजे भावना शुद्धरे; दुरित सवि आपणां निंदिये, जेम होये संवर दृद्धिरे ॥ चे० ॥ ९ ॥ इहभव

१ नीच, २ परंपरा, ३ मित्र, ४ शोभतां, ५ क्षय, ६ साधु, ७ प्रधान, ८ दुष्कर्म.

परभव आचर्या, पाप अधिकरण मिथ्यातरे; जेह जिनाशातनादिक घणां, निंदिये तेह गुण घातरे ॥ चे० ॥ १० ॥ गुरुतणां वचन ते अवगणी, गुंथिया आप मत जालरे, वहुपरे लोकने भोलव्यां, निंदिये तेह जंजाछरे ॥ चे० ॥ १२ ॥ जेह हिंसा करी आकरी, जेह वोख्या ^१मृषावादरे, जेह परघन हरी हरखीयां, कीघलो काम उन्मादरे ॥ चे० ॥ १२ ॥ जेह धन धान्य मूर्छी धरी, सेविया चार कषायरे; रागने द्वेषने वज्ञ हुआ, जे कीयो कलह उपायरे ॥ चे० ॥ १३ ॥ जूठ जे आल परने दियां, जे कर्यी विश्वनता पापरे, रात अराति निंद माया मृषा, विख्य मिथ्यात्व संतापरे ॥ चे० ॥ १४ ॥ पाप जे ए-हवां सेत्रीयां, तेह निंदिये त्रीहुं कालरे, मुकृत अनुमोदना कीजियें, जिम होये कर्म विसरालरे ॥ चे० ॥ १५ ॥ विश्व उपगार जे जिन करे, सार जिन नाम संयोगरे, ते गुण तास अनुमोदिये, पुण्य अनु-वंध शुभ योगरे ॥ चे० ॥ १६ ॥ सिद्धनी सिद्धता कर्मना, क्षय थकी उपनी जेहरे, जेह आचार आचार्यनो, ³चरण वन सिंचवा मेहरे ॥ चे० ॥ १७ ॥ जेह ^४उवझायनो गुण भलो, सूत्र सज्झाय परिणामरे, साधुनी जे वळी साधुता, मूल उत्तर गुण धामरे ॥ चे० ।। १८ ।। जेह विरति देश श्रावक तणी, जे समकित सदाचाररे; समिकत द्रष्टि सुरनर तणी, तेह अनुमोदिये साररे ॥ चे० ॥ १९ ॥ अन्यमां पण दयादिक गुणा, जेह जीन वचन अहुसाररे; सर्व ते

१ असत्य वचन, २ चाडीयापणुं, ३ चारित्र, ४ उपाध्याय.

चित्त अनुमोदियें, समिकत बीज निरधाररे ॥ चे० ॥ २० ॥ पा नवी तीत्र भावे करी, जेहने नवी भव रागरे; उचित स्थिति जेह सेवे सदा, तेह अनुमोदवा लागरे ॥ चे० ॥ २१ ॥ थोडलो पण गुण परतणो, सांभळी हर्ष मन आणरे; दोप छव पण निज देखतां, निज गुण निज आतमा जाणरे ॥ चे० ॥ २२ ॥ उचित व्यवहार अव-लंबने, एम करी स्थिर परिणामरे; भाविये शुद्ध नय भावना, ^१पा-वनाशय तणुं ठामरे ॥ चे० ॥ २३ ॥ देह दमन वचन पुद्गळ थ-की, कर्मथी भिन्न तुज रुपरे; अक्षय अकलंक छे जीवतुं, ज्ञान आनंद स्वरूपरे ॥ चे० ॥ २४ ॥ कर्मथी कल्पना उपजे, पवनथी जेम जल-धि वेलरे; रूप प्रगटे सहज आपणुं, देखतां द्रष्टि स्थिर मेलरे ॥ चे० ॥ २५ ॥ धारतां धर्मनी धारणा, मारतां मोह वड चोररे; ज्ञान रुची वेल विस्तारतां, वारतां कर्मनुं जोररे ॥ चे० ॥ २६ ॥ राग विष दोष उतारतां, जारतां द्वेष रस शेषरे; पूर्व म्रानि वचन संभारतां, ²सारतां कर्म निःशेषरे ॥ चे० ॥ २७ ॥ देखीयं मार्ग शिव नगर-नो, जे उदासिन परिणामरे; तेह अणछोडतां चालियें, पामियें जीम परम धामरे ॥ चे० ॥ २८ ॥ श्री नय विजय गुरु शिष्यनी, शिख-ही अमृतवेलरे; एह जे चतुर नर आदरे, ते लहे मुयश रंगरेलरे ॥ ॥ चे० ॥ २९ ॥ ॥ इति श्री हितशिक्षा सज्झाय समाप्त ॥

१ पवित्र इरादो, २ नाश करता.



		-	
•			
•			
		•	

श्री जैन हितोपदेश भाग त्रीजो

मंगलाचरण रुप.

श्री हेमचंद्राचार्य विरचित श्री महावीरजिन स्तोत्रः सारांश.

- अध्यात्म वेदीने पण पराकिष्टिथी प्राप्य विद्वानोने पण व-चन अगोचर अने चर्म चक्षुने प्रगट न देखाय एवा श्री वर्धमान प्र-भ्रुनी स्तुति करवा प्रयत्न करुंछुं.
- २. हे ममु तारी स्तुति करवा योगीजनो पण असमर्थ छे; तहे मारा जेवानुं तो कहेबुंज शुं ? परंतु गुणानुराग तो तेओनी परे मारे पण निश्चल छे. आवो निश्चय करीने तारी स्तुति करतो हुं पोते मूर्क छतां अपराधी ठरतो नथी.
- ३. गंभीर अर्थवाळी श्री सिद्धसेन सुरिनी रचेली स्तुतियों नयां ? अने आ अणकेळवायेली स्तुति क्यां ? तथापि हस्ति नायकना. पंथे चालनारों तेनो बाळ गतिमां स्खलना पामतो छतो शोदवा योग्य नथी. कैमके ते खिपतानाज पनोते पगले चालनारों होवाथी अंते पितानी पवित्र पदवी माप्त करी शकेज छे.
 - ४. हे जिनेंद्र विविध उपायोवडे आप जे दुष्ट दोषोने दूर करी

? इ. छतां जे आ लोको आपना सर्वोत्तम शासननो अनादर करे छे; यातो तेमां गरविश्वास धारे छे; ते दुषमा काळनो दोष छे, अथवा तो ते तेमना खरेखर उदय प्राप्त थयेला अशुभ कर्मनोज दोष छे.

१४. हजारो गमे वर्षो सुधी तप करो, तथा युगनायुग सुधी योगनी उपासना करो, तोपण आपना पित्र मार्गने पव ड्या विना मोक्षनी इच्छा राखता छतां ते बापडा मोक्षने पामता नथी. माटे मोन्क्षार्थी सज्जनोए शुद्ध तत्त्वने सम्यग् समजी तेनोज आदर करवो युक्त छे. शुद्ध तत्त्वने बरावर ओळखीने तेनो पूर्ण प्रेमथी स्वीकार करो तेमांज तन्मय थइ रहेनार अवस्य मोक्षने पामी शके छे. आपनी पित्र भक्तिथी भव्य जनोने दिव्य चक्षुवडे अविरुद्ध मार्गछं न्यथार्थ भान तथा प्रतीति थाओ! तथास्तु!!



ज्ञानसार सूत्र रहस्य-प्रस्तावना.

जै सहज स्वरूप साधवाने जेवा लक्षयी जिनेश्वर देवे जिन -मतानुयायी जनोने स्व स्व योग्यतानुसारे धर्म साधन करवा फरमा-च्युं छे तेनुं संक्षेपथी पण निचोलक्ष्पे स्वरूप आ यंथ उपरथी वारी--कीथी जोतां समजाशे. तेथी तत्त्व गवेषी जनोज आ ग्रंथना अधि-कारी छे.

आ ग्रंथमां जूदा जूदा ३२ अगत्यना विषयो सवल युक्ति पूर्वक समजाववामां आव्या छे. ते ते विषयोतुं मध्यस्थतार्थाः मनन करतां कोइपण भव्यात्मा विषय—कामनादिकथी व्याष्ट्रत्त थइ सहेजे निष्टत्ति मार्गे चढे एवं तेमां सामर्थ्य छे. रागादिक अंतरंग वैरी मात्रनो जय करनार जिनेश्वर देव आत्म कल्याणार्थीओने केवो सन्मार्ग उपदिशे छे, ते आवा गंथधी सहेजे समजी शकाय छे. आ गंथ तत्त्वज्ञाननो एक नमूनो छे. यग्रपि जैनदर्शनमां तत्त्वज्ञान संबंधी सेंकडो ग्रंथो विश्रमान छे, तोपण ते सर्वेमां जे कंइ वक्तव्य छे तेनुं अत्र दोहमरूपे कथन करेलुं छे, एमः उक्त प्रंथना नाम तथा तद् अंतर्गत विषयो जपरथी समजी शक्तयः छे. आ विषयोत्तं स्वरूप एकाएक तेना सारा संस्कार विना वांचवा मात्रथी समजी शकाय एम नथी माटे तेनुं मनन करवा अने तेम करी जहर जणाय त्यां गुरु गम्य लही समज्वा दरेक कल्याणार्थींने प्रथम भलामण छे. निश्चय अने व्यवहार ए वंने मार्ग जिनोपदिष्ट छे. व्यवहार मार्गे थइने निश्चय मार्ग साधी शकाय छे. शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्रमां एकता पामी—तन्मय थइ जबुं ए निश्चय मार्ग छे. अथवा विभावने वमी—परस्पृहाने तजी स्वभाव रमणी थबुं, स्वरूपस्थ थइ रहेबुं, तेज निश्चय मार्ग छे; तेने पमाडनार व्यवहार मार्ग छे. ते व्यवहारनी उपेक्षा करनार उभय भ्रष्ट थायछे, जे माटे आ ग्रंथकारज अन्य स्थळे कहे छे के—

निश्चय दृष्टि हृद्य धरीजी, जे पाले व्यवहार ॥
पुन्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार.
॥ मन मोहन जिनजी०॥

आ अपूर्व ग्रंथना आदर पूर्वक अभ्यासथी भव्यात्माओ अक्षय सुखना अधिकारी थाओ ! एम इच्छी आ प्रस्तावना पूर्ण करुं छुं.

> लेखक स्वपर हितकांक्षी, कर्पूरविजयजी.

श्री जैनहितीपदेश भाग ३ जो.

॥ ज्ञानसार सूत्र ॥

रहस्यार्थ साथे. १ पूर्णता—अष्टक.

ऐंद्र श्री सुल मग्नेन ॥ लीलालग्निमवालिलम् ॥ सिवदानंदपूर्णेन ॥ पूर्णं जगदवेश्यते ॥ १ ॥ पूर्णता या परोपायेः ॥ सा याचितक मंडनं ॥ या तु स्वाभाविकी सैव ॥ जात्यरत्न विभानिमा॥२ ॥ अवास्तवी विकल्पेः स्यात् ॥ पूर्णताब्ये स्विमिभिः ॥ पूर्णानंदस्तु भगवाँ ॥ स्तिमितो दिध सिन्निमः ॥ ३ ॥ जागिति ज्ञान दृष्टि श्रेत् ॥ तृष्णा कृष्णाऽहिजांगुली ॥ पूर्णानंदस्य तिकस्या ॥ हैन्य वृश्चिक वेदना ॥ ४ ॥ पूर्णनंदस्य तिकस्या ॥ हैन्य वृश्चिक वेदना ॥ ४ ॥ पूर्णनंद् सुधा स्निग्धा, दृष्टिरेषा मनीषिणाम् ॥ ५॥

अपूर्णः पूर्णतामेति, पूर्यमाणस्तु हीयते ॥
यूर्णानंद स्वभावोऽयं ॥ जगदद्भुत दायकः ॥ ६ ॥
यरस्वत्व कृतोन्माथा ॥ भूनाथा न्यूनते क्षिणः ॥
स्वस्वत्व सुख पूर्णस्य ॥ न्यूनता न हरे रिप ॥ ७ ॥
कृष्णेपक्षे परिक्षीणे ॥ शुक्के च समुदंचित ॥
चोतते सकला ध्यक्षा ॥ पूर्णानन्द विधोः कला ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

र. इंद्रनी साहेबी जेवा युखमां मग्न थयेलो जीव जेम जगत मात्रने सुखमय देखे छे तेम सहज आत्मयुखथी पूर्ण पण जगत मात्रने पूर्णज देखे छे, जेम संपूर्ण सुखी सर्वने सुखमय देखे छे, तेम सहजानंद पूर्ण दृष्टि पण सर्वने पूर्णज देखे छे. अथवा आत्मानी सहज संपत्ति संबंधी स्वभाविक सुखमां मग्न थयेल शुद्ध-ज्ञानानंदी पुरुप, आ समस्त जगतने इंद्र-जाल तुल्य कल्पित क्षणिक पुद्गलिक सुल्यां मग्न थइ रहेल देखी, तथी उदासीन-विरक्त थइ रहे छे. कर्विषत पुद्गलिक पूर्णतानो परिहार करनार, प्राणी सहज आत्मिक पूर्णता पामी शके छे.

२. परउपाधिवाली पूर्णता कोइना याची लावेला घरेणा जेवी

छे अने स्वभाविक पूर्णता तो जातिवंत रत्ननी कांति जेवी छे. उपा-धिमय खोटी मानी लीधेली पूर्णता चिर स्थायि निह होवाथी क्षणिक छे, अने खरी आत्मिक पूर्णता तो चिर स्थायी होवाथी अविहड छे. पहेलीने पुंठ देवाथी वीजी खरी पूर्णता पामी शकाय छे.

- ३. समुद्रमां मोजांनी जेम विकल्प तरंगथी मानेली पूर्णता खो-टी छे अने तेवा विकल्प रहित खरी पूर्णतावाला सहजानंदी सत्पुरुष तो शान्त महासागर जेवाज निश्चल होय छे. खोटी पूर्णता तोफानी समुद्र जेवी हालकलोलवाली छे तेथी विश्वास राखवा योग्य नथी अने खरी पूर्णता तो शान्त महासागर जेवी निश्चल होवाथी सर्वदा विश्वासपात्र तथा आद्रवा योग्यज छे पूर्ण अधिकारीनेज ते प्राप्त थाय छे.
- ४. तृष्णारूपी कालानागत झेर कापना जांगुली मंत्र जेनी ज्ञा-नदृष्टी जेने जागी छे एवा पूर्णानंदी पुरुषने दीनतारूपी वींछीडानी वेदना शा हीसानमां छे? खरी वात छे के जेणे तृष्णाने समूलगी छेदी नांखी छे तेने परनी दीनता करवानु कांइपण भयोजन रहुं न-थी, तृष्णाना तरंगमां तणातानेज परनी दीनता करवी पडे छे.
- ५. कृपण लोको जेनाथी संतोष माने छे एवी पुद्गलीक वस्तु ओनी उपेक्षा करवी तेज साची पूर्णता छे. विवेकी पंडितनी दृष्टि पूर्ण आनंद अमृतथी भरेली होय छे. एवा स्त्राभाविक गुख्थी कृपण लोको केवल कमनसीव रहे छे.

यस्य दृष्टिः कृपा वृष्टि, गिरः शमसुधा किरः॥ तस्मै नमः शुभ ज्ञान, ध्यान मग्नाय योगिने॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. पुद्गलानंदीपणुं तजी दइ पांचे इंद्रियो उपर काबु मेलवीं पोताना मनने समाधिमां स्थापी केवल ज्ञानामृतनुंज सेवन करनार पुरुष स्वभाव मन्न थयो कहेवाय छे. ज्यां सुनी जीव पोताना मन तथा इंद्रियोने पातेज वश छे त्यां सुधी ते विभावमां मन्न छे. विभावनो त्याग करनार स्वभावने पानी अनुक्रमे तेमां मन्न थई शके छे माटे मन तथा इंद्रियोने वंश करवा प्रमाद रहित पवित्र ज्ञानामृतनुंज सेवन करवा अहोनिश उजमाल थई रहेवुं युक्त छे.
- २ ज्ञानामृतना सागर एवीं परब्रह्म-परमात्म स्वरुपमां जे मग्न थयेल छे तेने वीजी वावत हैं लाईल झेर जेवी लागे छे. जेणे श्लीर समुद्रना जलनुं पान कर्यु होय तेने खारा जलथी तृप्ति केम बळे? जेणे शान्तरसनुं पान कर्यु तेने विषयरस केम गमे?
- ३. सहजानंद मुखमां मृत्र अने जगत स्वरुपने जोनारने पर-भावनुं करवापणुं घटतुं नथी. तेने तो फक्त सर्वभावमां साक्षीपणुंज होवुं घटे छे. सर्व परभावमां तटस्थपणुं त्यजीने कर्तापणुं करवा जतां

स्वभाव हानि थाय छे माटे मोक्षार्थी जीवने सर्वत्र कर्तृत्व अभिमान सर्वथा त्यजी तट्सथपणुंज आदरवं युक्त छे.

- ४. परंत्रहामां मन्न थयेल महापुरुषने पुद्गल संबंधी कथाज निय लागती नथी। तो अनर्थकारी सुवर्णादिक द्रव्यनो संचय के मनोहर स्त्रीयोमां आसिक तो होयज शानी? स्वरूप सुखमां मन्न थयेलने क नक के कामिनी व्हालां लागतांज नथी.
- ५. जेम जेम दीक्षानो पर्याय वधतो जाय छे तेम तेम साधु पुरुषने चित्तसमाधिमां वधारो थतोज जाय छे एम भगवती सूत्रा-दिकमां कहुं छे ते आवा स्वरूप मन्न साधुओमांज घटमान थाय छे. कहुं छे के १२ वार मासनी दीक्षावाला मुनि अनुत्तर विमानवासी देवना मुलने उल्लंघी जाय छे. ते देव करतां पण आवा मुनि अधिक मुखी होय छे. कारण के दीन्ना दृष्टिथी तेमनी लेक्स्याशुद्धि थती जाय छे. अने निर्मल लेक्स्या योगे चित्तनी अधिक मसन्नता होय छे, जेथी स्वभाविक मुखमां वधारो थतो जाय छे. १२ मासमां आटलं मुख थाय छे तो अधिका अधिक दीक्षा पर्यायनं तो कहेवंज शं १ मबल शान्त वाहितावहे केवल निजलक्ष्यमां मन्न थइ रहे छे.

६ ज्ञानामृतमां मग्न थयेलाने जे सुख संभवे छे ते मुखयी कही शकाय तेवुं नथी. मियानुं मेमालिंगन के चंदननो रस तेवी शीतल-तानुं सुख आपी शकेज नहिं. केमके मथमनुं सुख सत्य खभाविक

- ६. उपाधिथी रहित पुरुषज सहज पूर्णता पामे छे; पण उपा-धिग्रस्त तो तेथी रहितज रहे छे, एवो पूर्णानंदनो सहज स्वभाव ज-गतने आश्चर्यकारक लागे छे.
- ७. परने पोता मं मानवारूप मोहथी उन्मत थएला पृथ्वीपितयो न्युनताने न देखे छे, गमे तेटली संएत्तिथी संतोष पामता नथी अने आत्माना स्वभाविक ज्ञानादिक ग्रुण रहोने ज पोताना गणी पूर्ण मुख पामेला पुर्णानंदी पुरुष तो इंद्र करतां को इरीते न्युन नथी ज पुर्णानंदी पुरुष सदा सहजानंदमां मग्रज रहे छे.
- ८ जिम कृष्णपक्षनो क्षय थये छते अने शुक्रपक्षनो उदय थये छते चंद्रमानी कला सर्व देखे तेवी रीते खीलवा मांडे छे, तेम सर्व प्रद्वाल परावर्तननो अंत थये छते अने चरम पुद्धल परावर्तन मात्र शेष रह्ये छते असत् क्रियाना त्याग पूर्वक सत् क्रियारुचि जागृत थतां सहजानन्द कलानी अनुक्रमे अभिद्यदिद्वारा अंते पूर्णानंदचंद्र मगटे छे.

पूर्णानंदी पुरुप चंद्रनी पेरे साक्षात् स्वभाविक सुख—चंद्रिकाने अनुभवी अनेक भव्य चकोरोंने आनंददायक थइ शके छे. भव्य च-कोरो पूर्णानंद चंद्रना वचनामृतनुं पान करी करीने पुष्ट वनी आनंद मश थइ जाय छे.

॥ २॥ मग्नता—अष्टक.॥

प्रत्याहत्येदिय व्युहं ॥ समाधाय मनो निजम ॥ दधिचन्मात्र विश्रांतिं मग्न इत्यभिधीयते ॥ १॥ यस्य ज्ञान सुधासिंधौ, परब्रह्मणि मग्नता ॥ विषयांतर संचार, स्तस्य हालाहलोपमः ॥ २ ॥ स्वभाव सुख मग्नस्य, जगत्तत्वावलोकिनः॥ कर्तृत्वं नान्य भावानां, साक्षित्वमवशिष्यते ॥ ३ ॥ परब्रह्मणि मग्नस्य, श्रुथा पौद्रलिकी कथा ॥ कामी चामी करोन्मादाः, स्कारा दाराद्रशः कच॥४॥ तेजो लेखा विश्वद्धिर्या, साधोः पर्याय बुद्धितः ॥ भाषिता भगवत्यादौ, सेत्थं भूतस्य युज्यते ॥ ५ ॥ ज्ञान मग्नस्य यच्छर्म, तद्वक्तुं नैव शक्यते ॥ नोपमेयं प्रिया श्रेषे, नीपि तचंदनद्रवेः ॥ ६ ॥ शम शैंत्य पुषो यस्य, विश्वषोपि महाकथा ॥ कि स्तुमो ज्ञान पीयूषे, तत्र सर्वांग मग्नता ॥ ७॥

यस्य दृष्टिः कृपा वृष्टि, गिरः शमसुधा किरः ॥ तस्मै नमः शुभ ज्ञान, ध्यान मग्नाय योगिने ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. पुद्गलानंदीपणुं तजी दइ पांचे इंद्रियो उपर काबु मेलवीं पोताना मनने समाधिमां स्थापी केवल इन्तामृतनुंज सेवन करनार पुरुष स्वभाव मन्न थयो कहेवाय छे. ज्यां सुनी जीव पोताना मन तथा इंद्रियोने पोतेज वश छे त्यां सुधी ते विभावमां मन्न छे. विभावनो त्याग करनार स्वभावने पामी अनुक्रमे तेमां मन्न थइ शके छे माटे मन तथा इंद्रियोने वंश करवा प्रमाद रहित पवित्र ज्ञानामृतनुंज सेवन करवा अहोनिश उजमाल थइ रहेवुं युक्त छे.
- २ ज्ञानामृतना सागर एँची परब्रह्म-परमात्म स्वरुपमां जे मम थयेल छे तेने बीजी बाबत हैं लाईल झेर जेवी लागे छे. जेणे सीर समुद्रना जलनुं पान कर्यु होय तेने खारा जलथी तृप्ति केम बळे ? जेणे शान्तरसनुं पान कर्यु तेने विपयरस केम गमे ?
- ३. सहजानंद सुखमां मग्न अने जगत स्वरुपने जोनारने पर-भावनुं करवापणुं घटतुं नथी. तेने तो फक्त सर्वभावमां साक्षीपणुंज होनुं घटे छे. सर्व परभावमां तटस्थपणुं त्यजीने कर्तापणुं करवा जतां

स्वभाव हानि थाय छे माटे मोक्षार्थी जीवने सर्वत्र कर्तृत्व अभिमान सर्वथा त्यजी तट्स्थपणुंज आदरवं युक्त छे.

- ४. परव्रह्ममां मत्र थयेल महापुरुषने पुद्गल संबंधी कथाज निय लागती नथी. तो अनर्थकारी सुवर्णादिक द्रव्यनो संचय के मनोहर स्त्रीयोमां आसिक्त तो होयज ज्ञानी ? स्वरूप सुखमां मत्र थयेलने क नक के कामिनी व्हालां लागतांज नथी.
- ५. जेम जेम दीक्षानो पर्याय वधतो जाय छे तेम तेम साधु पुरुषने चित्तसमाधिमां वधारो थतोज जाय छे एम भगवती सूत्रा-दिसमां कहां छे ते आवा स्वरुप मन्न साधुओमांज घटमान थाय छे. कहां छे के १२ वार मासनी दीक्षावाला ग्रुनि अनुत्तर विमानवासी देवना ग्रुलने उल्लंघी जाय छे. ते देव करतां पण आवा ग्रुनि अधिक मुखी होय छे. कारण के दीक्षा दृद्धियी तेमनी लेक्स्याशुद्धि थती जाव छि. अने निर्मल लेक्स्या योगे चित्तनी अधिक मसन्नता होय छे, जेथी स्वभाविक ग्रुखमां वधारो थतो जाय छे. १२ मासमां आदलं ग्रुख थाय छे तो अधिकाऽधिक दीक्षा पर्यायनं तो कहेवंज शं १ प्रवल जान्त वाहितावडे केवल निजलक्ष प्रमां मन्न थइ रहे छे.

६ ज्ञानामृतमां मग्न थयेळाने जे छुख संभवे छे ते मुख्यी कही शकाय तेवुं नथी. त्रियानुं भेमाळिंगन के चंदननो रस तेवी शीतळ-तानुं छुख आपी शकेन नहिं. केमके प्रथमंतुं छुख सत्य स्वभाविक अने अतींद्रिय छे अने ियादिकनुं सुख क्षणिक कृत्रिम अने इंद्रिय गोचर होवाथी विभाविक अने असत्य भ्रमात्मक छे.

७. सहज स्वभाविक शीतलताने पुष्टि करनार ज्ञानामृतना लेश मात्रतुं सुख अपार छे. तो तेमां सर्वीशे निमग्न थइ रहेनार महापुरु-पना महिमातुं तो कहेवुंज शुं?

८. जेनी दृष्टिमांथी करुणारस वर्षी रह्यों छे अने जेनां वचन समतारुपी अमृतनुं सिंचन क्यों करे छे एवा ग्रुभ ज्ञान अने ध्यानमां मग्न थयेछा महापुरुषने नमस्कारं! जेनी दृष्टिमां करुणा भरेछी छे, तेमज जेनी वाणी अमृत जेवी मीठी अने ज्ञीतल छे, तेने नमस्कार!

॥ ३॥ स्थिरता—अप्टक ॥

वृत्स किं चंचल स्वांतो, आंत्वा आंत्वा विषीदसि ॥ निधि स्व सिन्नधावेव, स्थिरता दर्शियष्यित ॥ १ ॥ ज्ञान दुग्धं विनश्येत, लोभ विक्षोभ कूर्चकैः ॥ आम्ल द्रव्यादिवाऽस्थैर्या, दिति मत्वा स्थिरो भव॥॥ अस्थिर हृदये चित्रा, वामेत्राकार गोपना ॥ पुश्चल्या इव कल्याण, कारिणी न प्रकीर्तिता ॥ ३ ॥ अंतर्गतं महाशल्य, मस्थैर्यं यदि नोध्धतम् ॥ क्रियौषधस्य को दोष, स्तदा ग्रुण मयच्छतः ॥ ४ ॥ स्थिरता वाङ्मनः कायै, र्येषा मंगां गितां गता ॥ योगिनः समशीलास्ते, श्रामेऽरण्ये दिवा निशि ॥ ५ ॥ स्थैर्य रत्न प्रदीपश्चे, द्दीपः संकल्पदीपजैः ॥ तद्विकल्पेरलं धूमै, रलं धूमैस्तथाश्रवैः ॥ ६ ॥ उदीरियष्यसि स्वांता, दस्थैर्य पवनं यदि ॥ समावे धर्म मेघस्य, घटां विघटियष्यसि ॥ ७ ॥ चारित्रं स्थिरता रूप, मतः सिद्धेष्वपीष्यते ॥ यतं तां यतयो वश्य, मस्या एव प्रसिद्धये ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

?. स्थिरता आदर्या विना स्वभाविक मुख संप्राप्त थतुं नथी. संपूर्ण स्थिरताना वलेज स्त्रभाव मग्न थाय छे अने एवा स्वरुप मग्न महापुरुषज पूर्णानंद पामी शके छे. ते विना तो जीव ज्यां त्यां मुख्यां भारियां मात्र भम्याज करे छे माटे ग्रुरुमहाराज शिष्यने स्थिरता आदरवा उपदेश आपे छे के है वत्स, तुं अस्थिर चित्तथी अनेक

स्थले भटकी भटकीने शा माटे खेद धारण करे छे? फकत अस्थि-रतातु सेवन करवाथी तने सर्व समृद्धि तारा घटमांज देखाशे. स्थि-रता विना अनंत गुणनिधान स्व समीपे छतां देखी शंकातो नथी.

- २. जेम खटाशथी दूध फाटी जइ विनाश पामे छे. तेम अ-स्थिरता योगे थता अनेक संकल्प विकल्पोथी ज्ञान गुण क्षोभ पामी विनाश पामे छे. अने स्थिरता योगे ज्ञान गुणनी दृद्धि थाय छे एम समजीने हुं स्थिर था.
- ३. चित्त अस्थिर छते करवामां आवती अनेक प्रकारनी कि-या कल्याणकारी थती नथी. जेम व्यभिचारिणी स्त्री चतुराइ भरेलां वचन बोले छे. अने घुंमटो ताणीने चाले छे छतां अवळी चालथी तेवी चेष्टा तेणीने हितकारी नथी. तेम चपल चित्तवालानी पण वि-विध क्रिया आश्रयी जाणबुं. पतिव्रता स्त्रीनी पवित्र आश्रयवाली क्रियानी पेरे स्थिरतावंतनी सर्व उचित क्रिया लेखे पडे छे.
- ४. ज्यां सुधी अस्थिरतास्पी अंतरत भारे शब्य उद्धी नथी त्यां सुधी गमे तेवी उत्तम किया पण यथेष्ट फल आपी शकेशे नहीं. जेम शरीरती शुद्धि कर्या वाद लीधेलं औषध तत्काल गुणकरी शकेले. तेम अस्थिरता वाळाना अनुष्टान आश्रयी पण समजर्वः
- ५. जेमने मन वचन अने कायावडे संदूर्ण स्थिरता व्यापी गृह छे तेवा योगी पुरुपोने गाममां के वनमां दिवसमां के रात्रिमां संस-

भाव वर्ते छे. जेमने सर्वागे स्थिरता थइ छे तेवा महापुरूषने सर्वत्र समपरिणामज वर्ते छे. खरुं कल्याण पण तेमनुंज थाय छे.

- इ. जो घटमां एक स्थिरता प्रगटे तो अनेक प्रकारना मलीन संकल्प विकल्प खतः उपशमे केमके मलीन संकल्प विकल्पो अ-स्थिर मनमांज प्रभवे छे. जेम देदीप्यमान रत्ननो दीपक महेल्मां प्रगटयो होय, तो धूमाडावडे मंदिरने ज्याम करी नांखे एवा कृति। दीवा करवातुं प्रयोजनज न रहे, तेम जो मनमंदिरमां एक स्थिरता गुण प्रगट थाय तो तेमां अन्यथा उठता अनेक प्रकारना संकल्प विकल्प स्वयं उपशम पामे अने आत्मानी सहज ज्ञान ज्योति स्था-यीपणे प्रसरे जेथी सर्व भावने हस्तामलकनी पेरे देखी शकाय.
- ७. हे बत्स, जो तुं स्थिरतानो त्याग करीने अस्थिरतानी उद्दी-रणा करीश तो तारी घणी महेनतथी वाधेली समाधि डोलाइ जशे. जोम अवल पवनना योग वेघघटा विखराइ जाय छे तेम संकल्प वि-कल्प करवाथी पूर्वे महा परिश्रमथी पेदा करेली समाधिनो लोप थइ जाशे. माटे जेम वने तेम सर्व संकल्प विकल्पने शमाविने स्थिरता योगे समाधि सुखमांज मय रहेवुं उचित छे. अस्थिरता करवाथी तो स्थास थयेली समाधिनो पण नाश थइ जाय छे.
- ८. आत्म गुणमांज स्थिरता करवी तेतुं नाम भाव चारित्र छे. इतुं निश्चय चारित्र तो सिद्ध भगवानमां पण वर्ते छे. एटले के सिद्ध

जैनहितोपदेश भाग ३ जो. ३, गमे तेवा संयोगोमां जे समता धारी राखी ग्रंझाता नथी ते आक्राह्महा जेम पाप पंकथी छेपाताज नथी. समृ विवर्ग संयोगोमां मुंझाइ जे अंकरण विकल्पने वश थइ आर्त्रध्यानुमां पड़ी जाय छे तेज पाप पंकशी लेपाय छे.

४. संसारमा रह्या छतां ठेकाणे ठेकाणे संसारत नाटक जोइने जे खेद पामता नथी तेत्रा मध्यस्थ दृष्टि मोहथी लेपाता नथी. संसा-रमां विचित्र संयोगयोगे पण जे समभाव तजता नथी अने सर्वत्र समानभाव राखे छे एवा समभावीने समताना बलथी मोइ पराजित करी शकतो नथी.

५. मोहनी पवलताथी विविध विकल्पोने वश थइने जीव दीर्घ मंसार परिभ्रमण करे छे. जेम उपराउपर दारुना प्यांला पीवाथी परवश थयेला जीव अनेक प्रकारनी कुचेष्टा कर्या करे छे तेम मो-हुना प्रवल वेगमां तुणाता जीवना महा माठा हाल थाय छे माटे मुखना अर्थी जीवे मोह मदिराथी दूर रहेवा समताने धारी संकल्प विकल्पोने शमानी देवा यत्न करवो युक्त छे. एम करवाथी सहज स्वभाविक निर्विकलप शान्त सुलनी प्राप्ति यह शके छे. प्रवल मोहने पराधीन भवेछो प्राणी स्वममां पण एवं सुख पामी शकतो नथी.

६, आहमाह्य स्वभाविकरूप तो स्फटिक रत्न जेवं निर्मेख छे. प्रशेत पुत्रलना संबंध्यी जीव जड जेवो थइ तेमा मुझाइ जाय छे. जेम स्फटिक रवने रातुं पीछं छीछं के काछं फूछ लगाडवाथी ते लगाडेला फूलना प्रसंगथी आखुं रव तद्रूपण थइ जाय छे, तेम जीव पण उपाधि संवंधथी जड जेवो बनी जाय छे. पुण्य पाप राग द्रेषा- दिक जीवने केवल उपाधिरूप छे. ज्यां सुधी जीवने तेनो संवंध रहे छे त्यां सुधी ते तेनुं शुद्ध स्वरूप संपूर्ण रीते प्रगट करी शकतो- ज नथी. पण तेनो संपूर्ण वियोग थये छते आत्मानु शुद्ध स्वरूप सहज प्रगट थइ रहे छे.

७ पोहना क्षयथी सहज आत्मस्यने साक्षात् अनुभवतां छता युद्गिलक स्रुखने साचं मिष्ट माननारा लोकोनी पासे तेतं कथन क-रतां आश्चर्य लागे छे। केमके युद्गलानंदी जीवने आत्मिक स्रुखनों साक्षात् अनुभव थइ शकतो नथी। अने साक्षात् अनुभव थया दिना नेनी प्रतीति पण आवी शकती नथी। तथी निर्मोही युरुष अधिकार सुजवज उपदेश आपे छे।

द जे महाशय शुद्ध समज पूर्वक समस्त सदाचारने सेवया ज-जमाल रहे छे ते प्रयोजनिवनाता प्रभावमां शा मार्ट गुंझाय है जेम निर्मल आरीसामां वस्तुनुं यथार्थ दर्शन यह शके छे तेम निर्मल ज्ञान द्विणयोगे आत्मा स्वक्तिच्य सम्यम् समजीने तेनुं निर्मिनानताथी आराधन करी शके छे. निर्मल ज्ञानवडे स्व कर्नव्यनुं स्वरूप निर्धा-रीने जे शुभाशय तेनुं सेवन करे छे ते अवश्य फतेहमंद्द नीवडे छे. भगवाने पण स्थिरता—चारित्रनो संपूर्ण स्वीकार करेलो छे. एम स-मजीने स्थिरता गुणने प्रगट करवा माटे सर्व म्रिनियोए अवस्य उद्यम करवो युक्त छे. स्थिरता गुण विनानु चारित्र पण निष्फलमायज छे.

॥ ४ ॥ निर्मोह—अप्टक ॥ अईममेति मंत्रोऽयं, मोहस्य जगदान्ध्यकृत ॥ अयमेवहि नञ् पूर्वः, प्रतियंत्रोऽपि मोहजित् ॥१॥ शुद्धात्मद्रव्य मेवाऽहं, शुद्ध ज्ञानं ग्रुणो मम ॥ नान्योऽहं न ममान्ये चे, त्यदो मोहास्त्र मुल्वणम्॥२॥ यो न मुह्यति लग्नेषु, भावेष्वौदियकादिषु ॥ आकाशमिव पंकेन, नासौ पापेन लिप्यते ॥ ३॥ परयनेव परद्रव्य, नाटकं प्रतिपाटकम् ॥ भवचक पुरस्थोऽपि, नामूदः पारे खिद्यते ॥ ४ ॥ विकल्प चपकै रात्मा, पीत मोहासवो ह्ययम् ॥ भवोदताल सुताल, प्रपंच मधितिष्ठति ॥ ५॥ ानिर्मेळ स्फाटिक स्पेव, सहजं रूपमात्मनः ॥ अध्यस्तोपाधि संबंधो, जह स्तत्र विमुह्यति ॥ ६॥

अनारोप सुर्वं मोह, त्यागादनुभवन्निष ॥ आरोप त्रिय लोकेषु, वक्तुमाश्चर्यवान् भवेत् ॥ ७॥ यश्चिद्दर्पण विन्यस्त, समस्ताचार चारुषीः ॥ क नाम स पर द्रव्ये, ऽन्तुपयोगि निमुह्यति ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. हुं अने मारुं ए मोहनो महामंत्र छे. तेणे आखा जगतने आंथछं कर्यु छे. पण जो तेनी पूर्वे एक नकार जोडयो होय तो "निह हुं अने निह मारुं" एवो प्रतिमंत्र थाय छे अने तेथी सामा मोहनोज पराजय थाय छे. मोहे पोताना मंत्रथी जगत मात्रने वत्र करी छीधेछं छे पण जो सद्गुरु कृपाथी प्रतिमंत्र हाथ छागे तो तेथी समूछगो मोहनोज पराभव थइ शके छे. माटे मोहनो पराजय करवा माटे मोक्षार्थीए ते प्रतिमंत्रनेज सेववो युक्त छे. ममताने मुकीने समताने सेववाथी उक्त मंत्र सिद्ध थइ शके छे.
 - २. शुद्ध आत्मद्रव्य एज हुं छुं अने शुद्ध ज्ञानगुण एज मार्ह सर्वस्य छे. पण आ देह ए हुं निह तेमज लक्ष्मी कुटुंव विगेरे मार्ह नथी एवी शुद्ध समज मोहनो बिनाश करवा समर्थ शुद्धरूप नीवडे छे.

जैनहितोपदेश भाग ३ जो. १, गमे तेवा संयोगोमां जे समता धारी राखी ग्रंझाता नथी । आक्राह्मनी जेम पाप पंकथी छेपाताज नथी. सम् विषम संयोगीमां झाइ जे अंकरूप विकल्पने वश थइ आर्तध्यानुमां पड़ी जाय छे ज पाप पंकशी लेपाय छे.

४. संसारमा रह्या छतां ठेकाणे ठेकाणे संसारत नाटक जोइने रे खेद पामता नथी तेवा मध्यस्थ दृष्टि मोहथी लेपाता नथी. संसा-मां विचित्र संयोगयोगे पण जे समभाव तजता नथी अने सर्वत्र ामानभाव राखे छे एवा समभावीने समताना बलथी मोह पराजित तरी शकतो नथी.

५. मोहनी पवलताथी विविध विकल्पोने वश थइने जीव दीर्घ ांसार परिभ्रमण करे छे. जेम उपराउपर दारुना प्याला पीवाथी रवश थयेला जीव अनेक प्रकारनी क्रुचेष्टा कर्या करे छे तेम मो-ना प्रवल वेगमां तणाता जीवना महा माठा हाल थाय छे माटे खना अर्थी जीवे मोह मदिराथी दूर रहेवा समताने धारी संकल्प वेकल्पोने शमावी देवा यत्न करवो युक्त छे. एम करवाथी सहज वभाविक निर्विकलप शान्त छखनी माप्ति थई शके छे. मबल मोहने राधीन ध्येङो माणी स्वममां पण एवं सुख पामी शकतो नथी.

६, आत्माञ्च स्वभाविकरूप तो स्फटिक रत्न जेवं निर्मल छे. प्ररेतु युत्तलना सर्वध्यक्ष जीव जह जेवो थइ तेमां ग्रंबाइ जाय छे. जेम स्फटिक रवने रातुं पीछं लीछं के काछं फूल लगाडवाथी ते लगाडेला फूलना प्रसंगथी आखुं रव तद्रूपज थइ जाय छे, तेम जीव पण लपाधि संवंधथी जह जेवो बनी जाय छे. पुण्य पाप राग द्रेषा-दिक जीवने केवल लपाधिरूप छे. ज्यां सुधी जीवने तेनो संवंध रहे छे त्यां सुधी ते तेनुं शुद्ध खरूप संपूर्ण रीते प्रगट करी शकतो-ज नथी. पण तेनो संपूर्ण वियोग थये छते आत्मानु शुद्ध खरूप सहज प्रगट थइ रहे छे.

- ७ मोहना क्षयथी सहज आत्मसुखने साक्षात् अनुभवतां छता युद्गिलिक सुखने साचुं गिष्ट माननारा लोकोनी पासे तेतुं कथन क-रतां आश्चय लागे छे. केमके पुद्गलानंदी जीवने आत्मिक सुखनों साक्षात् अनुभव थइ शकतों नथी. अने साक्षात् अनुभव थया विना तेनी प्रतिति पण आबी शकती नथी. तथी निर्मोही पुरुष अधिकार सुजवज उपदेश आपे छे.
- द ने महाशय शुद्ध समन पूर्वक समस्त सदाचारने सेववा ज-जमाल रहे छे ते प्रयोजनिवनाना परभावमां शा माटे गुंझाय ! लेम निर्मल आरीसामां वस्तुनुं यथार्थ दर्शन थइ शके छे तेम निर्मल ज्ञान द्विणयोगे आत्मा स्वकृतिच्य संस्थान समजीने तेनुं निर्मिनानताथी आराधन करी शके छे. निर्मल ज्ञानविड स्व कर्तव्यनुं स्वरूप निर्धा-रीने जे शुभाश्य तेनुं सेवन करे छे ते अवश्य फतहमंद नीवडे छे.

॥ ५॥ ज्ञानाष्टक ॥

मज्जत्यज्ञ किलाज्ञाने, विष्टायामिव शूकरः ॥ ज्ञानी निमज्जित ज्ञाने, मराल इव मानसे ॥ १ ॥ निर्वाण पद मप्येकं, भाव्यते यन्मुहुर्मुहुः॥ तदेव ज्ञान मुत्कृष्टं, निर्वधो नास्ति भूयसा ॥ २ ॥ स्वभाव लाभ संस्कार, कारणं (स्मरणं) ज्ञान मिष्यते। ध्यान्ध्यमात्रमतस्त्वन्य, त्तथा चोक्तं महात्मना ॥३॥ वादांश्च प्रतिवादांश्च, वदंतोऽनिश्चितांस्तथा ॥ तत्त्वान्तं नैव गच्छंति, तिलपीलकवद्गतौ ॥ ४ ॥ स्वद्रव्य गुण पर्याय, चर्या वर्या परान्यथा ॥ इति दत्तात्म संद्रष्टि, मुंष्टि ज्ञानस्थितिर्मुनेः ॥ ५ ॥ अस्तिचेद् ग्रंथिभिद् ज्ञानं, किं चित्रैस्तंत्रयंत्रणैः॥ प्रदीपाः कोपञ्जयन्ते, तमोधी दृष्टिरेवचेत् ॥ ६ ॥. मिथ्यात्वशैलपक्षिक्छद्, ज्ञानदंभोलिशोभितः॥ निर्भयः शक्रवद्योगी, नंदत्यानंदनंदने ॥ ७ ॥

पीयूषमसमुद्धोत्थं, रसायनमनौषधम् ॥ अनन्या पेक्ष मैश्वर्यं, ज्ञानमाहुर्मनीषिणः ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. निर्मल ज्ञानवडे वस्तुतत्त्वनो निर्धार करीने जे सदाचारने सेवे छे तेज मोहनो विनाश करी शके छे. माटे निर्मल ज्ञान गुण आदरवा शास्त्रकार आग्रह पूर्वक कहे छे जेम भूंड विष्टामां मग्न रहे छे तेम मूढ माणस अज्ञानमांज मग्न रहे छे पण ज्ञानी पुरुष तो जेम हंस मानस जलमां मग्न रहे छे तेम निर्मल ज्ञान गुणमांज मग्न रहे छे. ज्ञानी पुरुष कदापि ज्ञानमां अरित धारतो नथी. अथवा ज्ञानज तेनो खरो खोराक होवाथी ते तेने अत्यंत आदरथी सेवे छे.
- २. जेनाथी राग देवनो अत्यन्त क्षय थवा पूर्वक मोक्षपदनी आप्ति थइ शके एवा एक पण पदनो वारंवार अभ्यास करी तेमां त-न्यय थवुं तेज ज्ञान श्रेष्ट छे. 'मारुष मातुष' जेवा एक पदथी पण कल्याण साधी शकाय छे. तेवाज वधारे पद होय तेनुं तो कहेवुंज शुं ? पण भारभूत एवा शुष्क ज्ञान मात्रथी कंइ कल्याण नथी.
- ३. जेथी खभाव निर्मल याय एटले आत्म परिणति सुघरती जाय एवंज ज्ञान मेलववं सार्व छे. बाकीवं ज्ञान तो केवल बोजारूप के. एवं शासकार कहे छे.

४. अनिश्चित वाद्विवादने वदतां थकां, जैने घोजीनां बेळद गमे तेटछं चाले तोपण तेनो अंत आवतो नथी, तेम तत्त्वनो पार पामी शकातोज नथी. साध्य दृष्टिथी धर्मचर्चा करतां के नम्रपणे तत्त्व कथन के अवण करतां केवल हित प्राप्तिज थाय छे. माटे शुष्क वा-दिवबाद तजीने केवल तत्त्व खोजना करवी.

५. आत्म द्रव्यना गुण पर्यायनी पर्यालोचनी करवीज श्रेष्ट छें, विजि नकामी वावतमां वस्त गमाववी युक्त नथी. एवी समज पूर्विक सहज संतोष धारनार मुनि मुष्टि ज्ञाननी स्थितिवाला गणाय छे. मुष्टिज्ञान संक्षिप्त छतां सर्वोत्तमे छे. तथी सर्व परभावथी विरमी मुनि सहज स्वभाव रमणी वने छे. तथी सर्व परभावथी विरमी मुनि सहज स्वभाव रमणी वने छे.

द. मिथ्यात्वने भेदी समित माप्त करावे एवं सम्यग् ज्ञान जो मगट थाय तो ते सारभूत ज्ञान पामी वीजा जास्त्र परिश्रमतुं केंद्र प्रयोजन नथी। जो स्वभाविक दृष्टिथी अंधेकार दूर थतो होय तो कृत्रिम दीवानु शुं प्रयोजन छे ! साची दीवो जेना घटमांज मगटयों छे तेने सहने स्वमाविक प्रकाश मल्याज करे छे तथी ते मिथ्यात्व अंधेकारनो विनाश करी आनंद मग्रज रहे छे. सारभूत ज्ञान विना छाखों गये। हेग्रकारका शास्त्र विछोडणथी शुं वळवातुं ! चोस्ती दृष्टिवालाने एक पण दीवो बस छे, अने अंध दृष्टिने हजारो दीवाथी पण जप कार यह शकवानो नथी। सम्यग् ज्ञानवान सम्यग् द्वरीन या सम्वित्त सन्ता मभावथी दिव्यदृष्टिज कहेवाय छे.

७. मिथ्यात्व शैलने छेद्वा समर्थ ज्ञानरूप वज्रथी शोभित मुनि निर्भय छता शक्र ईंद्रनी पेरे आनंद नंदनमां विचरे छे. रत्नत्रयी मंडित मुनि निर्भय छता सहजानन्दमां मस्त रहे छे. तेवा योगी पु-रूपने संयममां अरति थवा पामती नथी.

८ प्राज्ञ पुरुपो कहे छे के ज्ञान, समुद्रथी नहि इत्पन्न थयेछुं अभिनव अमृत छे. औषध विनातुं अपूर्व रसायण छे. अने सर्वथी श्रेष्ट एवं अनुपम ऐन्वर्य छे. भाग्यवंत भव्योज तेनो लाभ लही शके छे. भाग्यहीनने ते प्राप्त थड़ शकतुंज नथी. सौभागी भमरो तेनो स्वयुर रस पीवे छे. अने दुर्भागी तेनाथी दूरज रहे छे.

॥-६॥ शमाष्टकम् ॥

विकल्प विषयोत्तीर्णः, स्वभावालंबनः सदा ॥ ज्ञानस्य परिपाको यः, सः शमः परिकीर्त्तिः ॥१॥ अनिच्छन् कर्म वैष्म्यं, ब्रह्मांशेन समं जगत्॥ आरुम्धिन यः परेये, द्रसी मोक्षंगमी शमी॥ १॥ आरुम्धिनियोगं, अयेद्राचिक्यामपि॥ योगारूटः शमादेवं, शुद्धचर्यंतर्गतिक्रयः ॥ ३॥

ध्यानवृष्टेर्द्या नद्याः, शमपूरे प्रसर्पति ॥ विकारतीरवृक्षाणां, मूलादुन्मूलनं भवेत् ॥ ४ ज्ञानध्यान तपः शील, सम्यक्त सहितो उप्यहो ॥ तं नामोति ग्रणं साधु, यं प्रामोति शमान्वितः ॥ ५ ॥ स्वयंभूरमणस्पद्धि, वर्द्धिष्णु समता रसः ॥ मुनिर्येनोपमीयेत, कोपिनासौ चराचरे ॥ ६ ॥ शमसूक्त सुधासिक्तं, येषां नक्तं दिनं मनः ॥ कदापि ते न दह्यन्ते, रागोरमविषोर्मिभिः ॥ ७ ॥ गर्जदुज्ञान गजोत्तुंग, रंगदु ध्यान तुरंगमाः ॥ जयन्ति मुनिराजस्य, शमसाम्राज्य संपदः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१ संकल्प विकल्पने शमावी आत्माने सहज शीतलता सदा आपनार एवा शमगुणने सम्यग् ज्ञानना उत्तम फलरूपे ज्ञानी पुरुषोए वलाणेल छे. उपशमवंत विविध विकल्प जाळथी ग्रुक्त होइ शके एवा परिपक ज्ञानना बलथी सहज स्वहित साधी शके छे.

- २ जे शान्त आत्मा, कर्मनी विषमताने निह लेखतां, सर्व ज-गजंतुने सहज सुख मेलववा एक सरखी सत्ता होवाथी, आत्म समा-नज लेखे छे, ते अवश्य मोक्षगामी थाय छे अर्थात् जेने सर्वत्र सम-माव व्याप्यो छे ते जरूर मोक्ष सुख साधी शके छे.
- ३ योगारु थवा इच्छनार साधुने तो वाह्य (व्यवहार) क्रि-यानी अपेक्षा रहे छे. पण योगारु मिन तो अंतर क्रियानो आश्रय करनार होवाथी केवल शमगुणथील शुद्ध थाय छे. प्रथम तो योगनी चपलता वारवा अने सहज स्थिरता साधवा आप्त पुरुषे उपदेशेली व्यवहारिक क्रिया करवी पडे छे पण अनुक्रमे अभ्यास वले मन वचन अने कायानी चपलता शान्त थये छते मुनिने उत्तम क्षमादिक सहज शुद्धिकया योगे अंतर शुद्धि थइ शके छे. तेवी योग्यता पामवा प्रथम अभ्यास करी अंते सहज क्षमादिक अंतरंग क्रियाथी आत्म शुद्धि साधवी मुलभ पडे छे. योग्यता विना कार्य साधवा जतां अनिक मुशीवतो आवी पडे छे.
- ४. ध्यानंनी दृष्टि थवाथी, शुद्ध करुणारुपी नदी शमपूरथी। एवी तो छलकाय जाय छे के तेना कांठे रहेला विविध विकार—दृक्षों मूलथीज घसडाय जाय छे. ज्यारे निर्मर्लं ध्यानामृतनी दृष्टि थाय छे त्यारे शुद्ध अहिंसक भावनी एवी तो अभिदृद्धि थाय छे के तेना श्रान्त रसना प्रवल प्रवाहथी सर्व प्रकारना विषयविकारो सम्लगाः वसडाइ जाय छे, तेथी तेना कडुक फलनी भीति रहेतीज नथी.

विवेकद्विपहर्यक्षेः, समाधि धन तस्करैः ॥ इंद्रियैर्नजितोयोऽसौ, धीराणां धुरि गण्यते ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. जो तुं संसार परिश्रमणना दुःखथी हरतो होय अने अ-रवंह एवं मोक्ष सुख स्वाधीन करवा इच्छतो होय तो इंद्रिय वर्गने दमवा प्रवल्ठ प्रयत्न कर. विविध विषय सुखनी वासना मोक्षार्थी जी-वने पण वाधक थाय छे. माटे प्रथमज विविध विषयमां भटकता मन अने इंद्रियोने दमीने वश करवा युक्त छे. अन्यथा तेओने वश पिंड रहेवाथी उद्धत घोडानी पेठे तेओ जरुर जीवने विषम एवा दुर्ग-तिना मार्गमांज खेंची जायछे. पण जो तेमनेज आगम युक्तिथी वश करी छेवामां आवशे तो आत्मा अंते अखंड सुख साधी शकशे.
- २. तृष्णा-जलथी परिपूर्ण एवा इंद्रिय-क्याराथी दृद्धि पामे-ला विकार विषयदृश्नो जीवने महा पूर्ली उपजावे छे. जेम जेम जीव विविध विषयने सेवे छे तेम तेम तेनी तृष्णा सतेज थाय छे, अने अंते असंतुष्ट रही आर्त्ताच्यान योगे महाविकारने ते भजे छे. एम समजी संतोषने सेवनारा जीवो मन अने इंद्रियो उपर अच्छो काल मेलवी अंते अवश्य अखंड सुख साधी शुके छे, वाकी कामान्ध तो

क्षणिक सुख माटे अनंत अने अक्षय सुखने गमावी अनंत अपार दुःखनेज व्होरी छेछे. संतोषी जीव सर्व दुःखने सहजमां जलांजली दइ अपार सुखमां अवगाही रहे छे, एम समजी संतोष गुणने से-बवो युक्त छे.

- ३. जेम हजारो गमे नदीओथी पण समुद्र पूरातो नथी तेम गमे तेटला विषय संयोगथी पण इंद्रियवर्ग धरातो नथी, जेम इंधन-थी आग उलटी वधे छे तेम अनुकूल विषय योगे उलटी तृष्णा ह-द्विगत थाय छे माटे सहज संतोषी थडुं युक्त छे. जेम जेम संतोष गुण वाधे छे तेम तेन सहज सुखनी हिद्ध थाय छे.
- ४. संसारथी उद्देग पामेला जीवने पण इंद्रियो विषय-पाश-यी वांधी लेखे तो संसारमां रच्या पच्या रहेनारनुं तो कहेनुंज थुं ? तिवाने तो ते सदा संताप्याज करे छे पण मोक्षार्थी जीवने पण लाग मळ्ये छोडती नथी. केमके ते मोहराजानी चाकरडीओज छे, माटे मोक्षार्थीए तेमनाथी वधारे चेतता रहेनुं युक्त छे.
 - 4. इंद्रिय संबंधी विषय सुखमां मुंझायेलो जीव धनने अर्थे इंगरनी मटोडी जोवे छे पण आत्म समीपेज रहेलुं शास्त्रतुं ज्ञान— यन तपासतो नथी, खरुं जोतां विषय विरक्त जीवनेज सार्चु ज्ञान— यन हाथ लागे छे. विषयान्य जीवने काम अने अर्थेज प्रिय होवांथी

तेने खरी पीति विना तत्त्व-धन हाथ छागतुंज नथी, माटे अना-दिनी विषयवासना तजीने सत्य ज्ञानमां पीति धारवी युक्त छे.

- ६. अधिका अधिक तृष्णाने वधारनार विषय युख्यांज मुढ जीवो मग्न रहे छे, पण ज्ञानामृतनो आदर करी शकता नथी. खर्क छे के खाखरानी खीसकोली आंबाना रसमां शुं जाणे? अमृत स-मान ज्ञान तो विषय सुख्यी विरक्तनेज प्राप्त यह शके छे.
- ७. एक एक इंद्रियना दोषथी, पतंगिया, भमरा मांछला, हाथी तथा हरण दुर्दशाने पामे छे तो दुष्ट एवी पांचे इंद्रियोने पर-वश थइ वर्तनारा मूढ जीवोत्तं तो कहे बुंज थुं?
- ८. विवेकरुप कुंजरने विदारवा केश्वरीसिंह समान तथा स-माधि धनने हरवा साक्षात् चोर समान एवी इंद्रियोथी जेओ जीता-या नथी तेओज धीर पुरुषोमां धुरंधर छे. जितेंद्रिय पुरुषोज खरह थुरवीर गणाय छे.

॥ ८ ॥ त्यागाऽष्टकम् ॥

संयमात्मा श्रये शुद्धो, पयोगं पितरं निजय ॥ भित्रमेवांच पितरी, तन्मां विसृजतं भ्रवय ॥ १ ॥

खुष्माकं संगमोऽनादि, बैंधवोऽनियतात्मनाम् ॥ भ्रवैक रूपान शीलादि, बंधूनित्यधनाश्रये ॥ २॥ कान्ता मे समते वैका, ज्ञातयोमे समित्रयाः ॥ बाह्य वर्गमिति त्यक्ता, धर्म संन्यासवान भवेत। १ धर्मीस्त्याज्याः सुसंगोत्थाः, क्षायोपशमिका अपि ॥ त्राप्य चंदन गंधामं, धर्म संन्यास सुत्तमम् ॥ ४ ॥ गुरुतं स्वस्य नोदेति, शिक्षा सात्येन यावता ॥ आत्म तत्त्व प्रकाशेन, तावत् सेव्यो गुरूत्तमः॥५॥ ज्ञानाचारादयोपीष्टाः, शुद्ध स्व स्वपदाविध ॥ निर्विकल्पे पुनस्त्यागे, निवकल्पो न वा ऋिया॥६॥ योग सन्यासतस्त्यागी, योगानप्यसिलां स्त्यजेत्॥ इत्येवं निर्गुणं ब्रह्म, परोक्तमुपपद्यते ॥ ७ ॥ वस्तुतस्तु गुणैः पूर्ण, मनंतै भीसते स्वतः ॥ रूपं त्यक्तात्मनः साधोर्निरभ्रस्य विधोरिव ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. संयमी आत्मा शुद्ध उपयोगद्धापि पितानो तथा घृतिह्धिप मातानो आश्रय करी लोकिक मनाता मातापितानो संग निश्रय पू-वेक तजी देले. ज्यां सुवी लोकिक संबंधीओ साथे स्नेह बांध्यो रहे छै, त्यां सुवी निंमील ज्ञान, ध्यान तथा समाधिह्य आत्म संयममां रति पडती नथी. शुद्ध संयममां रंग लगाडवा, माटे अने सहज आ-नन्द लंडवा माटे लोकिक स्नेह अवश्य तजवो युक्त छे.
- र. संयमाधी आत्मा स्वाधी बांधवोनो त्याग करीने शील संतोष प्रमुख परमाधी अने निश्वल परिणामवाळा बंधुओनो आश्रय करवा उजमाल रहे छे. ज्यां सुधी कृत्रिम स्वाधी बंधुओमां प्रीति छे त्यां सुधी सत्य परमाधी शीलादिक सद्गुणोमां प्रीति जागे नहि. माटे शीलादिक सत्य बंधुओमां अकृत्रिम प्रेम जगाववा अर्थे अनादि अविवेक योगे लागेलो स्वाधी लोकिक बंधुओ प्रतिनो कृत्रिम राग अवक्य वजवोज जोइए. कृत्रिम रागनो त्याग करतां सहज सात्विक केम अवक्य जागवानो.
 - ३. संयमार्थी पुरुष समतारूपी स्नीनो तथा साधर्मीरुपी झाति जनोनोज आदर करे छे, पण वाकीना मतलवीया लौकिक संवंधी-ओनो त्यागज करे छे. लौकिक संवंधने विवेकथी छेदीने आत्म सं-यमने साधवावाळो उत्तम त्यागी कहेवाय छे.

- ४. शुद्ध क्षायक ज्ञानदर्शन चारित्रादिक गुणो प्राप्त थये छते पूर्वला अशुद्ध अभ्यासिक गुणो त्याच्य थाय छे, आत्माना शुद्ध ज्ञा-नादिक सद्गुणोमां एवी सहज अपूर्व शीतलता तथा सुवासना रहे-ली छे के तेने पामीने आत्महंस वीजे क्यांय पण स्थिति करतो नथी, फक्त तेमांज सर्व संग तजीने लयलीन थइ रहे छे.
- ५. आत्मातुं स्वरूप जेथी सम्यग् समजी शकाय एवा तत्त्व-श्वानना प्रकाशवंडे स्वयं आत्माने शिक्षा आपी सुधारी शके तेबुं गुरुत्व पोताने प्राप्त न थाय त्यां सुधी उत्तम गुरुतुं शरण अवश्य आदर्श्व युक्त छे, स्व कल्याण साधवानो संपूर्ण अधिकार प्राप्त थया बाद गुरुनी आज्ञाथी एकला विचरवामां पण हित छे, परंतु तेवी योग्यता पाम्या पहेलां स्वच्छंदताथी एकला विचरतां तो केवळ अहितज छे.
- ६. ज्यां सुधी सदाचारनी संपूर्ण शुद्धता सिद्ध थाय नहिं त्यां सुधी झानाचार आदि सकल आचार अवश्य सेव्य छे, पण ज्यारे असंग योगनी प्राप्ति थशे त्यारे कोइ विकल्प पण रहेशे नहिं, तेमज किया करवानी चिंता पण रहेशे नहिं, प्रथम मननी स्थिरता माटे सदा आचार पालवानी जरूर छे. आचारनी शुद्धिथी मननी शुद्धि विश्रेषे थाय छे, अने अंते निर्विकल्प समाधि सिद्ध थये छते सर्वे विकल्प तथा किया स्वतः उपशमे छे. परंतु परिपूर्ण योग्यबा—अधि

कार प्राप्त कर्या पहेलां आपमतिथी जेओ सदाचारनो अनादर करेले, तेओ उभय भ्रष्ट थइ अंते भारे पश्चातापना भागी थाय छे, माटे प्रथ-म आचार शुद्धिहारा मन शुद्धि करी ते वढे अनुक्रमे वचन अने काय शुद्धि प्राप्त करवा प्रयत्न सेववो; त्रिविध शुद्धिथी सहज समाधि सिद्ध थतां अनुक्रमे विविध विकल्पो तथा कियाओनो अंत आवशे ए वात खात्री पूर्वक मानवी.

- ७. त्यागी—ंसंयमी सिद्ध योगी थइने समस्त योग—व्यापारनो त्याग करे छे अने संपूर्ण विवेक योगे निर्शुण ब्रह्म-परमात्म पदने . प्राप्त करे छे. ए त्यागनुंज माहातम्य छे.
 - ८. संपूर्ण त्यागी-संयमी साधु निर्मल चंद्रनी पेरे वस्तुतः अ-नंत गुण ज्योतिथी स्वतः प्रकाशे छे. संपूर्ण विभाव त्यागथी पूर्ण विवेक योगे निर्मल आत्मस्वभाव स्वतः प्रगटे छे.

॥ ९ ॥ क्रियाष्टकम् ॥

ज्ञानी क्रियापरः शान्तो, भावितात्मा जितेंद्रियः ॥ स्वयं तीणों भवांभोधेः, परं तारियद्धं क्षमः ॥ १ ॥ क्षियाविरहितं हंत, ज्ञानमात्रमनर्थकम् ॥

गतिंविना पथिज्ञोऽपि, नाप्नोति पुरमीप्सितस् ॥ २ ॥ स्वानुकूलां कियां काले, ज्ञान पूर्णोप्यपेक्षते ॥ प्रदीपः स्वप्रकाशोऽपि, तैल पूर्त्यादिकं यथा ॥ ३॥ वाह्यभावं पुरस्कृत्य, ये क्रियां व्यवहारतः ॥ वदने कवलक्षेपं, विना ते तृप्तिकांक्षिणः ॥ ४ ॥ गुणवद् बहुमानादे, नित्य स्मृत्याच सत्क्रिया॥ जातं न पातयेङ्गाव, म जातं जनयेदपि ॥ ५ ॥ क्षायोपशमिके भावे, याक्रिया क्रियते तया ॥ पतितस्यापि तद्भाव, प्रवृद्धि जीयते पुनः ॥ ६ ॥ गुण वृच्चैततः कुर्यात्, क्रियामस्वलनाय वा ॥ एकं तु संयमस्थानं, जिनानामवतिष्ठते ॥ ७ ॥ वचोनुष्ठानतोसंग, क्रियासंगतिमंगति ॥ सेयं ज्ञानिकयामेद, भूमिरानंद्पिच्छला ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सम्यग् ज्ञान अने क्रियाने सेवनार ज्ञान्त अने भावित आत्मा जितेंद्रिय थइ आ भयंकर भवोद्धिथी पोते तयी छतां अन्यने पण तारवा समर्थ थाय छे. उपर बतावेला सद्गुणो विनानो वाह्या-डंबरी स्वपरने तारवा शक्तिवान् नथी.

- २. क्रिया-आचरण विनातुं केवळ शुष्कज्ञान निष्फल छे, अने सदाचरण युक्त सर्व ज्ञान सफल छे. केमके मार्गनो जाण छतां पंणी गमन क्रिया विना इच्छित स्थाने प्होंची शकतो नथी. अने गमन क्रिया योगे सुले समाधिथी इष्ट स्थाने प्होंची शके छे. एम निर्धारीने महोटी महोटी वातो करीने नहि विरमतां साक्षात् क्रियारुचि थवुं.
- ३. जेम दीवो स्वमकाशक छतां तेलवाट विगरेनी अपेक्षा राखे छे तेम संपूर्ण ज्ञानीने पण काले काले आत्म अनुकूल क्रिया करवी पढ़े छे, जेम तेलवाट विगरे अनुकुल साधन विना दीवो वली श-कतो नथी; फक्त तेलवाट विगरे प्होंचे त्यां सुधीज दीवो वली पछी ओलवाइ जाय छे, तेम ज्ञानीन पण अनुकुल क्रिया कर्या विना चा-लतुं नथी. जेम जलनो रस जलथी न्यांरो रहेतोज नथी तेम सत्य—परमार्थिक ज्ञान पण तदनुकुल क्रिया विनानुं होतुंज नथी. संपूर्ण ज्ञानी पण स्वानुकुल क्रिया करेज छे, तो संपूर्ण ज्ञानी थवा इच्छता एवा अल्पज्ञानीनुं तो कहेवुंज शुं ?
- ४. क्रिया करवी ते तो वाह्य भाव छे एम कहीने जेओ सत्य व्यवहारनो निषेध करे छे, तेओ मुखमां कोळीयो नांख्या विनाज द्विप्तिने इच्छवा जेवुं करे छे. जेम जम्या विना क्षुधा शान्त थती नथी

तेम सत्य व्यवहार सेवन विना शुद्ध निश्चय मार्ग पण मली शकतो नथी. माटे शुद्ध निश्चयार्थीने व्यवहारनो अनादर करनो युक्त नथी. पण शुद्ध मार्ग माटे सत्य व्यवहारनुं विशेषे सेवन करनुं घटे छे.

- ५. गुणवंतनुं वहुमान बनी शके तेटछं करवा पूर्वक तेनुं नित्य स्मरण करवा प्रमुख सत् क्रियाथी उत्पन्न थयेला भावने टकावी राखवा साथे नवा भावने पण पेदा करवानुं बनी आवे छे. माटे गु-णना अर्थीए हमेशां सत् क्रियानुं आलंबन लीधाज करबुं.
- ६. प्रथम अभ्यासरुपे जे सत् िक्तया करवामां आवे छे तेथी।
 एवो संस्कार जामी जाय छे के ते क्रिया अंते शुद्ध अने असंगपणे
 यया करे छे. तेमज कचित् दैववशात् पतित थयेळाने पण पूर्वळा
 भावनी प्राप्ति थइ आवे छे. परंतु जेओ प्रमादने पराधीन पडचा छतां
 सत् क्रियानुं सेवनज करता नथी तेवा मंदभागीने तो गुणमां आगळ वधवानुं साधनज मळी शकतुं नथी.
- ७. माटे सद्गुणोनी दृद्धि माटे तेमज माप्त थयेला सद्गुणोथी भ्रष्ट निह थवा माटे सदा सत् क्रिया सेन्याज करवी युक्त छे. एवो श्रुभ अभ्यास वीतराग इशा प्राप्त थतां सुधी सेववा योग्य छे. सम-स्त मोहनो क्षय थवा पामे त्यां सुधी एवा श्रुभ अभ्यासमां प्रमाद करवो अयुक्त छे. प्रमाद सेवनथी तो उलटो अनर्थ पेदा थाय छे. माटे परमात्म दशा प्राप्त थतां सुधी अप्रमत्त भावज आद्रवा योग्य

छे. वीतराग दशा प्राप्त थया पछी पतीत थवानो लगारे यय नथी। बीतराग दशा तो कायम एक सरखीज होय छे. वीतराग दशामाँ कोइ पण क्रिया करवा संबंधी विकल्पज होतो नथी।

८. वीतराग वचनानुसारे वर्तन करतां अंते असंग हत्ति प्राप्त धाप छे. ते ज्ञान अने कियानी अभेद भूमी-एकता अमंद आनंदर्थीः भरेडी होय छे. तथास्तु.

॥ १० ॥ तृप्यष्टकम् ॥

पीत्वा ज्ञानामृतं अक्ता, किया सुरलता फलम्।।
साम्य ताम्बूल मास्वाद्य, तृप्तिं याति परां मुनिः।।१॥
स्वगुगैरेव तृप्तिश्चै, दाकालमविनश्वरी ॥
ज्ञानिनो विषयैः किं तै, यैंभवे तृप्तिरित्वरी ॥ २ ॥
या शान्तेकरसा स्वादा, दभवे तृप्तिरित्वरी ॥ २ ॥
सा न जिहें द्रियद्वारा, षड्रसास्वादनादिष ॥ ३ ॥
संसारे स्वप्रवन्मिण्या, तृप्तिः स्यादाभिमानिकी ॥
तथ्या तु म्रांति श्चन्यस्य, सात्म वीर्य विपाककृत् ॥ १॥
पुद्रलेः पुद्रलास्तृप्तिं, यान्त्यात्मा पुनरात्मना ॥

यखित समारोपो, ज्ञानिनस्तन्न युज्यते ॥ ५॥
मधुराज्य महाशाका, त्राह्ये बाह्येच गोरसात् ॥
परवहारि तृप्ति यो, जनास्तां जानतेऽपि न ॥६॥
विषयोमिविषोद्गारः स्यादतृष्ठस्य पुद्रलैः
ज्ञान तृष्ठस्य तु ध्यान, सुधोद्गार परंपरा ॥ ७॥
सुखिनो विषयातृष्ठा, नेंद्रोपेंद्राद्योऽप्यहो ॥
भिक्षरेकः सुखी लोके, ज्ञानतृष्ठो निरंजनः ॥८॥

- १. ज्ञानामृतनुं पान करीने तथा किया कल्पलतानां फल खा-इने तथा समतारूपी ताम्बूल चावीने मुनि श्रेष्ठ तृप्तिने पामे छे. स-मतायुक्त ज्ञान अने क्रिया वडे खरी तृप्ति साधी ज्ञकाय छे. ते विनानी पौद्गलिक तृप्ति कल्पित मात्र छे.
- २. स्वगुणो वडेज अक्षय अने अखंड तृप्ति थती होय तो क्ष-गिक तृप्ति करनारा विषयोत्तं ज्ञानीने शुं प्रयोजन छे ! सद्गुण सेव-नथी साक्षात् आत्म तृप्तिने अनुभवनारा ज्ञानी पुरुषो विषम एवा विषय सुखनो आदर करता नथी.

- रे. एकज शान्त रसनो आस्वाद करवाथी जे सहज अतींद्रिय सुख प्राप्त थाय छे, ते रसना वडे षटरसनो आस्वाद लेवाथी पण मली शकतुं नथी. एम समजी सकल इंद्रिय जन्य तुच्छ विषय रसनो त्याग करीने एक शान्त वैराग्य रसनोज आस्वाद करी अपूर्व अने अतींद्रिय सुखनो साक्षात् अनुभव करवो युक्त छे. केवल विषयासक्त विवेक विकलने एवं अपूर्व सुख मली शके निर्ह.
- ४. संसारमां मुग्ध लोकोए मानी लीधेली विषय-तृप्ति स्वप्न-नी जेवी मिथ्या छे, अने आत्मानी सहज शक्तिने उत्तेजित करनारी श्वानीए आदरेली तृप्तिज साची अने सेववा योग्य छे. माटे क्षणिक तृप्तिने तजीने अक्षय तृप्ति माटेज यत्न करवो.
- ५. पुद्गलो वहे पुद्गल तृप्ति पामे छे अने ज्ञानादिक आत्म गुणो वहे आत्मा तृप्ति पामे छे. माटे पुद्गलिक तृप्तिने साची तृप्ति मानवी ए ज्ञानी विवेकी तुं कर्तव्य नथी. खोटी अने क्षणिक पुद्गलि-क तृप्तिनो अनादर करीने सत्य अने भ्रास्वती सहज तृप्तिनोज स्वी-कार करनार खरो ज्ञानी—विवेकी होवो घटे छे. वाकी मोटी मोटी वातो करीने विरमी रही, पुद्गलिक सुखमां रच्या पच्या रहेनारा खरा ज्ञानी होवा घटता नथी.
 - ६. पुद्गलिक सुखना आशी वडे अग्राह्य तथा अवाच्य एवा

१. जिह्वा, जीभ.

परब्रह्ममां जे तृप्ति रहेली छे ते विषयरसना आशीजनो जाणी पण शकता नथी। पुद्गलिक छलना रसीया तो विविध विषय रसमांज सार सुख समजी नित्य रच्या पच्याज रहे छे। सिद्ध परमात्मदशामां केवुं अने केटछं सुख रहेलुं छे, तेनो तेमने स्वप्नमां पण ख्याल नथी।

- ७. सत्य संतोष रहित-असंतोषीने पुद्गलो वडे विविध विष-यमय विषनाज उद्गार आवे छे. अने सत्य ज्ञान-संतोषीने तो उत्तम एवा ध्यानामृतनाज उद्गारनी परंपरा आवे छे. जीव जेवों आहार करे छे तेवोज तेने ओडकार आवे छे. निरंतर पुद्गलिक मुखर्माज रच्या पच्या रहेनाराने विषय वासनानीज अबलताथी तेनाज झेरी उद्गार आवे छे, अने तत्त्व ज्ञानमांज तृप्ति मानी मग्न रहेनारा महा पुरुषने तो निर्मळ ध्यानामृतनाज उत्तम ओडकार आव्या करे छे. एम निर्धारीने सर्व प्रकारनी विषय आशा तजीने तत्त्व ज्ञानमांज मीति जगाववी, जेथी शुद्ध चैतन्यनी जागृतिथी अनु-पम ध्यानामृतनी दृष्टि थशे अने अनादि अविवेक जन्य विषमतापनी उपशांतिथी सहज शीतलता छवाये जशे. परंतु याद राखवुं के आ सर्व विविध विषयपासने छेदवाथी वनी शकशे.
 - ८. विषय सुखधी तृप्ति निह पामेला-असंतुष्ट एवा इंद्र उपे-द्रादिक पण तत्त्वतः सुखी नथी. किंतु तत्त्वज्ञानथी तृप्त कर्मकलंक

मुक्त एवा एक मुनिज लोकमां सुखीया छे. विषयतृष्णाने तोडीने सहज संतोष धारवामांज खरुं सुख समायछं छे.

॥ ११ ॥ निर्लेपाष्टकम् ॥

संसारे निवसन् स्वार्थ, सज्जः कज्जलवेश्मनि ॥ लिप्यंत निविलो लोको, ज्ञान सिद्धो न लिप्यते ॥१। नाहं पुद्रल भावानां, कर्ता कारियता च न ॥ नानुमंतापि चेत्यात्म, ज्ञानवान् लिप्यते कथम् ॥ ॥ लिप्यते पुद्रलस्कंघो, न लिप्ये पुदुगलैरहम् ॥ चित्रव्योमांजनेनेव, ध्यायन्निति न लिप्यते ॥ ३॥ लिप्तता ज्ञानसंपात, प्रतिघाताय केवलम् ॥ निर्लेपज्ञानमञ्जस्य, क्रिया सर्वोपयुज्यते ॥ ४ ॥ तपः श्रुतादिनामत्तः, क्रियावानपि लिप्यते ॥ भावना ज्ञान संपन्नो, निःष्क्रियोऽपि न लिप्यते॥५॥ अलिसो निश्चयेनात्मा, लिसश्च व्यवहारतः ॥ शुद्धचत्यलिसया ज्ञानी, क्रियावान् लिप्तयादृशा ॥६॥

ज्ञान किया समावेशः, सहैवोन्मीलने द्रयोः॥ भूमिका भेदतस्त्वत्र, भवेदकैक मुख्यता॥ ७॥ सज्ञानं यदनुष्ठानं, न लिप्तं दोष पंकतः॥ शुद्ध बुद्ध स्वभावाय, तस्मै भगवते नमः॥ ८॥

- १. संसारमां वसता अने स्वार्थ साधवामांज तत्पर एवा सर्व कोइ प्राणी कर्मथी छेपाय छे. अथवा काजळनी कोटडीमां रहेतां कोण कोरो रहीज शके १ फक्त ज्ञान सिद्ध पुरुषज निर्लेप रही शके छे. तत्त्वज्ञानी अने विवेकी महात्माज मात्र कोरो रही कर्म अंजन-थी मुक्त थइ शके छे. एवा सत्पुरुषोने संसारना कोइपण पदार्थमां आसक्ति होती नथी, अने अंतर आसक्ति विना रागद्वेषादिकना अ-भावे कर्म वंध पण थइ शकतों नथी.
- २. हुं परभावने करुं निहं, करावुं निहं तेमज अनुमोदुं निहं, विभावमां रमवानो मारो धर्मज नथी, मने स्वभावमांज रहेवुं युक्त छे. आ प्रमाणे अंतरमां समजनार आत्म ज्ञानी कर्म अंजनथी केम छेपाय है जे विभावथी विरमीने केवल स्वभाव रमणी थाय छे, तेज खरो आत्म ज्ञानी छे अने तेवा आत्म ज्ञानीज सकल कर्म कलंक थी सर्वथा मुक्त थइ अंते परम पदने प्राप्त थाय छे.

- ३. फक्त पुद्गलन पुद्गलथी लेपाय छे. पण चेतन पुद्गल-थी लेपातो नथी. जेम आकाश अंजनथी लेपातुंज नथी तेम आत्मा पण कर्म अंजनथी लेपातो नथी.' एवा सम्यग् विचार पूर्वक विवेक सेवनारो सत्पुरुष कदापि क्षिष्ट कर्मनो भागी थतोज नथी. परंतु जे अनादि अविद्या योगे मोहने वश थइ जडवत् वनी पुद्गलमांज आनंद मानी वेसे छे तेवो पुद्गलानंदी तो मोह मायाना पाशमां पडी जरुर क्षिष्ट कर्म बंधननोज भागी थाय छे.
- ४. निर्लेप दृष्टि एवा सत्युक्षवनी सकल सापेक्ष किया विभा-वमां जता उपयोगने वारवा माटे होय छे. साध्य दृष्टिवाळानी स-कल किया सापेक्ष—सहेतुकज होय छे, तथी आत्मानंदी पुरुष जे जे किया करे छे तेनो हेतु पुद्गलमां जती दृष्टिने रोकवा अने स्व-भाव रमणी थवा माटेज होय छे. ज्यां सुधी संपूर्ण स्वभाव रमणी न थवाय त्यां सुधी तेवो संपूर्ण अधिकार पामवा अने वाधकभूत विभाव उपयोगने वारवा स्वातुकूल किया करवानी खास जरुर पढे छे.
- ५. तप अने ज्ञान विगेरेनो मद करनारो गमे तेवी आकरी कष्ट करणी करतो होय तोपण कर्मथी छेपाय छे. अने निर्मे भाव-थी जेतुं अंतःकरण भरेछुं होय ते कदाच तेवी आकरी करणी करी शकतो न होय तोपण कर्मथी छेपातो नथी. एम समजीने शाणा

माणसोए कर्नृत्व अभिमान तजवुं युक्त छे. कोइ पण जातनो मद करवाथी प्राणी पतितपणुं पामे छे. अने मद तजी निर्मद थइ नम्र पणे स्वकर्तव्य समजी जे सत् क्रिया करे छे ते स्व उन्नतिने सुखे साथे छे.

६. निश्रय-तत्त्व दृष्टिथी जोतां आत्मा अलिप्त छे, अने व्यव-हार दृष्टिथी जोतां तेज आत्मा कर्मथी लिप्त देखाय छे. तत्त्वदृष्टि पुरुष अलिप्त दशाथी आत्मानी शुद्धि करे छे, अने क्रियावान व्यवहार दृष्टि पुरुष स्वानुकूल उचित आचरणथी शुद्ध थाय छे. वं-नेतुं साध्य एकज होवाथी स्व स्व अनुकूल साधनवडे उभय सिद्धिः संपादन करी शके छे. साध्य विकल कोइ पण प्राणी स्वानुकूल साधन विना सिद्धि साधी शकता नथी.

७ निश्रय अने व्यवहार दृष्टितुं साथेज मगटन-विकास थवार्थी ज्ञान अने क्रिया ए उभयनो समावेश थइ जाय छे, परंतु स्थान विशेषथी तो ज्ञाननी के क्रियानी मुख्यता होय छे. व्यवहार साधन वहे निश्रय साध्य थाय छे, अने निश्रय साधनथी मोक्ष साध्य थाय छे. व्यवहार ए मोक्षतुं परंपर कारण छे अने निश्रय अनंतर कारण छे. उभयतुं मीलन थवाथी शीघ्र मोक्ष साधना सिद्ध थाय छे. माटे मोक्षार्थीये निश्रय दृष्टि हृदयमां धारीने व्यवहार मार्गतुं अवलंबन अवश्य करवुं युक्त छे. एम करवाथी साधक शीघ्र साध्य सिद्धि करी शके छे.

८. ज्ञानयुक्त जेतु अतुष्ठानं दोष पंकथी छेपायुं नथी एका शुद्ध स्वभाव रमणी महापुरुषने नमस्कार थाओं जेनी क्रिया समज पूर्वक मोक्ष माटेज होवाथी निर्दोष छे. तेमज तीक्ष्ण उपयोगथी स- इज आत्म विशुद्धि करवा समर्थ छे तेने नमस्कार छे.

॥ १२ ॥ निस्पृहाष्टकम् ॥

स्वभावलाभात् किमपि, प्राप्तव्यं नावशिष्यते ॥ इत्यात्मेश्वर्य संपन्नो, निःस्पृहो जायते मुनिः ॥१॥ संयोजितकरैः के के प्रार्थ्यंते न स्पृहावहैः ॥ अमात्र ज्ञान पात्रस्य, निस्पृहस्य तृणं जगत् ॥ २॥ छिंदन्ति ज्ञानदात्रेण, स्पृहाविषलतां बुधाः ॥ मुखशोषंच मूर्च्छांच दैन्यं यर्च्छति यत्फलम् ॥३॥ निकासनीया विद्वषा, स्पृहा चित्त गृहाब्द्हिः ॥ अनात्मरति चांडाली, संगमंगी करोति या ॥४॥ स्पृहावन्तो विलोक्पंते, लघवस्तृणतूलवत् ॥ महाश्चर्यं तथायेते, मज्जन्ति भववारिधौ ॥ ५ ॥ गौरवं पौर वंद्यत्वात्, प्रकृष्टतं प्रतिष्ठया ॥

स्यातिं जाति गुणात्त्वस्य, प्रादुष्कुर्यात्रनिः स्पृहः ॥६॥ भूशय्या भैक्षमशनं, जीर्णं वासो वनं गृहम् ॥ तथापि निःस्पृहस्याहो, चिक्रणोऽप्यधिकं सुलम् ॥७॥ परस्पृहा महा दुःखं, निःस्पृहत्वं महा सुलम् ॥ गुतदुक्तं समासेन, लक्षणं सुखदुःखयोः ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

रे. सहज आत्म संपत्तिनी प्राप्ति थया बाद वीर्ज कंइ पण प्राप्तः कर्त्युं वाकी रहेतुंज नथी। एवा आत्म ऐश्वर्य संपन्न मिन परस्पृद्दार-हित-निस्पृह वनी जाय छे. सर्व रूद्धि अने समृद्धि घटमांज रहेली छे. तेवी सहज साहेवी जो प्रगट थवा पामे तो वीजी बाह्य-तुच्छ बावतोमां मुंझावानुं रहेतुं नथीज। सहज ऐश्वर्यवान मुनि परनी परवा रहित होवाथी अने उत्तम सद्गुणोथी भरपुर होवाथी निःस्पृह थड़ जाय छे.

२ परस्पृहावंत प्राणीओ हाथ जोडी जोडीने कोनी कोनी पा-र्थना करता नथी? सस्पृही सर्व कोइना दास छे अने अपार ज्ञान-चान निःस्पृहीने तो जगतमां कोइनी परवा नथी. पुद्गलानंदी प्राणी योताना स्वार्थ माटे गमे तेवानी पण प्रार्थना करवा चूकतो नथी. ्ञिन ज्ञानानंदी निःस्वृहीने कोइनी ककी पुरवा नाई होवाथी तेतो । सदानंदमां स्वाधीनपणे वर्ते छे.

दे तस्ववेदी पुरुषो ज्ञानरुपी दातरहाथी स्पृहारुपी विष वेल-हीने छेदी नांखे छे केमके परस्पृहाथी मुख शोष मूछी अने दीनतां दिक दोषोने सेवना पढे छे. ज्ञानी विवेकी पुरुषो तेवी स्पृहाने दो-ष्युतं मूल जाणीन समूलगी छेदवा तत्पर रहे छे.

४. ढाह्या माणसे स्पृहाने कुमती चंडालणीनी संगत करनारी जाणीने चित्त-मंदिरमांथी दूर करवी जोइये. कुमतिने पोषनारी स्पृहाने सिद्देवेकीजनो सेवताज नथी, पण भूतना उतारनी जेम सम-जीने तेने घरथी वहार काढे छे. आवा निःस्पृही पुरुषो सदा सुखर्मा समन रही श्रके छे.

4. स्पृहावंत लोको अत्यंव तुच्छ अने हलका जणाता छतां भवसागरमां दूवी जाय छे, ते महा आश्चर्यकारक छे. केमके हलकी बस्तु तो तरवीज जोइये अने भारे बस्तुज इनवी जोइए एनो इद-स्ती नियम छे तेनुं आमां चल्लंघन यतुं देखाय छे, तेनुं समाभान एनुं के के तेओ स्वभाने तुच्छ छतां ममता दोषथी एना तो भारे बयेला होय छे के बेहद भारधी भरेला नहाणनी जेम तेओ अभीय-दिल भारत करे छे.

- ६. निःस्पृही पुरुष छोकवंदनीकताथी पोतानी वडीछता, मतिष्ठाथी श्रेष्ठता अने जातिग्रुणथी ख्यातिने मगट करताज नथी. जे
 कोक पूजा, प्रतिष्ठा के ख्यातिनो विकल्प निह कस्तां स्वकर्तव्यज बजाव्या करे छे तेज खरा निस्पृही छे. खरा निःस्पृही स्वप्नमां पण परोपकारनो वदछो इच्छता नथी.
- ७. भूमी एज जेनी अय्या छे, माधुकरी द्विष्टी जेने भोजन करवातुं छे, प्हेरवाने जेने जीर्णभाय वस्त छे, अने वनमां जेने वस-वातुं छे, एवा निःस्पृही पुरुषने उत्तम प्रकारना संतोषना योगधी चक्रवर्ती करतां पण अधिक सुख छे, जेणे संसारनो खोद्रो वैभव तजीने सहेज आत्म ऐश्वर्य पण्नवा उत्तम संयमतुं सेवन आदर्शु छे, एवा आत्म संयमी महाप्रुष्ट्य चक्रवर्तीथी ओछा सुखी नधी. खोटो किल्पित आनंद वर्जी, सहज आनंद साधनार सहपुरुष सर्वोत्तम सुखी छे. परण्यहा रहित-निःस्पृही निर्मेथ एवं सर्वोत्तम सुख साधी शके छे.
- दे. मुलतं अने दुःखतं संक्षेपथी आर्त् सक्षण शासमां कहेळं के के परस्पृहा एज महा दुःस के अने निःस्पृहता एज परम मुखा के. माटे मोक्षायींप परस्पृहा तजी निःस्पृह थतुं युक्त के.

पणुं छे. तेवा आचरण विनानो मुनि वेष विडंबना रूपज छे, ज्ञान-वडे शुद्धाशुद्धनो हिताहितनो विवेक जागे छे. दर्शनवडे तेनी यथा-र्थ प्रतीति वेसे छे, अने चारित्रथी अहितना त्याग पूर्वक हित पर्द्धा थाय छे. उक्त ज्ञान दर्शन अने चारित्र मळीने रत्नत्रयी कहेवा-य छे ए रत्नत्रयीने सम्यग् सेवनारा मुनि कहेवाय छे, उक्त मुनिनी रहेणी कहेणी एक सरखी होय छे केमके ते ज्ञान अने क्रियानो एक सरखी रीते स्वीकार करे छे अने अन्य मोक्षार्थीने पण तेवीज हितकारी मार्ग वतावी जन्म मरणनां अनंत दुःखमांथी मुक्त करवा यत्न सेवे छे.

- ४. मणि-रत्न हाथमां आव्या छतां तेनो आदर करी शकाय निह तेमज तेनुं फल मेलवी शकाय निह तो जाणवुं के मणीनी पी-छानज थइ नथी के मणिनी प्रतीतिज वेटी नथी. अन्यथा मणिनुं मूल्य समजीने तेनो आदर जरुर करायजः
- ५. तेम जो शुद्ध आत्म स्वभावमां रमण थइ शके निह तथा रागद्वेप मोहादिक दुष्ट दोषोनो त्याग थइ शके निह तो ते ज्ञान के दर्शन कंइ कामनाज नधी. खरां ज्ञान अने दर्शनथी स्वरूप मग्नता अने दोप हानिरूप उत्तम फल थवुंज जोइए, सहज आनंदमां मयता थवी ए जेम उत्तम लाभ छे, तेम दुष्ट दोषोन्चं दमन करी तेमनो समूलगो नाश करवो ए पण अति उत्तम लाभरूपज छे. खरुं

मुनिपणुं भजनारा निर्मेथ साधुओ एवो उत्तम लाभ हांसलः करी शके छे.

- ६. जेवुं शोफ (सोजा) तुं पुष्टपणुं, अथवा वध्य (वध क-रवा छइ जवामां आवनार) ने शणगारवुं नकामुं छे, तेवोज अह संसारनो जन्मांद अनर्थकारी छे, एम समजीने मुनि सहज संतोषी यइ रहे छे. संसारतुं असारपणुं सम्यग् विचारी संतोष द्विची जेह सहजानंदमां मन्न थइ रहे छे तेज खरो मुनि—निर्मेथ छे.
- ७. वचन नहि उचरवारप मान तो एकेंद्रियादिकमां पण होइ शके छे तेवा मौनधी आत्माने कंइ विशेष लाभ नथी, खरो लाभ तो ए छे के पुद्गालिक महत्तिमांथी विरमी सहज आत्म स्वभावमां: ज मग्रीथवा मन, वचन अने कायानो सदा सर्वदा सदुपयोग कर्याः करवो.
- ८. जे समजीने विवेकथी स्वकर्तव्य बजावे छे, जेनी क्रियहा दीपकना जेवी ज्ञान-ज्योतीमय छे, तेवा सम स्वभावी महापुरुषतुं-ज मौन श्रेष्ट छे. समतावंत महा मुनिज श्रेष्ट मौन सेवी शके छे.

॥ १३ ॥ मौनाष्टकस् ॥

मन्यते यो जगत्तवं, स मुनिः परिकीर्तितः॥ सम्यक्तव मेव तन्मीनं, मीनं सम्यक्त्वमेव च ॥१॥ आत्मात्मन्येवयच्छुर्छं, जानात्यात्मानमात्मना ॥ सेयं रत्नत्रये इप्ति, रुच्याचारैकता सनेः ॥२॥ चारित्रमात्मचरणाद्, ज्ञानं वा दर्शनं युनेः॥ शुद्ध ज्ञान नये साध्यं, ितया लाभात् क्रियानये ॥३॥ यतः प्रवृत्तिन मणी, लभ्यते वा न तत्फलम् ॥ अतात्त्विकी मणिज्ञप्ति, मणिश्रद्धा च सा यथा ॥ १ ॥ तथा यतो न शुद्धात्म, स्वभावाचरणं भवेत् ॥ फलं दोष निवृत्तिर्वा, न तदुज्ञानं न दर्शनम् ॥५॥ 🗀 यथा शोफस्य पुष्टत्वं, यथा वा वध्य मंडनम् ॥ तथा जानन् भवीनगढ, मात्मतृप्तो सुनिभवेत् ॥६॥ मुलभं वागनुचारं, मौनमेकेंद्रियेष्वपि॥ पुदुग्लेष्व प्रवृत्तिस्तु, योगानां मीन मुत्तमम्॥७॥

ज्योतिर्मयीव दीपस्य, क्रिया सर्वापि चिन्मयी ॥ यस्यानन्य स्वभावस्य, तस्य मौन मनुत्तरम् ॥८॥

- १. जे समस्त तक्तने यथार्थ जाणे छे ते मुनि कहेवाय छे, जे वस्तु तक्तने सम्यग् समजी सर्वत्र मध्यस्थ रहे छे, खोटी वावतमां कदापि मुंझातोज नथी ते मुनि छे. तेवुं मुनिपणुं एज खर्च समिकत छे. अने निर्मेळ समिकत एज मुनिपणुं छे. शुद्ध समिकत विना खर्च मुनिपणुं संभवतुंज नथी. मुनिपणुं ज्यां मुधी जाळवी रखाय छे, त्यां मुधी समिकत कायम रहे छे.
- २. आत्मा पोते पोतामां रहेछं जे शुद्ध स्वरुप जे वहे जाणे छे तेज मुनिनी रत्नत्रयीमां ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता रुप छे. सम्यग् ज्ञानथी स्व स्वरुपने सारी रीते समजी शके छे. सम्यग् दर्श-नथी स्व स्वरुपनी यथार्थ श्रद्धा प्रतीतिं थइ ज्ञाके छे. अने सम्यग् चारित्रथी आत्म—स्थीरता एटले स्वरुप रमण थइ ज्ञाके छे. सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता एज मुनिपणुं छे.
- ३. ज्ञान दर्जन अने चारित्र मुनिपणाना भावयीज सार्थक छे, विभावनो त्याग अथवा स्वभावनो स्वीकार करवो एज मुनि

पणुं छे. तेवा आचरण विनानो मुनि वेष विडंबना रूपज छे, ज्ञान-वेड शुद्धाशुद्धनो हिताहितनो विवेक जागे छे. दर्जनवेड तेनी यथा-र्थ मतीति वेसे छे, अने चारित्रथी अहितना त्याग पूर्वक हित प्रद्वति थाय छे. उक्त ज्ञान दर्जन अने चारित्र मळीने रत्नत्रयी कहेवा-य छे ए रत्नत्रयीने सम्यग् सेवनारा मुनि कहेवाय छे, उक्त मुनिनी रहेणी कहेणी एक सरखी होय छे केमके ते ज्ञान अने क्रिया-नो एक सरखी रीते स्वीकार करे छे अने अन्य मोक्षार्थीने पण तेवीज हितकारी मार्ग बतावी जन्म मरणनां अनंत दुःखमांथी मुक्त करवा यत्न सेवे छे.

- ४. मणि-रत्न हाथमां आव्या छतां तेनो आद्र करी शकाय नहि तेमज तेनुं फल मेलवी शकाय निह तो जाणवुं के मणीनी पी-छानज थइ नथी के मणिनी प्रतीतिज वेठी नथी. अन्यथा मणिनुं मूल्य समजीने तेनो आद्र जरुर करायजः
- 4. तेम जो शुद्ध आत्म स्वभावमां रमण थइ शके निह तथा रागद्वेष मोहादिक दुष्ट दोषोनो त्याग थइ शके निह तो ते ज्ञान के दर्शन कंइ कामनाज नथी. खरां ज्ञान अने दर्शनथी स्वरूप मग्नता अने दोष हानिरूप उत्तम फल थवुंज जोइए, सहज आनंदमां मग्नता थवी ए जेम उत्तम लाभ छे, तेम दुष्ट दोषोतुं दमन करी तेमनो समूलगो नाश करवो ए पण अति उत्तम लाभरूपज छे. खरूं

ग्रुनिपणुं भजनारा निर्यथ साधुओ एवो उत्तम लाभ हांसल करी शके छे.

- द. जेवुं शोफ (सोजा) तुं पुष्टपणुं, अथवा वध्य (वध क-रवा छड़ जवामां आवनार) ने शणगारबुं नकामुं छे, तेवोज आ संसारनो उन्माद अनर्थकारी छे, एम समजीने मुनि सहज संतोषि यह रहे छे. संसारनुं असारपणुं सम्यग् विचारी संतोष दृत्तिथी जे सहजानंदमां मम थइ रहे छे तेज खरो मुनि—निर्मथ छे.
- ७. वचन निह उचरवारुप मान तो एकेंद्रियादिकमां पण होइ शके छे तेवा मौनधी आत्माने कंइ विशेष लाभ नथी, खरो लाभा तो ए छे के पुद्गालिक पृष्टतिमांथी विरमी सहज आत्म स्वभावमां. ज मग्रीथवा मन, वचन अने कायानो सदा सर्वदा सदुपयोग कर्या.
- ८. जे समजीने विवेकथी स्वकर्तव्य बजावे छे, जेनी क्रियह दीपकना जेवी ज्ञान-ज्योतीमय छे, तेवा सम स्वभावी महापुरुषतुं-ज मौन श्रेष्ट छे. समतावंत महा मुनिज श्रेष्ट मौन सेवी शके छे.

॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

नित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥ अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाचार्यैः प्रकीर्तिता ॥शा यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगमं ॥ छउं लब्धं न शकोति, तस्य मोहमलिम्छ्चः ॥शा तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥ अदम्रवरिनुध्याये, दम्रवद् मंगुरं वपुः ॥ ३॥ शुचीन्यपशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुची संभवे ॥ देहे जलादिना शीच, भ्रमो मुहस्य दारुणः ॥शा यः स्नात्वा समता कुंडे, हित्वा कश्मलर्ज मलस् ॥ पुन ने याति साछिन्यं सोऽन्तरात्मा परः शुचिः ॥५॥ आत्मबोघोनवः पाशो, देह गेह घनादिष्ठ ॥ यः क्षिसोप्यात्मना तेषु, स्वस्य बंधाय जायते ॥६॥ मिथो युक्तपदार्थाना, मसंक्रमचमाकिया ॥ चिन्मात्र परिणामेन, विदुषैवानुभूयते ॥ ७ ॥

अविद्या तिमिरधंसे, हशा विद्याजन स्पृशा ॥ पश्यन्ति परमात्मान, मात्मन्येव हि योगिनः ॥ ८॥

- १. अनित्य, अशुचि, अने अनात्मिक परवस्तुने नित्य पवित्र अने पोतानी लेखवी ए अविद्यातुं लक्षण छे, अने वस्तुने वस्तुगत— —यथार्थ जेवा रुपमां होय तेवा रूपमां वरावर समजवी ए विद्यातुं लक्षण छे, एम योगाचार्योए शास्त्रमां कहुं छे.
- २. आत्मा नित्य अविनाशी छे, तेनी कदापि नास्ति थतीज नथी. सदा सर्वदा तेनी अस्तिता छे, अने आ आत्माने थतो पर संयोग विनाशशील छे, तेनो तो अवश्य वियोग थवानोज छे. एवो जेने निश्चय थयो छे तेने मोइ चोरटो छली शकतो नथी. सिंद्रिया संपन्न आत्मा मोइनोज जय करी अखंड छल साधी शके छे. पण सद्विद्या विद्दीनने तो मोह चोरटो सदा संताप्याज करे छे. माटे मोक्षार्थीए सिंद्रिया संपन्न थवा सर्वदा सद्व्यम सेववो.
- ३. निर्मल बुद्धिवालो आत्मा लक्ष्मीने जलतरंगनी जेवी च-पल लेखे छे, आयुष्यने वायुनी जेब्रुं अथीर लेखे छे, अने श्रूरीरने जारदना मेघनी जेब्रुं क्षणभंग्रुर लेखे छे. एवी अथीर परवस्तुओमां विवेकवान ग्रुंक्षातो नथी.

इच्छन्न परमान् भावान्, विवेकादेः पतत्यधः ॥
परमं भावमन्विच्छन्, नाविवेके निमज्जित ॥६॥
आत्मन्येवात्मनः कुर्यात्, यः षट्कारक संगतिम् ॥
काविवेकज्वरस्थास्य, वैषम्यं जड मज्जनात् ॥७॥
संयमास्रं विवेकेन, शाणेनोत्तेजितं मुनेः ॥
धृतिधारोल्वणं कर्म, शत्रुच्छेद क्षमं भवेत् ॥ ८ ॥

- १. क्षीरनीरनी पेरे सर्वदा एक मेक मुळीने रहेळा कर्म अने जीवने जे व्यक्तपणे जूदा करी नांखे छे ते मुनि—हंस विवेकवान गण्णाय छे. सिंदिवेक जाग्या विना अनादि अनंत कालथी संयुक्त थर रहेळा कर्म अने जीवने कोइ कदापि रुपष्ट रीते जूदा करी शकेण नहिं. तेम करवाने सिंदिवेकनी आवश्यकता रहेज छे.
 - २. देहन आत्मा छे अथवा आत्मा देहथी जूदो नथी एवे अविवेक तो जन्म जन्ममां अविद्याना वश्यी छलभज छे. पण अ देह आत्माथी खास जूदोज छे, केमके देह तो विनाशी छे अने आत्मा अविनाशी छे, देह तो जद छे अने आत्मा सर्वेतन-चैतन्य

युक्तछे, एवा विवेक कोटिंगमे भवोमां भाग्य योगेज यह शकेछे, अविद्यानी नाश्यये छते सिंद्रवेक जागी शकेछे. ॥

३. शुद्ध-निर्मल आकाशमां पण चक्षु विकारथी जैम रातुं पीछं देखायछे, तेम अविवेकथी आत्मामां विविध विकारो प्रतिभासेछे. आत्मा आकाशवत निरंजन छतां उपाधि संबंधथी मलीन- विकारी भासेछे, सर्व उपाधि-संबंध दूरथये छते आत्मा सहज स्वभावमां स्थित थइ रहेछे, निर्मल निष्कषायजं आत्मानो सहज स्वभावछे. 'राग देषादिक उपाधि दूरथवाथी स्फटिक रत्ननी स्वभाविक कांति जेवो निर्मल आत्म धर्म प्रगट थइ जायछे. !!

४, जोके राजाना योद्धाओं युद्ध करेछे छता राजाज जीत्यो हार्यों कहेवायछे, तेम श्रुभाशुंभ कमेथीज सुख दुश्व प्राप्त थायछे छतां आविवेकथी असुक आत्माए असुक उपर अनुग्रह या निग्रह-कर्यों कहेवायछे, कमेनी विचित्रताथी फलनी विचित्रता थायछे, छतां आ कार्य माराथीथसुं, मारा विना आर्चु काम बनी शकेज निहं, हुंज सर्वनुं पालन करंछुं, माराविना कोइ पालक नथीज ए्चुं कर्नु-त्व अभिमान कर्नु ए केवल अविवेकनुंज जोरछे, सुविवेकी पुरुषो-एवं मिथ्याभिमान कहापि करताज नथी तेवा प्रान्न पुरुषो तो सर्वमां सांक्षी पशुंज सेवेछे।।।

पः जेम-धंतूरोःपीने गांदो यथेको आदमी सर्वत्र सोहंन देखेले

॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

ानित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥ अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाचार्यैः प्रकीर्तिता ॥शा यः पश्येत्रित्य मात्मान, मनित्यं परसंग्रमं ॥ छउं लब्धं न शकोति, तस्य मोहमलिम्छचः ॥शा तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥ अदभ्रवरिनुध्याये, दभ्रवद् भंगुरं वयुः ॥ ३॥ शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुची संभवे ॥ देहे जलादिना शीच, अमो मुदस्य दारुणः ॥शा यः स्नात्व समना केने किया करणकर्त एक्स म पुन ६ नाव छे, एम समजीने सुविवेकी जनो परवस्तुओमाँ। आसर्क्ति घरिता नथीं।

७. विद्वान पुरुष ज्ञान चक्षुथी सर्व पदार्थने स्वस्वभावमांजा रहेता देखे छे. संयुक्त वस्तुनो वियोग थाय छे, पण कोइ वस्तु पोतानो मूल स्वभाव तजी देती नथी, एम ज्ञानी पुरुषो साक्षात् अनुभवी पोते स्वस्वभावमांज स्थित रहे छे. रागद्वेषने तजी सर्वऋ समभावथीज अनुवर्तन करनाराज विद्वान गणाय छे.

अविद्या तिमिरधंसे, हशा विद्याजन स्पृशा ॥ यश्यन्ति परमात्मान, मात्मन्येव हि योगिनः ॥ ६॥

- १. अनित्य, अशुचि, अने अनात्मिक परवस्तुने नित्य पवित्र अने पोतानी लेखवी ए अविद्यातुं लक्षण छे, अने वस्तुने वस्तुगत— —यथार्थ जेवा रुपमां होय तेवा रूपमां वरावर समजवी ए विद्यातुं लक्षण छे, एम योगाचार्योए शास्त्रमां कहुं छे.
- र. आत्मा नित्य अविनाशी छे, तेनी कदापि नास्ति थतीज नथी. सदा सर्वदा तेनी अस्तिता छे, अने आ आत्माने थतो पर संयोग विनाशशील छे, तेनो तो अवश्य वियोग थवानोज छे. एवो को निश्चय थयो छे तेने मोह चोरदो छली शकतो नथी. सदिवा शुद्ध ऽपि ज्यामि तिमिरा, देखा मिमिश्रता कर्लक छे. पण विकार मिश्रता भाति, तथात्मन्य विवेकतः ॥३॥ न्दे यथा योधेः कृतं छुद्धं, स्वामिन्येवोपचर्यते ॥ शुद्धात्मन्य विवेकेन, कर्म स्कंधो ऽर्जितं तथा ॥ ४॥ इष्टकाद्यपि हि स्वर्ण, पीतोन्मत्तो यथेक्षते ॥ आत्माभेदभ्रमस्तद्ध, हेहादावविवेकिनः ॥ ५॥

इच्छन्न परमान् भावान्, विवेकाद्रेः पतत्यधः ॥
परमं भावमन्विच्छन्, नाविवेके निमज्जित ॥६॥
आत्मन्येवात्मनः कुर्यात्, यः षट्कारक संगतिष् ॥
काविवेकज्वरस्यास्य, वैषम्यं जड मज्जनात् ॥७॥
संयमास्रं विवेकेन, शाणेनोत्तेजितं मुनेः ॥
धृतिधारोल्वणं कर्म, शत्रुच्छेद क्षमं भवेत् ॥ ८ ॥

- १. क्षीरनीरनी पेरे सर्वदा एक मेक मछीने रहेला कर्म अने जीवने जे व्यक्तपणे जूदा करी नांखे छे ते मुनि-इंस विवेकवान गण्णाय छे. सिंद्रवेक जाण्या विना अनादि अनंत कालथी संयुक्त थह रहेला कर्म अने जीवने कोइ कदापि रुपष्ट रीते जूदा करी शकेज नहिं. तेम करवाने सिंद्रवेकनी आवश्यकता रहेज छे.
 - २. देहज आत्मा छे अथवा आत्मा देहथी जूदो नथी एवी अविवेक तो जन्म जन्ममां अविद्याना वश्चथी छुल्भज छे. पण आ देह आत्माथी खास जूदोज छे, केमके देह तो विनाशी छे अने आत्मा अविनाशी छे, देह तो जह छे अने आत्मा सचेतन-चैतन्य

युक्तछे, एवा विवेक कोटिंगमे भवोमां भाग्य योगेज यह शकेछे. अविद्यानी नाश्यये छते सद्विक जागी शकेछे. ॥

- ३. शुद्ध-निर्मल आकाशमां पण चक्षु विकारथी जैम रातुं पीछं देखायछे, तेम अविवेकथी आत्मामां विविध विकारो प्रतिभासेछे. आत्मा आकाशवत निरंजन छतां उपाधि संबंधथी मलीन-विकारी भासेछे, सर्व उपाधि-संबंध दूरथये छते आत्मा सहज स्वभावमां स्थित थइ रहेछे, निर्मल निष्कषायज आत्मानो सहज स्वभावछे. राग द्वेषादिक उपाधि दूरथवाथी स्फटिक रत्ननी स्वभाविक कांति जेवो निर्मल आत्म धर्म प्रगट थइ जायछे. ॥
- ४. जोके राजाना योद्धाओं युद्ध करेछे छतां राजाज जीत्यो हायों कहेवायछे. तेम शुभाशुंभ कमेथीज सुख दुश्व प्राप्त थायछे: छतां आविवेक्यी असुक आत्माए असुक उपर अनुग्रह या निग्रह-क्यों कहेवायछे. कमेनी विचित्रताथी फलनी विचित्रता थायछे; छतां आ कार्य मारायीथछुं, मारा विना आवुं काम बनी शकेज नहिं, छतां आ कार्य मारायीथछुं, मारा विना आवुं काम बनी शकेज नहिं, हुंज सर्वनुं पालन करंछुं, माराविना कोइ पालक नथीज एवं कर्जुं-त्व अभिमान करवुं ए केवल अविवेकनुंज जोरछे, स्रविवेकी पुरुषा-एवं मिथ्याभिमान कदापि करताज नथी तेवा प्राप्त पुरुषो तो सर्वमां सांक्षी पर्युज सेवेछें।।

- ५: जेम-धंतूरो पीने गांदो अयेको आदमी सर्वत्र सोहंण देखेंछे.

समशीलं मनो यस्य, स मध्यस्था महायुनिः ॥३॥ स्व स्वकर्म कृतावेशाः, स्व स्वकर्म भुजो नराः ॥ नरागं नापि च देषं, मध्यस्थ स्तेषु गच्छति ॥ ४ ॥ मनः स्यादु व्यापृतं यावत्, परदोष ग्रुण ग्रहे ॥ कार्यं व्यश्रं वरं तावन्, मध्यस्थे नात्मभावने ॥ ५ ॥ विभिन्ना अपि पंथानः, समुद्रं सरितामिव ॥ मध्यस्थानां परंब्रह्म, प्राप्तुवन्त्येकमक्षयम् ॥ ६॥ स्वागमं राग मात्रेण, द्वेषमात्रात्परागमं ॥ न श्रयामस्त्यजामो वा, किंतु मध्यस्थया हशा ॥७।६ मध्यस्थया दशा सर्वे, ष्वपुनर्वधकादिषु ॥ चारिसंजीवनी चार, न्यायादाशा समेह हितं ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

?. मध्यस्थता आदरवाथीज सद्विवेक मास् थाय छे, अयवा विवेकवंतज मध्यस्थता आदरे छे, माटे मध्यस्थ रहेवा बासकार उप-दिशे छे. जेथी अपवाद पात्र थवुं न पहें एवी अंतरदृष्टियी मध्य- स्थता आदरवी युक्त छे. मध्यस्थता सेववाथी सवल युक्तिनो योग्य आदर करवामां आवे छे अने कुतर्क करवारुपी वाल चपलता दूर, करवानुं वने छे.

- २. मध्यस्थ मुं मनरूपी वाछर डुं युक्तिरूपी गोंने अहुसरीने चाले छे. अथीत मध्यस्थ माणसने आपमितनी खेंचाखेंच होती नथी. परंतु तुच्छ आग्रही हुं मनरूपी मांक डुं तो युक्ति युक्त वात हुं पण खं-हनज करवा तत्पर थइ जाय छे. ते केवल आपमित मुजब वात ने दिंची जाय छे, तेथी साची वात ने पण खोटी पाडवा मयत्न करवा ते चुकतुं नथी. मध्यस्थ मन तो सत्य नेज सत्य तरी के स्वीकारे छे.
- ३. खइए अर्थ साधवामां कुशल अने अन्य अर्थमां उदासीनः एवा सर्व नयोमां जे समभावे रहे छे, लगारे हट ताण करताज नर्थाः ते महामुनिने मध्यस्थ जाणवाः मध्यस्थ मुनि सर्व नय वचनोने सा पेक्षपणे विचारी स्वहित साधवामां तत्पर रहे छे.
- ४. सर्व कोइ पोतपोताना कर्मानुसारे चेष्टा करे छे अने ते. मुजब फल भोगवे छे तेमां मध्यस्थ राग के रोष करतोज नथी. स-बीत्र साक्षी भावे वर्ततां स्वहित सुखे साधी शकाय छे. माटे सर्व अ-मुक्ल या प्रतिकूल संयोगोमां राग द्वेष त्यजीने सर्वदा समभावे र-हेवा सावधान थवुं युक्त छे.

वित्ते परिणतं यस्य, चारित्रमकुतोभयं ॥ अखंडज्ञानराज्यस्य, तस्य साधोः कुतो भयं॥ ८॥

- १. जेने कोइनी कंइपण परवा नथी एवा एक सरखा उदा-सीन स्वभाववाळा महापुरुषने भय भ्रांति जन्य कष्ट परंपरा होयज केम ? मध्यस्थ दृष्टि महापुरुष सदा निर्भय भयभ्रांतिथी मुक्तज रहे छे.
- २. भारे भयथी भरेला संसार मुखयी शुं ? तेथी सर्यु. भय भरेलुं मुख ते दुःखरूपण छे. सर्वथा भय रहित सहज आत्मिक मुखज मुखरूप गणवा योग्य छे. आधि व्याधि अने उपाधि जन्य दुःखयी भरेला संसारमां मुखमात्र नामनुंज छे. जन्म मरणथी मुक्त करे एष्टं न्वभाविक ज्ञान मुखज साचुं छे.
- ३. सम्यग् ज्ञानवडे ज्ञेय-पदार्थने यथार्थ जोनार मुनिने भय राखवातुं शुं प्रयोजन छे ? सहज सुखमां झीली रहेला मुनिने पुद्-गलिक सुखर्तुं भ्रयोजन नथी. पुद्गल उपरथी मूच्छी उठी जवाथी सहज निष्टिति सुख संपजे छे.

- ४. निर्मल ज्ञानस्पी-शक्षने धारी, मोहनी फोजनो घात कर-नार मुनि संवामना मोखरे उभेला हाथीनी पेरे लगारे वीता नथी. तीक्ष्ण ज्ञान धारावडे सावधानपणे सकळ मोह सुभटोने विदारी नांखी शिवश्रीने संपादन करे छे.
- ५. जेना मनमां खरी ज्ञानकला जागी छे ते सदा भय रहित आनंदमां मस्त रहे छे, जे वनमां मयूरो विचरे छे त्यां भ्रजंगनो भय होयज केम ? ज्यां केसरी क्रीडा करतो होय त्यां गजनो प्रचार संभवेज केम ? ज्यां जळहळतो सूर्य जदय पाम्यो होय त्यां अंधकार रहेवा पामेज केम ? तत्त्व दृष्टि पण तेवीज प्रभाववाळी छे.
- ६. मोहास्त्रने निष्फल करवा समर्थ ज्ञान बख्तर जेणे धार्यु छे तेने कमे संयाममां भय के भंग होयज ज्ञानो ? तिंचि हिने मो-हनो भयज नथी. ते गमे तेवा सम या विषम संयोगोमांथी साव-धानपणे पसार थइ जाय छे.
- ७. मोहधी मुंझायेला जीवो भयभीत थका भव अटवीमां भ-म्याज करे छे. मूढ जीवो भयभीत थका कंप्याज करे छे. परंतु प्र-बल ज्ञानवंतनुं तो एक पण रुंवाडुं कंपतुं नथी. ते तो निभयपणे स्वभाविक आत्म सुखमां मग्न रहे छे.
 - ८. जेना चित्तमां निर्भय चारित्र परिणम्युं छे एवा अखंड

ज्ञान तेजथी तपता साधु मुनिराजने शाथी भय संभवे ? शुद्ध चा-रित्रवंतने कशो भय नथी. शुद्ध चारित्र सर्व भयने दूर करी अखंड अनंत मुख साधी शके छे.

॥ १८ ॥ अनात्मशंसाष्टकम् ॥ गुणैर्यदि न पूर्णो असि, कृतमात्म प्रशंसया ॥ गुणैरेवासि पुणिश्चेत्, कृतमात्म प्रशंसया ॥ १ ॥ श्रेयोद्रमस्य मूलानि, स्वोत्कर्षीमः प्रवाहतः ॥ पुण्यानि प्रकटी कुर्वन, फलं किं समवाप्स्यसि ॥२॥ आर्लंबिता हिताय स्यः, परैः स्वगुणरूमयः ॥ अहो स्वयं गृहीतास्तु, पातयन्ति भवोदधौ ॥३॥ उचत्व दृष्टि दोषोत्थ, स्वोत्कर्षज्वर संज्ञिकं ॥ पूर्वपुरुष सिंहेभ्यो, भृशं नीचत्व भावनं ॥ ४ ॥ शरीररूप लावण्य, श्रामारामधनादिभिः॥ उत्कर्षः परपर्याये, श्रिदानन्द घनस्यकः ॥५॥ शुद्धाः प्रत्यात्म साम्येन, पर्यायाः परिभाविताः ॥ अशुद्धाश्चा ऽपकृष्टत्वाच् , नोत्कर्षाय महामुनेः ॥ ६ ॥

क्षोमं गच्छन् समुद्रोऽपि, स्वोत्कर्षपवन्रितः ॥
गुणीघान् बुद् बुदी कृत्य, विनाशयिस किं मुधा ॥१०॥
निरंपक्षानव्िछन्ना, नंतिविन्मात्रमूर्तयः ॥
योगिनो गलितोत्कर्षा, प्रकृषीन्त्पकृत्यः॥ ८॥

- १. जो तुं गुणोथी पूर्ण नथी तो आत्म-प्रसंसा करवाथी सर्धु तेमज जो तुं गुणथी पूर्ण छे तोपण आत्म-प्रशंसा करवातुं कंइपण प्रयोजन नथी. केमके गुणहीनने खोटी आत्म प्रशंसाथी कंइ फायदो थतो नथी. तेमज संपूर्ण गुणवंतने कृत कृत्यपणाथी परस्पृहा नष्ट थइ जवाथी पोतानी प्रशंसा पोताना मुखे करवातुं कंइ पण प्रयोजन रहेतुंज नथी.
- २. जेम जलना प्रवल प्रवाहथी वृक्षनां यूलाडीयां उघाडां पड़ी जवाथी तेने फल वेसतां नथी, तेम आत्म-उत्कर्षथी करेलां उग्रहों प्रकृतोंने प्रगट करी वखाणवाथी विशिष्ट आत्म लाभ संपादन थङ् शकतों नथी.

- ३. आपणा गुणोतुं बीजा अवलंबन करे ते हितकारी थाय छे, पण जो पोताना गुण पोतेज गावा बेसे तो तेथी अधोगतिनी प्राप्ति थाय छे. गुणवाही जनोने गुणीना गुण गावा उचित अने हितकारी छे पण गुणी माणसे स्वमुखे स्वगुण गावा अनुचित अने अहितकारीज छे. माटे मोक्षार्थी जनोए सदा गुणवाही थवा साथे आत्मश्लाघानों स्वमूळगो त्याग करवो उचित छे. स्वश्लाघार्थी प्राणी लघुतानेज प्रामे छे.
- ४. आपगामां अन्य करतां अधिकता मानवारुपी दोषथी उ-त्पन्न थयेला स्वाभिमान इपी ज्वरने शान्त करवानो उत्तम उपाय ष्युक्ते के आपणे पूर्व पुरुष सिंहोथी लघुता भाववी. पूर्व पुरुष सिं-ह्रोना पवित्र चरित्रने सारी रीते संभारी याद लावतां आपणुं गुमान आपो आप गळी जाय छे.
- '५. शरीर, रुप, लावण्य, ग्राम, आराम, अने धन विगेरे पर प्यायोवाडे स्व उत्कर्ष मानवो आत्मानंदी जीवने विलक्कल उचित ज्वायो. तेवी वस्तु वडे तो केवळ पुद्गलानंदी जीवोज गर्व करे छे, पण आत्मानंदी करता नथी.
- ६. ज्ञानादिक शुद्ध पर्यायो पण मत्येक आत्माने सरीखा हो-चायी अने ज्ञारीर विगेरे अशुद्ध पर्यायो अपकृष्ट (नजीवा) होवाथी व त्ते वडे महाम्रुनिने स्वोत्कर्ष करवो लायक नथी. शुद्ध पर्यायोवडे

पण गर्व करवो युक्त नथी तो नजीवा शरीररूप छावण्यादिक अथु-

- ७. गुरु महाराज शिष्यने उपदेशे के भाइ तुं दीक्षित छतां स्वोत्कर्ष वहे संयमनो क्षोभ करीने गुण रत्नोनो व्यर्थ विनाश शा माटे करे छे ? गमे तेटला गुणने पामेलो संयमी स्वगुणनो गर्व कर- चाथी हानिज पामे छे.
- ८. स्पृहा रहित अने अखंड अनंत ज्ञाननाज नम्रुनारूप योगी जनो स्व उत्कर्ष अने पर अपकर्ष संबंधी सर्व कल्पनाओथी मुक्तज स्हे छे. स्व स्वरूपमां स्थित योगीजनो केवल निःस्पृह होवाथी आप वडाइ के परनिन्दा करताज नथी. तेओ तो परम मुखमय निरुत्ति मार्गज पसंद करे छे, पर परिणतिरूप कुत्सित मर्रुत्ति तेमने खुसंद पहतीज नथी.

॥ १९॥ तत्त्वदृष्ट्यष्टकम् ॥

रूपे रूपवती दृष्टि, दृष्ट्वा रूपं निमुह्यति ॥ मज्जत्यात्मनि नीरुपे, तत्त्वदृष्टिस्त्वरूपीणी ॥ १ ॥ अमवाटी वहिर्दृष्टि, श्रेमच्छाया तदीक्षणं ॥

अभान्तस्तत्त्वदृष्टिस्तु, नास्यां शेते सुलाशया॥ २ ॥ **प्रामारामादि मोहाय, यदुदृष्टं बाह्ययादशा ॥** तत्त्वदृष्ट्या तद्वेवांत, नींतं वैराग्य संपदे ॥ ३ ॥ बाह्यदृष्टिः सुधा सार, घटिता भाति सुंदरी ॥ तत्त्वदृष्टेस्तु सा साक्षा, द्विण्मूत्रपिठरोद्री ॥ ४ ॥ लावण्य लहरी पुण्यं, वपुःपश्यति बाह्यदक् ॥ तत्त्वदृष्टिः श्वकाकानां, भक्ष्यं कृमिकुलाकुलं ॥ ५ ॥ गजाश्वेर्भूपभवनं, विस्मयाय बहिर्दशः॥ तत्राश्वेभवनात्कोऽपि, भेदस्तत्त्वदृशस्तुन ॥ ६ ॥ भस्मना केशलोचेन, वपु धृतमलेन वा ॥ महान्तं बाह्यदृग्वेत्ति, चित्साम्राज्येन तत्त्ववित्।। १०॥ न विकाराय विश्वस्यो, पकारायैवानिर्मिताः ॥ स्फुरत्कारुण्यपीयूष, बृष्टयस्तत्त्व दृष्टयः ॥ ८ ॥

ा। रहस्यार्थ ॥

- १. बाह्यदृष्टि जीव पुद्गलिक रूप जोड़ने मुंझाय छे-मूढ बनी जाय छे, पण अरुपी एवी तत्त्व दृष्टि तो निर्मल निराकार आत्म स्वरूपमांज मग्न थइ रहेछे. वाह्यदृष्टि बहुार दोडे छे. अने अंतरदृष्टि स्वभावमां रमे छे.
- २. वाह्यदृष्टि ए भ्रमनी वाडी छे अने वाह्यदृष्टियी जोवुं ए भ्रमनी छाया छे. तेमां भ्रांति रहित तत्त्वदृष्टि तो सुखनी आशायी सूतो नथी. पण पुद्गळानंदी—वाह्यदृष्टि जरूर तेमां सुख बुद्धियी विश्रांति करे छे.
 - ३. गाम, आराम आदि वाह्यदिष्टी जोतां ज़रुर जीवने मोह उपजावे छे, पण तत्त्वदृष्टिथी जोतां तो ते वैराग्यरसनी दृद्धि माटेज थाय छे. वाह्यदृष्टि जीव मधनी मांखीनी जेम तेमां मुंझाइ मरे छे, पण तत्त्वदृष्टि तो साकरनी मांखीनी पेरे मिष्ट स्वाद छइ तेमांथी मुखे मुक्त थइ शके छे. तत्त्वदृष्टिपणुं जागतां चक्रवर्ती पोते पोतानी सकल समृद्धिने सहजमां तजी दृइ संयमनो स्वीकार करे छे. परंतु मूढ दृष्टि एवो भीखारी पोतानुं रामपात्र पण त्यजी शकतो नथी, ए सर्व मोहनोज महिमा छे.
 - ४. वाह्यदृष्टि जीव, सुंदरी (ह्वी) ने अमृतना निचोलथी घ-

हेली माने छे, पंण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने विष्टा मूत्रादिक अग्रुचियुक्त देहवालीज माने छे. बाह्यदृष्टि कोइ सुंदर स्त्रीने देखी तेणीना रूप-लावण्यमां मुंझाइ तेमां पतंगनी पेरे झंपलाय छे, पण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने अग्रुचिमय समजीने तेथी तदन दूरज रहेवा इच्छेछे. तत्त्वदृष्टि विषय सुखने विष समानज लेखे छे.

- ५. वाह्यदृष्टि जीव शरीरने छावण्य छहरीथी पवित्र माने छे, पण तत्त्वदृष्टि तो नाना प्रकारना करमीयां विगेरेथी भरपूर देहने फक्त कागडा कूतरावडे भक्षण करवा योग्यज माने छे. तेने बाह्यदृष्टिनी पेरे क्षणिक, अश्रुचिं अने भौतिक देह प्रपंचमां मुंझाइ स्वर्कत-व्य विम्रुख थवानुं होतुं नथी. ते तो क्षण विनाशी देह द्वारा बनी शक्ते तेटछुं स्विहत साधी छेवा सावधान थइ रहे छे पण विनाशी देहनो विश्वास करतोज नथी.
- दे बाह्यदृष्टि जीव राजाना महेलमां हाथी घोडानी साहेवी जोइ चिकत थइ जाय छे, परंतु तत्त्वदृष्टिने तो तेमां हाथी घोडाना वनथी कंइ विशेष लागतुं नथी. तेने तो तेवो महेल अने तेवुं वन समानज लागे छे.
- 9. वाह्यदिष्ट जीव, भस्म लगाववाथी, केशनो लोच करवाथी अने मलमलीन देह राखवाथी कोइने महंत माने छे. पण तत्त्वदिष्टि तो तेनी अंतर समृद्धिथीज तेने तेवो लेखे छे. तत्त्वदिष्ट आत्मा

बाह्यदृष्टिनी पेरे उपरना ढोळाडिमाक मात्रथी कोइने मोटो मानी छेता नथी. तेतो तेना सद्भूत गुणोनी सारी रीते परीक्षा करीनेज तेम माने छे.

८. अत्यंत करुणारुपी अमृतने वर्षनारा तत्त्वदृष्टि पुरुषो वि-श्वना तिलमात्र अहितने माटे निंह, किंतु केवळ उपकारने माटेज नि-र्मीण थयेला छे तत्त्वदृष्टि महापुरुषोनो जन्म लोकना अभ्युद्य माटे ज याय छे. तेओ परमार्थथी अंधलोकोने, आंखो आपीने उद्धरेछे. तेओ परमार्थ पंथ वतावीने अवळे रस्ते चढेळाओने सवळे रस्ते दोरे छे. तेओज अनाथना नाथ अने अशरणना शरण छे. तेओज विश्वना खरा मित्र, बंधु के पिता छे, अने तेथीज सदा सुखना अर्थी जनोवहे अवलंववा योग्य छे. तेवा निःस्वार्थ मित्र विना वि-अनो कदापि उद्धार थवानोज नथी. ज्यारे त्यारे तेवा निष्कारणः वंद्य मळ्येज मुक्ति मळवानी छे तेथी मोक्षार्थी जनोए तेवा जगत् वंधुनीज जपमाळा गणवी योग्य छे. तेवा परोपकारी पितानी सेवा साचा दिलथी करनारा साधक पुरुषोनी सिद्धि ज्यां त्यां सुखेधी थइ शके छे, मादे तेज करवा योग्य छे.

। २० ॥ सर्व संमृद्धि—अष्टकैम् ॥

बाह्यदृष्टि प्रचारेषु, मुद्रितेषु महात्मनः ॥ अंतरेवावभासन्ते, स्फ्रेंटाः संवीरसमृद्धयः ॥ १ ॥ समाधि नैंदनं धैय, दंभोलिः समता शची ॥ ज्ञानं महा विमानं च, वासवश्रीरियं मुनेः ॥ २ ॥ विस्तारित किया ज्ञानं, चर्म छत्री निवारयंत्र ॥ मोहम्लेच्छ महावृष्टिं, चक्रवर्ती न किं सुनिः ॥ ३ ॥ नवब्रह्मसुधार्कुड, निष्ठाधिष्ठायको सुनिः॥ नागलोकेशवद् भाति, क्षमां रक्षन् प्रयत्नतः॥ ४॥ मुनिरध्यात्म कैलाशे, विवेक वृषम स्थितः ॥ शोभते विरतिज्ञप्ति, गंगागौरियुतः शिवः ॥ ५ ॥ ज्ञानदर्शनचंद्रार्क, नेत्रस्य नरकच्छिदः ॥ सुखसागर ममस्य, किं न्यूनं योगिनो हरेः ॥ ६ ॥ या सृष्टिर्वह्मणो बाह्या, बाह्यापेक्षावलंबिनी ॥ मुनेः परान पेक्षांत, ग्रुणसृष्टि स्ततो अधका ॥णा

रत्नें स्निंभिः पवित्रा या, श्रोतोभि खि जान्हवी ॥ सिद्धयोगस्य साप्यईत्, पदवी न दवीयसी ॥८॥

।। रहस्यार्थ ॥

वाह्यहिष्णानो दोव नष्ट थये छते महात्मा पुरुषने अंतरमांज सर्व समृद्धि रफुटतर भासे छे. आम वनवाथी तत्त्वदृष्टिपणुं अधि-काथिक निर्मल थतुं जाय छे निर्मल तत्त्वदृष्टिना योगे सकल समृद्धि सहंज घटमां मगटे छे. जेथी सहजानन्द युक्त थवाथी विषयासिका विगेरे विकारो स्वतः विनाश पामे छे. अने निर्मल ज्ञानादि सद्-गुणो पूर्ण रीते मगटे छे.

- २. समाधिरुपी नंदनवन, धैर्यरुपी वज्र, समतारुपी इंद्राणी, अने ज्ञानरूपी विज्ञाल विमान, एवी इंद्रनी साहेबी म्रुनिने घटमांज अगटे छे. तत्त्वदृष्टि निर्धिथ मुनिराजने इंद्रथी अधिक साहेबी अंतर-मां प्राटे छे.
- ३. विशाल ज्ञान अने क्रियाहपी चर्मरत्न अने छत्रर्त्नथी मोहरूपी म्लेच्छ राजानी महावृष्टिने निवारता मुनिराज चक्रवर्तीनी चरोवरी करे छे. निर्मल ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूपी रत्नत्रयी आ-

राधक मुनिराज कोइ रीते चक्रवर्तीथी न्यून नथीज, किंतु अधि-

४. नवनवा ज्ञानामृतना कुंडमां मय रही प्रयत्नथी क्षमातुं पालन करनारा मुनि, पृथ्वीतुं पालन करनारा नागेंद्रनी पेरे शोभे छे. अध्यात्म ज्ञानरूपी अमृतना कुंडमांज मग्न रही सहज शांतिने साक्षात् अनुभवनारा क्षमाश्रमणो आत्मगुणथी नागेंद्र करतां अधिक शोभे छे.

अध्यात्मरुपी कैलाशमां विवेकरपी द्यप उपर आरु थयेला मुनिश्चित्त (ज्ञान) अने निद्यत्त (ज्ञारित्र) युक्त होवाथी गंगा अने गौरी युक्त शिव-शंकरनी पेरे शोभे छे. तत्त्वधी जोतां अध्यात्म गिरिना उच्च शिखर उपर रहेला अने सिद्धेवेक द्यप उपर स्वार थइ सम्यग् ज्ञानिक्रयाने समताथी सेवनारा निर्धेथ अणगारो सद्- गुणोमां कोइ रीते शिव-शंकरथी उत्तरता नथी.

- ६. ज्ञान अने दर्शनरुपी चंद्र अने सूर्य जेवां निर्मल नेत्रोवाहा, नरकने छेदवावाला अने सुखसागरमां शयन करनारा मुनिराज कोइ रीते हरिथी न्युन नथी. परमार्थथी विष्णु करतां वधारे समृद्ध छें
- ७. परस्पृहारहित सहज अंतरग्रुण स्राप्टिने करनारा मुनिराज वाह्य वस्तुओनी अपेक्षावाळी बाह्य स्रिष्टिने रचनार ब्रह्मा करतां वहु चाहि-

याता छे. निःस्पृहपणे आत्म गुणोनेज मगट करनारा मुनियो उपाधि व युक्त बाह्य स्टिष्टिना करनारां ब्रह्माने सद्गुणोथी उर्छंघी जाय एमां : आश्चर्य शुं ? निरुपाधिक गुणसृष्टि करवी एज मुनितुं कर्तव्य छे.

८. जेम त्रिवेणीथी गंगा नदी पवित्र मनाय छे, तेम रत्नत्र-यीथी पवित्र गणाती श्री तीथैकरनी पद्दी पण सिद्धयोगी महापुरुष :
मुनिराजने कंइ दुर्छभ नथी. जेणे मन वचन अने कायाने वरावर :
नियममां राखी योग साधना करी छे एवा सिद्धयोगी महापुरुष है :
तीथैकर महाराजनी परम पवित्र पद्दी पामवी पण मुलभज छे.

॥२१॥ कर्मविपाक ध्यानाष्टकम् ॥

दुःखं प्राप्य न दीनः स्यात्, सुखं प्राप्य च विस्मितः। सुनिः कर्म विपाकस्य, जानन् परवशं जगत् ॥१॥ येषां भूगंग मात्रेण, भज्यन्ते पर्वता अपि ॥ तेरहो कर्म वेषम्ये, भूपैभिक्षा अपि नाप्यते ॥२॥ जाति चातुर्य हीनो अपि, कर्मण्यभ्युद्या वहे ॥ क्षणादंको अपि राजा स्या, च्छत्रच्छन्नदिगंतरः ॥३॥

विषमा कर्मणः सृष्टि, दृष्टा करमपृष्ठवत् ॥ जात्यादि भूति वैषम्या, त्का रति स्तंत्र योगिनः ॥॥ आरूढा प्रशमश्रेणि, श्रुत केविलनो अप च ॥ आम्यन्ते उनन्त संसार, महो इष्टेन कर्मणा ॥४॥ अवीक सर्वापि सामग्री, श्रांतेव परितिष्ठति ॥ विपाकः कर्मणः कार्य, पर्यंत मनुधावति ॥ ६ ॥ असाव चरमावर्ते, धर्मं हरति पश्यतः ॥ चरमावर्ति साधोस्तु, छलमन्विष्य हृष्यति ॥ ७॥ साम्यं विभक्ति यः कर्म, विपाकं हृदि चिंतयन् ॥ स एव स्याचिदानन्द, सक्ररन्द मध्रवतः ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सर्वे जगर्नेनुओ उदित वर्माऽनुसारेज सुख दुःख पामे छे च्युं समजनारा मुनि दुःखने पामीन दीन थता नथी तेम सुखने चामीने चिकत थता नथी. मुनि समजे छे के जगत् मात्र कर्म विपा-कने प्रवश छे. याता छे. निःस्पृहपणे आत्म गुणोनेज मगट करनारा मुनियो उपात्रि युक्त बाह्य सृष्टिना करनारां ब्रह्माने सद्गुणोथी उद्धंघी जाय एमां : आश्चर्य शुं ? निरुपाधिक गुणसृष्टि करवी एज मुनिनं कर्तव्य छे.

८. जेम त्रिवेणीथी गंगा नदी पवित्र मनाय छे, तेम रत्नत्र- यीथी पवित्र गणाती श्री तीथैंकरनी पद्दी पण सिद्धयोगी महापुरुष : मुनिराजने कंइ दुर्लभ नथी. जेणे मन वचन अने कायाने वरावर नियममां राखी योग साधना करी छे एवा सिद्धयोगी महापुरुपने : तीथैंकर महाराजनी परम पवित्र पद्दी पामवी पण युलभज छे.

॥२१॥ कमीवेपाक ध्यानाष्टकम् ॥

दुः लं प्राप्य न दीनः स्यात्, सुलं प्राप्य च विस्मितः। सुनिः कर्म विपाकस्य, जानन् परवशं जगत् ॥१॥ येषां भूमंग मात्रेण, भज्यन्ते पर्वता अपि ॥ तेरहो कर्म वेषम्ये, भूपैभिक्षा अपि नाप्यते ॥२॥ कमना जाति चात्र्यं हीनो अपि, कर्मण्यभ्युद्या वहे ॥ ॥ सम- क्षणादंको अपि राजा स्या, च्छत्रच्छन्नदिगंतरः ॥३॥ वार्सिः ह

विषमा कर्मणः सृष्टि, देश करमपृष्ठवत् ॥ जात्यादि भूति वैषम्या, त्का रात स्तंत्र योगिनः ॥४॥ आरूढा प्रशमश्रेणि, श्रुत केवलिनो अप च ॥ आम्यन्ते उनन्त संसार, महो दुष्टेन कर्मणा ॥४॥ अवीक् सर्वापि सामग्री, श्रांतेव परितिष्ठतिं ॥ विंपाकः कर्मणः कार्य, पर्यंत मनुधावति ॥ ६ ॥ असाव चरमावर्ते, धर्मं हरित पश्यतः ॥ चरमावर्ति साधोस्तु, छलमन्विष्य हृष्यति ॥ ७॥ साम्यं बिभित्तं यः कमे, विपाकं हृदि चिंतयन् ॥ स एव स्याचिदानन्द, सक्ररन्द मधुनतः ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

सर्वे जगनंतुओ छदित पमीऽनुसारेज सुल दुःख पामे छे जामी जारा मुनि दुःखने पामीन दीन थता नथी तेम सुलने किन पति थता नथी सम समने छे के जगत मात्र कर्म विपान

- २. जेमनी भृकुटी फरतां पर्वतोनो पंण भुको थइ जाय एवा भूपोने विषमकर्म योगे भिक्षा सरखी पण मलती नथी. दैव विषरीत छते मोटा भूपालने पण पेट भरवाने फांफां मारवां पडे छे.
- ३. उत्तमजाति अने चतुराइ रहित छतां अत्यंत अनुकूछ कर्म योगे क्षणवारमां रांक पण एक छत्र राज्य पामे छे. पवल पुन्यनी उदय थये छते भीखारी जेवो माणस पण विशाल राज्यवालो राजा यइ पडे छे.
- ४. कर्मनी रचना उंटना वरडानी जेवी वांकीज छे केमके, जा-तिक्कल, बुद्धि, बल, ऐश्वर्य प्रमुखमां प्रगट विषमता देखाय छे, सर्व कोइने ते एक सरखां होतां नथी. पूर्वकृत कर्मअनुसारे ते सारां नरसां के वधारे घटाडे होइ शके छे. कर्मनी विचित्रता प्रमाणे फल-नी विचित्रता समजनारा धुनिजनोने तेवी विषम स्थितिमां राति— श्रीति होवी घटे निहं, तेमने शाप्त खुख दु:खमां समभावज राखवे। युक्त छे.
- ५. अहो ! अति आश्चर्यनी वात छे के उपश्चमश्रेणि उपर आ-रूढ थयेला श्रुतकेवळी (चौद पूर्वधर) मुनियो पण दुष्ट कर्मना योगे पतित थइने अनंत संसार परिश्रमण करे छे. ज्यारे आवा सम-र्थ पुरुषोने पण कर्मविपाक छळे छे तो वीजा सामान्य माणसीं हुं

तो शुं कहेवुं ? दुष्ट कर्मनी प्रवल्ता पासे प्राणीओ तुं कंइ पण चा- रुतुं नथी.

- 4. आत्म साधकनी सकल सामग्री कार्यसिद्धि थयां पहेलांज थाकी गइ होय तेम अटकी पढे छे. पण कर्म-विपाक तो स्वकार्य पर्यंत कर्मकारकने अनुसर्या करे छे. ते तो तेनुं ग्रुभाग्रुभ फल तेना करनारने चखाढ्या विना विरमतोज नथी. कर्मना मबल वेगने कोइ रोकी शकतुं नथी. कर्मनो विपाक पोतानी पूर्ण सत्ता कर्मना करना-रनी उपर बजावे छे. कायर पुरुष तेनी पासे फावी शकतो नथी. समर्थ साधक तो रागद्वेष कर्मनी जड काढी सकल कर्मनुं मूलथीज निकंदन करे छे.
- ७. आ कर्म-विपाक दीर्घ संसारी जीवना धर्मने जोतां जोतां-मां हरी लेखे अने परित्त संसारी साधुनुं तो छल जोइने भारे खुशी याय छे. कर्मने कंइ शरम नथी ते वात अक्षरे अक्षर साची छे. ते परम पिवत्र धर्म महाराज साथे पण पूर्ण वैर राखे छे. धर्मराजानुं श्वरण स्नेनार साथे पोतानुं वैर शोधतोज फरे छे. अने लाग फावे तो वैर वाळवानुं चूकतो नथी. गमे तेटली आत्म उन्नतिने पामेलाने पण स्व साध्यथी चूकावी नीचे गवडावी पाडे छे. आवा दूष्ट कर्म-विपाकथी वेगला रहेवा इच्छनारे तेनी रागद्देषरुपी माठी जड खोदी काढवी जोइये. रागदेषनो समूलगो नाश करवाथी मोहनो सर्वथा

क्षय थाय छे, अने मोहनो स्य थवाथी सकल कर्म वर्गनो स्वतः क्षय थइ जाय छे.

८. कर्मना विपाकने हृदयमां चितवतो छतो जे सम विषम स्थितिमां समभावज राखे छे—तेवे वखते जे हर्ष विषाद पामतो नथी, तेज महापुरुप ज्ञानामृतनो रस चाखवा समर्थ थइ शके छे. तेवा समर्थ पुरुष सिंहज सहजानंद मग्न थइ अंते अखंड शास्त्रत मुखना भागी थइ शके छे.

॥ २२॥ भव-उद्देगाष्टकम् ॥
यस्य गंभीर मध्यस्या, ज्ञानं वज्रमयं तलं ॥
रुद्धा व्यशनशैलोघैः, पंथानो यत्र दुर्गमाः ॥ ॥
पाताल कलशा यत्र, भृतास्तृष्णा महानिलैः ॥
कषायाश्चित्त संकल्प, वेला दृद्धि वितन्वते ॥ ॥
समरोवीभिष्वलयंत, यत्र स्नेहेन्धनः सद्य ॥
यो घोर रोगशोकादि, मत्स्यकच्छप संकुलः ॥ ॥
दुर्बुद्धि मत्सरद्रोहै, विद्युद्दुर्वात गर्जितैः ॥
यत्र सां यात्रिका लोकाः, पतन्त्युत्पात संकटे ॥ ॥

ज्ञानी तस्माद् भवांभोधे, नित्योद्रिमो ऽति दारुणात् ॥
तस्य संतरणोपायं, सर्वयत्नेन कांक्षति ॥ ५ ॥
तेल पात्रधरो यद्ध, द्राधावेधोद्यतो यथा ॥
किया खनन्य चित्तःस्या, द्रवभीत स्तथा मुनिः ॥६॥
विषं विषस्य वन्हेश्च, वन्हिरेव यदौषधं ॥
तत्सत्यं भवभीताना, मुपसर्गेऽपि यत्नभीः ॥ ७ ॥
स्थैर्यं भवभयादेव, व्यवहारे मुनिर्वजेत् ॥
स्वात्माराम समाधौ तु, तद्यंतर्निमज्जित ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. कर्म विपाकने सम्यक् चितवतो मुनि भवथी उद्दिग-उदा-सी थयो छतो जेने तरी पार जवा प्रतिदिन प्रयत्न कर्या करे छे ते ज भव समुद्रमुं स्वरूप कहे छे.—जेनो मध्य भाग वहु उंडो छे. जन्म मरणादिक जन्य अनंत दुःखरूप जल राज्ञिथी अथाग भरेलो छे, जेनुं अज्ञान रूप वज्रमय तलुं छे—अज्ञान अविवेक या मिथ्या भ्रमना आधारेज संसारनी स्थिति रहेली छे; अज्ञानना जोरथीज चार गति या ८४ लक्ष जीवायोनिमां पुनः पुनः अवतरवा रुपी संसार भ्रमण थाय छे; तथा आधि, व्याभि अने उपाधि जन्य अ-नेक कष्ट रुपी पर्वतोथी जेनी बाट विषय छे. आवी विषय स्थिति— मां जीवने परिश्रमण करबुं पढे छे. छतां अझान वशवर्ती जीवो ते— थी उद्दिय (विरक्त) थता नथी.

- २. वली जेमां तृष्णारूपी तोफानी पवनथी भरेला कोधादि कषायोख्पी चार मोटा पाताल कलशा विविध विकल्परुपी वेलानी द्वादि करे छे, संसारी जीव तृष्णा तरंगमां तणाता कषायने वशप-दी चित्तमां संकल्प विकल्पोने पेदा करी परम दुःखनो भागी थाय छे, छतां अज्ञानना जोरथी विषय तृष्णाने तजी तेओ क्रिष्ट कषायोने जीती सुख समाधि साधवा अल्प पण प्रयत्न सेवी शकता नथी. एवा अज्ञानी जीवो आप मतिथी अवळा चाली दुःख दावा-नलमां स्वयंपचाय तेमां आश्चर्य शुं?.
- ३. वळी जेमां काम-अग्निरुपी वहवानल वली रह्यों छे, जे स्नेहरुपी इंधनथी सदा जाज्वल्यमान रहे छे, अने भयंकर रोग बो-कादि मच्छ कच्छपोथी जे चोतरफ व्याप्त दीसे छे. छतां अविवेकी जीवो तेमांज रित धारण करी झंपलाय छे पण मत्यक्ष दुःखराशिथी मुक्त थवा मयत्न करता नथी. आवा विवेक शून्य संसारीनी वारं वार विडंबना थया करे छे. ॥
 - ४. वर्छी दुईहि, मत्सर, अने द्रोहरूपी विजली, वंटोलीयह:

-66

अने गर्जारव वहे जेमां भ्रमण करनारा लोको विविध उत्पातना संकटमां आवी पहे छे छतां जड-यात्रा (पुद्गल-प्रेम) ने तजी जन्मयपणे तीर्थ-यात्रादिक धर्मकरणी करता नथी. आवा पुद्गला-नंदी जीवोने पराधीनपणे अनेक आपदाओ वेठवी पहे छे. एम समजीने आत्मकल्पाण साधवाने समयज्ञ पुरुष शुं करे छे ते शास्त-कार पोतेज जणावे छे. ॥

५. आवा भयंकर भवसमुद्रथी अत्यन्त उद्देग पामेलो ज्ञानी चुहुष तेने तरी पार जवानो उपाय सर्व यत्नथी आदरे छे. समयज्ञ चुहुष आवा भयंकर संसारने तरवा प्रमादने तजी रत्नत्रयीनं सम्यग् न्सेवन करे छे. ॥

६. जेवी रीते संपूर्ण तेलना पात्रने हाथमां लइ चालनार तेम ज राधावेधने साधनार सावधान थइ रहे तेवीज रीते भवभीरु मुनी स्वचरित्र क्रियामां सावधान थइ वर्ते छे जन्म मरणनां अनंतदुःखः श्री वीधेला भवभीरु मुनि धमेकरणीमां प्रमाद शील थताज नथी. मत्यक्ष पुद्गलिक सुख तजीने देहने दमवा केम जजमाल थता हशे? ध्वी शिष्यनी शंकानुं शास्त्रकार समाधान करे छे.

७. जेम विषतुं श्रीषध विष छे, अने अग्निथी दग्ध थयेलातुं ज्ञीषध अग्निज छे तेम भयभीरु मुनिने उपसर्ग संवंधी दुःखनो डर ज्ञागतोज नथी. जेम कोइने साप करड्यो होय त्यार तेने लीमडो चवरावे छे, अने अग्निथी दाझेलाने अग्निनोज शेक करे छे, तेम जन्म मरणनां दुःख्यी त्रास पामेला मुनि ते दुःखने कापवा माटे विविध ऊपसर्ग संवंधी दुःखने समभावे सहन करे छे तेथी ते भव दुःख्यी मुक्त थइ शके छे. एवी संपुर्ण खात्रीथीज विविध उपसर्ग परिषद्दा दिक संवंधी दुःखने समयज्ञ मुनि स्वाधीनपण्ज समभावथी सहन करवा तत्पर रहे छे. ॥

८. भवभीरुपणाथीज विवेकवान मुनि धर्म व्यवहारने स्थिरताथी सेवे छे. जन्म मरणना भयथीज समयज्ञ मुनि व्यवहार मार्गतुं हढ आलंबन लड़ निश्चय मार्गने साथे छे. वीतरागमणीत स्यादाद मार्गतुं सावधानपणे सेवन करवा समयज्ञ मुनि चूकता नथी तेतुं मुख्य कारण भवभयज्ञ छे. एम साध्य दृष्टिथी शुद्ध व्यवहारनुं सेवन करतां करतां ज्यारे पोताना आत्मामां सहज समाधि जागे छे. ज्यारे सास्थात् आत्म-अनुभव जागे छे त्यारे भवभय पण अंतर श्रमाइ जायछे.

॥ २३ ॥ लोकसंज्ञात्यागाष्ट्रकम् ॥

प्राप्तः षष्टगुणस्थानं, भवदुर्गाद्रिलंघनम् ॥ लोकसंज्ञारतो न स्थाद्, मुर्निलोकोत्तर स्थितिः ॥१॥ यथा चिंतामणिं दत्ते, बठरोबदरीफलैः ॥

हाहा जहाति सद्धर्मं, तथैव जनरंजनैः ॥ २ ॥ लोकसंज्ञा महानद्या, मनुश्रोतोऽनुगान के ॥ प्रतिश्रोतोऽनुगस्त्वेको, राजहंसो महामुनिः ॥ ३ ॥ लोकमालंब्य कर्तव्यं, कृतं बहुभिरेव चेत् ॥ तथा मिथ्यादृशां धर्मो, न त्याज्यः स्यात्कदा च न ॥४॥ श्रेयोऽर्थिनो हि भूयांसो, लोके लोकोत्तरे च न ॥ स्तोकाहि रत्नवणिजः, स्तोकाश्चस्वात्म साधकाः॥५॥ लोकसंज्ञाहताहंत, नीचैर्गमन दर्शनैः॥ शंसयन्ति स्व सत्यांग, मर्मघातमहाव्यथां ॥ ६ ॥ आत्मसाक्षिक सद्धर्म, सिद्धौ किं लोकयात्रया ॥ तत्र प्रसन्नचंद्रश्च, भरतश्चनिदर्शने ॥ ७ ॥ लोकसंज्ञोज्जितः साधुः, परब्रह्मसमाधिमान् ॥ सुखमास्ते गतद्रोह, ममता मत्सर ज्वरः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

^{?.} संसाररूपी विषम घाटीनो पार पमाडनार प्रमत्तगुणस्था-

नक जेने माप्त थयुं छे एवा लोकोत्तर स्थितिवाला मुनि लोकसंज्ञानो त्यागज करे छे. विषय कषायने विवश थइ जेम दुनीया दोराय छे तेम श्रेष्ट मयीदाशील मुनिराज लोकप्रवाहमां खेंचाइ जता नथी. तेतो स्वभावमां स्थित छता संयम आचरणमां सदा सावधान थइ रहे छे.

- २. जेम कोइ मूर्ल वोरडीनां फल लइ वदलामां चिंतामणी-रत आपी देखे तेम मूह माणस जनरंजन माटे श्रेष्ठ धर्मने हारी जाय छे. जेने सत्य धर्मनी कदर नथी ते वापडाथी चिंतामणि जेवो अ-मूल्य धर्म साचवी शकातो नथी. लोकरंजन माटे श्रेष्ठ लाभने चूकी जाय छे. पाछलथी तेने दुनियानी देखादेखी करवाथी वहु कष्ट स-हन करवुं पडेछे.
- ₹. लोकसंज्ञाए एक मोटी नदीनो प्रवल प्रवाहले तेमां प्रवेशेला कोण कोण तणाया नथी १ तेने तरीने पार जवाने समर्थ तो केवल सामपूरे चालनारा राजहंस समान महाम्रुनिराजज ले. जे लोकसं- ज्ञानो सर्वथा त्याग करवा अनुकूल प्रयत्न सेवे ले तेज म्रुनिराज तेनो त्याग करी शके ले. वाकीना तो लोकप्रवाहमां तणाया जाय ले. लोकप्रवाहमां तणाता पुरुषार्थहीनने तारवा कोइ समर्थ थतुं नथी. जो जनरंजन तजी केवल स्वपर कल्याणार्थे संयम मार्गनुं सारी रीते सेवन कराय तो प्रवल पुरुषार्थ योगे जरूर तेनो जय करी शकाय,

पवी आत्म वीर्यथी तेनो सर्वथा जय करी सर्वोत्तम संयमने आराधी अनंता आत्माओ अक्षय सुखने साधी शक्या छे.

- ४. जो सर्वे करे तेज करवं मानीये तो तो कदापि पण मिध्यात्वनो त्याग करी शकाशे निहं. ज्यारे सत्य मार्गनुं शोधन करी
 तेनोज स्वीकार करशुं त्यारेज आपणे सत्य—साचा छुखने पामी शकशुं. ते विना तो जेम धूमाडाना बाचका भरतां कंइ हीरो हाथमां
 आवे निहं तेम सत्य मार्गने तजी स्वच्छंदपणे चाळतां खरुं छुख मळी
 शके निहं. एवा सत्यमार्गने शोधी चाळनारा विरलाज होय छे.
- ५. श्रेयना अर्थी जीवो लौकिक के लोकोत्तर मार्गमां थोडाज दीसे छे. जेम रत्नना व्यापारी थोडा होयछे तेम आत्म—साधक पण थोडाज होयछे. जेम रत्ननी खाण दुर्लभ होयछे तेम कल्याणार्थी उत्तम जीवो पण दुर्लभज होय छे खहं आत्मार्थीपणुं आववुं जीवने दुर्लभ छेते विना सत्यमार्गने शोधी तेने दृढपणे अवलंबवो कठीनजछे.
- 4. लोकसंज्ञाथी पराभव पामेला प्राणी स्वश्रेयथी चूके छे. छतां लोक देखावो करवा जै तेओ नीचा वळीने चाले छे ते एम जणावे छे के तेमना सत्य-अंगमां मर्मघातनी महाव्यथा थयेली छे, तेथीज तेओ वांका वळीने चालता लागे छे. लोक संज्ञानो आमां आ लेख कयों लागे छे.

- ७. श्रेष्ट धर्मनी सिद्धि आत्म-साक्षिक छतां लोक देखावो क-रवानुं काम शुं १ मनथी जीव कर्म वांधे छे अने मनथीज छोढी शके छे तो पछी लोक देखावो करवाथी शुं वळे १ जेम प्रसन्नचंद्र राज रूषिने तथा भरत महाराजाने साक्षात् अनुभवायुं तेम सम्यग् वि-चारी स्वकल्याणना अर्थी जीवोए लोक देखावो करवानी बुद्धि तजी देवी.
- ८. छोकसंज्ञा रहित साधु परद्रोह, ममता, अने मत्सर दोष-थी मुक्त होवाथी सहज समाधिमां मस्त थइ रहे छे. जे महाशयः मुमुक्षुए लोकसंज्ञा तजी दीधी छे तेने उक्त दोषोतुं सेवन करवुं पड-तुंज नथी. तेथी ते शुद्ध संयमने साधतां स्वभाविक सुखमां मग्न थइ रहे छे. परउपाधि रहित होवाथी निर्प्रेथ मुनि उत्तम निष्टति थारी सहज समाधि सुखने पामी शके छे, पण परउपाधि यस्त एवं कोइपण तेवुं स्वभाविक सुख स्वप्नमां पण पामी शकतो नथी. एट-लाज माटे मोक्ष सुखना अथीं जनोए लोक संज्ञानो जरुर त्याग क-रवो जोइये, अन्यथा जप तप संयम संबंधी सकल धर्म करणी के-वळ कप्टरूप थइ पडशे. उक्त सर्व धर्म करणी जो विवेकथी आत्म कल्याण अर्थेज करवामां आवशे तो ते, सघळी छेखे पडशे. माटे केवळ गतानुगतिकता तजी वस्तु स्वरूप समजीनेज साधन कर्वुं हितकारी छे.

॥ २४ ॥ शास्त्राऽष्टकम् ॥

चर्मचक्षर्भृतः सर्वे, देवाश्वावधिचक्षुषः ॥ सर्वतश्रक्षुषः सिद्धाः, साधवः शास्त्रचक्षुषः ॥ १ ॥ पुरस्थितानिवोध्वीयः, स्तिर्यग्लोक विवर्तिनः ॥ सर्वान भावानपेक्षन्ते, ज्ञानिनः शास्त्रचक्षुषा ॥ २ ॥ शासनात् त्राणशक्तेश्च, बुधैः शास्त्रं निरुच्यते ॥ चचनं वीतरागस्य, तत्तु नान्यस्य कस्यचित् ॥३॥ शास्त्रे पुरस्कृते तस्मादु, वीतरागः पुरस्कृतः ॥ पुरस्कृते पुनस्तस्मिन्, नियमात् सर्वसिद्धयः ॥ ४ ॥ अदृष्टाऽर्थेऽनुधावंतः, शास्त्र दीपं विना जडाः॥ त्राप्तवन्तिपरं खेदं, प्रस्वलन्तः पदे पदे ॥ ५ ॥ शुद्धोंच्छाद्यपि शास्त्राज्ञा, निरपेक्षस्य नो हितं ॥ भौतहंतुर्यथा तस्य, पदस्पर्श निवारणं ॥ ६॥ अज्ञानाहि महामंत्रं, स्वाच्छंद्यज्वर लंघनं ॥ चर्मारामसुधाकुल्यां, शास्त्रमाहुर्महर्षयः ॥ ७ ॥

शास्त्रोक्ताचारकर्ता च, शास्त्रज्ञः शास्त्रदेशकः ॥ शास्त्रकट्ग, महायोगी, प्राप्तोति परमं पदम् ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. सर्वे मनुष्य तिर्थेचो चर्मचक्षुने धारण करनारा छे, एटले को तेमने चामडानी चक्षु छे. देवता मात्रने अवधिज्ञानरुपी चक्षु छे. स्पर्व सिद्ध भगवानीने प्रदेशे प्रदेशे चक्षु छे केमके तेओ अनंत ज्ञान अने दर्शन गुणधी युक्त छे. अने साधु मुनिराजोने शास्त्ररुपी दिव्य चक्षु होय छे. हवे शास्त्रचक्षु केवी उपयोगी छे ते वतावे छे.
- २. ज्ञानी पुरुषो शास्त्र चक्षुवहे उर्ध्व अधो अने तीर्छा-त्रणे कोकमां वर्तता सर्व भावोने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे. जेम निर्मष्ठ आ-रीसामां सामी वस्तुओनां प्रतिविंव सारी रीते पडी रहे छे तेम निर्मेछ ज्ञानचक्षुयी पण त्रिभ्रवनवर्ती सर्व पदार्थोतुं यथार्थ भान यड् शके छे. माटेन मुमुक्षुजनो विनय पूर्वक अहोनिश ज्ञाननुं आराधन करवा उजमाल रहे छे. हवे प्रसंगोपात ग्रंथकक्ती शास्तुनुं लक्षण कहे छे.
- ३. मोक्ष मार्गनुं शासन-यथार्थ कथन करवाथी अने त्राण-रक्षण करवा समर्थ होवाथीं शास्त्र शब्द सार्थक थाय छे. एवं शास्त्र

तो वीतरागनां वचनरूप होय छे. ते विना अन्य रागी द्वेषी के मोहाधीननां वचन सत् शास्त्ररूप होइ शकतां नथी. वीतराग प्रभुनां वचन सर्व दोष रहित अने सर्व गुण सहित होवाथी शास्त्ररूपे मान्य करवा योग्य छे. परंतु तेवा गुणविनाना अन्य वागाडंवरीनां वचन सत् शास्त्ररूप निह होवाथी ग्रुग्रुश्च वर्गने मान्य करवा योग्य नथीज. तेवां सत् शास्त्र मानवाथी माननारने शो फायदो थाय छे ते शास्त्रकार पोतेज वतावे छे.

- ४. सत्शास्त्रने आगल कयीथी वीतरागने आगल कर्या सम-जवा. अने वीतरागने आगल कर्ये छते निश्चें सर्व सिद्धियो संपने छे. वीतराग प्रभुनी पिषत्र आज्ञाओने मान्य करनारना सर्व मनो-रथ सीजे छे. एकांत हितकारी प्रभुनी पिषत्र वाणीनो अनादर करनार अज्ञानी जनोना केवा हाल थाय छे ते शास्त्रकार वतावे छे.
- 4. शास्त्रक्षी दिव्य दीपक विना अजाण्या विषयमां एकदम दोडता दुई द्विजनो मार्गमां पगले पगले स्वलना पामता परम खेदने अनुभवे छे. सत् शास्त्रक्षी दिव्य चक्षु विना जीवने सत्यमार्ग सूजतोज नथी तथी सत्य मार्गथी चूकी जीव आडोअवलो अथडाइ वहु हेरान थाय छे. स्वकपोल कल्पित मार्गे चालतां जीवने एवा जोखममां खतरतुं पडे छे. जो वीतराग वचननुं शरण लही ते सुजव वर्तन कराय तो कंइपण भीति राखवानु कारण रहे नहिं.

- द. शास्त्रआज्ञा निरपेक्ष—स्वच्छंदचारी गमे तेवी उप क्रिया करे तोपण तेथी तेतुं हित थइ शकशे निहं, पण जो वीतराग पश्चनीः पिवत्र आज्ञा ग्रुजव—शास्त्र परतंत्रपणे अलप पण अनुष्ठान सेवशे ते तेने जरुर-हितकारी थइ शकशे. केटलाक-अण्यसमज्ञथी-शास्त्रआज्ञाने-लो-पीने सद्गुरुथी जूदा पडी प्रथम तो उग्रक्रिया करवानो विचार राखे छे पण पाछलथी समयोचित सारणादिकना अभावे ते शिथिल थइ जाय छे. सारी बुद्धिथी पण स्वच्छंदपणे सद्गुरुने तजवामां आहि-तज रहेलुं छे. तेथी अल्प दोष तजतां भारे दोष सेववो पडे छे. जेम मनोहर मोरपींछी माटे बौध गुरुनी आज्ञा निह छतां तेना मक्त भू-पिपाले गुरुनां चरणस्पर्शनो दोष निवारवा वाणवडे ते पींछी लेतां ते गुरुनोज घात कर्यों तेम कमसमजवाल। आपमितथी अल्पदोष तजतां अधिक दोषनेज सेवे छे.
 - ७. माटे महामुनियो शास्त्रने अज्ञानरूपी सपैने दमवा जांगुली मंत्र समान, स्वच्छंदता रूपी ज्वरने शान्त करवा छंघन (छांघण) समान, अने सत्धमेरुपी आरामने सिंचवा अमृतनी नीक समान छेखे छे. समयज्ञ सत्पुरुषो एवा सत्शास्त्रना श्रेष्ठ लाभने क्षणवार पण चूकता नथी.
 - ८. शास्त्रोक्त आचारने सेववावाळा शास्त्र-रहस्यने सम्यग् जा-

जवावाळा, शास्त्रना मार्गनेज वताववावाळा अने शास्त्र सन्मुखंज दृष्टि राखरावाळा महायोगी-ग्रुनि निश्चे परमगदने पामे छे. माटे मोक्षार्थी जनोए एवा सत्शास्त्र—सेवी सत्पुरुषोज सदा सेववा योग्य छे.

॥ २५ ॥ परिश्रहाष्ट्रकम् ॥

न परावर्तते राशे, विकतां जातु ने।इझति ॥ चिरिग्रह ग्रहः कोऽयं, विडंबित जगत्त्रयः ॥ १ ॥ परिश्रहश्रहावेशा, हुर्भाषित रजः किरां ॥ अयन्ते विकृताः किं न, प्रलाया लिंगिना मपि ॥ था यस्यक्वा तृणवदाह्य, मान्तरं च परिश्रहं ॥ उदास्ते तत्यदांभोजं, पर्युपास्ते जगत्त्रयी ॥ ३ ॥ चितेन्तर् प्रंथ गहने, नहिनिर्प्रथता वृथा ॥ रयागाःकंचुक मात्रस्य, अजगो नहि निर्विषः ॥ ४॥ न्यके परित्रहे साधोः, श्याति सकलं रजः ॥ पालित्यागे क्षणादेव, सरसः सलिलं यथा ॥ ५॥ र्यक्षुत्रकलत्रस्य, मूर्च्छा सुक्तस्य योगिनः॥

चिन्मात्र प्रतिबद्धस्य, का पुद्गल नियंत्रणा ॥ ६ ॥ चिन्मात्रदीपको गच्छेद्, निर्वात स्थानसंनिभैः ॥ निष्परिप्रहतास्थेर्यं, धर्मोपकरणे रापे ॥ ७ ॥ मूच्छीछन्नधियां सर्वं, जगदेव परिप्रहः ॥ मूच्छियारहितानां तु, जगदेवाऽपरिप्रहः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- ?. शास्त्र उपदेश सांभछी-सहहीने परिग्रहतुं खरूप समजीने तेनो विवेक धारवी जरूरनो छे. प्रायः परिग्रहन प्राणिओने पीडार्त्र कारण छे. माटे तेनो अवस्य परिहार करनो जोइये तेन वात स्फुट वतावे छे. त्रगे जगत्ना जीवोनी विविध विडंबना करनार परिग्रह एवो तो आकरो ग्रह छे के ने मूल राशियी वदलातो नथी तेमझ वक्रता त्यनतो नथी.
- २. परिग्रहरूपी पिशाचथी पराभव पामेळा लिंगधारी साधुओ पण पोतानी (साबु) प्रकृतिने तजी जेम तेम लवता फरे छे, अनेक उन्माद करे छे, वेष विगोवणा करे छे अने अंते अधोगितमां जाय छे ए सर्व परिग्रहनोज मभाव समजवो.

- ३. धनधान्यादिक ए बाह्य परिग्रह छे अने वेदोदयथी थती। विषय-अभिलाषा, हास्य, रित, अरित, शोक, भय, दुगंछा, मिध्या त्व अने कषाय ए अभ्यंतर परिग्रह छे. ते वंने परिग्रहने तृणनी जेम तजीने जे जगतथी उदासी (न्यारा) रहे छे, तेना चरण कमळ ने जगत् मात्र पूजे छे. पण जे ते परिग्रहमां ग्रंझाइ परस्पृहा करे छे ते तो जगत मात्रना दासज छे. मूर्छी-ममतानेज ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे.
 - ४. जेम सप कांचली उतारी नांखवाथी निर्विप थइ जतो नथी तेम वाह्य परिग्रहना त्याग मात्रथी खर्ड साधुपणुं प्राप्त थतुं नथी. के- मके विवेक विना धन विगरे तजवा मात्रथी कांइ विषय अभिलापा दिक अंतर विप टली शकतुं नथी. माटे मुमुक्षुजनोए तो विपय अ- भिलापादिक अंतर विप वारवा प्रथम खपी थवुं जोइए. ज्यां सुधी विपयवासना जागृत छे, ज्यां सुधी हास्यादिक दोषोतुं मुत्कलनी जेम सेवन कराय छे, ज्यां सुधी तत्त्व दृष्टि थवा यत्न करातो नथी अने ज्यां सुधी क्रोध, मान, माया अने लोभनी सेवा कर्या कराय छे, त्यां सुधी साधुपणुं छेटुंज समजवुं. अंतर विष टलतांज साधु पणुं संपजे छे.

जेम सरोवरनी पाल तोडी नांखवाथी मांहेतुं सर्व जल क्षण मात्रमां वहार वही जाय छे, तेम परिग्रहरूपी पाल तोडवाथी—गुर्छीना त्याग करवाथी सर्व कर्ममलनो क्षणवारमां नाश थाय छे. पण गमे तेटली कष्टकरणी करतां छतां अंतरनो मेल घोवा माटे मूर्च्छानो त्याग कर्या विना शुद्ध थवातुं नथी. माटे विवेकपूर्वक वाह्य अने अंतर उभय परियहनो परिहार करवो घटे छे.

स्ती पुत्र लक्ष्मी विगेरेनी मूच्छी तजी केवल झान ध्याननोज अभ्यास करनारा साधुपुरुषोने पुद्गलनी शी परवा छे ? स्ती पुत्रने तजीने जो पुनः परियह ममताथी लोक परिचय करी ज्ञान ध्यान न कर्यु, संयममार्ग सम्यग् सेन्यो निहं, मूच्छी ममताज वधारी तो प्रथमनां स्त्री पुत्रादिकने तजीने शुं कमाणा ? उलटी उपाधि वधारवाथी विशेषे विद्यंवना पात्र थवाना. तेम न थाय एवं लक्ष राखवुंज जोइये.

७. जेम वायरा विनाना स्थळवडे दीवो स्थिर रही शके छे—

चुझातो नथी तेम धर्म—उपगरणोवडे निष्परिग्रहता साधी शकाय छे.

धर्मनी दृद्धि करनारां साधनज धर्म—उपगरण गणाय छे तेमनुं ममता
रहित सेवन करतां छतां गमे ते अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके

छे. पण जो तेमांज उलटी ममता करवामां आवे तो ते उपगरण के
चळ अधिकरण (शक्ष) रूपज गणाय. माटे ममतारहित ज्ञानदर्श्वन

के चारित्रनां उपगरणोवडे आत्म—उपगारनी सिद्धि थाय तेम यत्रथी

प्रवर्तचुं. एम विवेकथी धर्मडपगरणने सेवनारने धर्मनी दृद्धिज थाय

छे. पण जो तेमां विवेकनी खामीथी उलटी ममता स्थपाय तो तेथी

धर्मनी दृद्धिना वदले ह्यानि थवानो प्रसंग आवे छे. माटे जेम धर्मीप-

गरणतुं सार्थकपणुःथाय तेम विवेकथीज वर्तवुं युक्त छे.

८ आवां कारणसर शास्त्रकार कहे छे के मूर्छावडे जेनी बुद्धि अं-जाइ गइ छे तेने आखुं जगत परिग्रहरूपज छे, अने जे महात्माए मूच्छी (यमता) ने समूलगी मारी छे, तेने तो जगतमां जरा पण परिग्रहनो लेप लागेज नहि. आ उपरथी मूर्छा उतारवी केटली वि-पम छे ते तथा मूर्छी उतार्याथी केटलुं वधुं सुख थाय छे, तेनुं सहज भान थइ शके छे. गमे एवं दुष्कर कार्य पण पुरुपार्थथी साधी श-काय छे. एम समजी कायरता तजी परिग्रहनो प्रसंग तजवा प्रयक्ष करवो घटे छे.

॥ २६॥ अनुभवाऽएकम् ॥

संध्येव दिन रात्रिभ्यां, केवलश्रुतयोः पृथक् ॥ बुधैरनुभवो दृष्टः, केवलाऽकिरणोदयः ॥ १ ॥ व्यापारः सर्वशास्त्राणां, दिक्षदर्शन मेव हि ॥ पारं तु प्रापयत्येकोऽ, नुभवो भव वारिधेः ॥ २ ॥ अतींदियं परब्रह्म, विशुद्धाऽनुभवं विना ॥ ज्ञास्त्रयुक्ति शतेनापि, न गम्यं यद् बुधाजग्रः ॥ २ ॥ ज्ञायेरन हेत्वादेन, पदार्था यद्यतींद्रियाः ॥ कालेनैतावता प्राज्ञैः, कृतःस्यात्तेषु निश्चयः ॥ ४ ॥ केषां न कल्पना दवीं, शास्त्रक्षीरात्रगाहिनी ॥ विरला स्तद्रसास्वाद, विदोऽनुभवजिह्नया ॥ ५ ॥ पश्यत ब्रह्म निर्दंदं, निर्दंदाऽनुभवं विना ॥ क्थं लीपीमयी दृष्टि, विद्ययी वा मनोमयी ॥ ६ ॥ न सुषुप्ति रमोहला, नाऽपि च स्वाप जागरी ॥ कल्पनाशिल्पविश्रान्ति, स्तुर्येवानुभवो दशा ॥ ७ ॥ अधिगत्याखिलं शब्द, ब्रह्म शास्त्रदशा मुनिः ॥ स्वसंवेद्यं परंब्रह्मा, नुभवेनाधिगच्छति ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जेम दिवस अने रात्रिथी संध्या जूदी छे, तेम अनुभव ज्ञान पण केवल ज्ञान अने श्रुत ज्ञानथी जूदुं छे. जेम सूर्य—उदय परेलां अरुणोदय थाय छे तेम केवल ज्ञान पगटयां पहेलां अनुभव ज्ञाननो उदय थाय छे. पछी अवश्य अल्पकालमां केवल ज्ञान प्रगट थाय छे. जेम अरुणोदय रात्रिना अंते थाय छे, तेम अनुभव ज्ञान

पण श्रुत ज्ञानना अंते पगटे छे. एटले के श्रुत ज्ञान कारण छे अने अनुभव ज्ञान कार्यरूप छे. सम्यग् ज्ञान विना कदापि कोइने पण अनुभव पगटे नहि. माटे कार्याधी जेम कारणतुं सेवन करे तेम अनुभवना अर्थीए श्रुत ज्ञानतु अवश्य सेवन करतुं.

- २. शास्तो तो फक्त दिग्दर्शन करावे छे. वाकी संसारनो पार तो अनुभवज करावे छे. जेम कीइ मार्गमां मळेखं माणस मार्ग भ्रष्टने खरा मार्गनी दिशा बतावी दे छे तेम शास्त्र पण मोक्षनो मार्ग आम छे एम बतावी दे छे. पण जेम साथे छीधेलो मूमियो ठेठ मार्ग पहों चाडी आपे छे. तेम सहज अनुभव ज्ञान पण ठेठ पार पहोंचाडे छे.
- ३. विशुद्ध अनुभव विना श्राह्मनी सेंकडो युक्तिवडे पण परमात्मवन्त्र समजी शकाय तेवुं नथी. जेनु स्वरूपज शब्द, रूप, रस,
 गंय, अने स्पर्शरहित होवाथी अतींद्रिय छे, तेनु प्रतिपादन अक्षर—
 वर्ण वाक्य मात्रथी शी रीते थइ शके एक तो अरूपी आत्मद्रव्य अने
 व्येखं दष्टांत दइने ते सुलेथी समजी शकाय एवं कंइ उपमान नजरे
 ज पडतुं नथी, तेथी अंते एवाज निश्चय उपर आवी शकाय के परमात्मतन्त्र जेवुं कंइ वीजुं छेज निह, ते तत्त्व पामेला सर्व समानज
 छे, तथा तेवो सत्य अनुभव थयेज ते तत्त्व समजी शकाय एम छे,
 पण अनुभव झान प्रगट्या विना परमात्मतत्त्व यथार्थ समजी शकाय
 तेम नथी. माटे तेवो अनुभव प्रगटाववा श्रुत झान विषये पूरतो प्रव्यव करवो यक्त छे.

- ४. जो हेतुवादे करी आवा अतींद्रिय पदार्थीनो निश्रय थाती होत तो तो ते क्यारनो करवा पंडितो चूकत निर्ह. पण तेम करबं अशक्य जाणीने तेओ करी शक्या नथी. तर्क, अनुमान के युक्ति विगेरेथी तेओए आत्मादि अरुपि—द्रव्यनो निश्रय कर्यो होत ते संवंधी कोइ जातनो विवाद रहेतज निर्ह. पण तेम थइ शकेज निर्ह. तेम करवाने अनुभव ज्ञाननी खास जरुर छे. स्वानुभवी पण परमात्मतत्त्वने यथार्थ जाणतां छतां पोतेज जाणीने विरमे छे. ते पदार्थ अतींद्रिय होवाथी स्वानुभव विना श्रोताना प्राह्ममां आवतो नथी—आवी शकतो नथी. स्वानुभव थये ते सेहेज यथार्थपणे समजीं शकाय छे.
- 4. केटलाक पंडितोनी कल्पना-कडली, शास्त्र-क्षीरमां फरी, छतां तेओ अनुभव-जीभ विना तेनो स्वाद मेलवी शक्या नहिंग अ-नुभव ज्ञान मगट थयेज सर्वज्ञ मणीत शास्त्रनो यथार्थ स्वाद चास्ती शकाय छे.
- ६. अद्वितीय अनुभव जाग्या विना लिपीवाली, वाणीवाली, अने मनवाली रुपि दृष्टिथी अरूपि—अद्वितीय अनुपम परमात्म तत्त्व ने केम जोइ शकाय? ज्यारे अपूर्व साम्य सेवनथी अनुपम अनुभव जागशे त्यारेज अतींद्रिय तत्त्वनुं यथार्थ भान थशे ते विना केवल अक्षरमय लीपी, वाणी, के मनवाली रूपी दृष्टिथी अरूपी एवा शुद्ध

आत्म तत्त्वतुं यथार्थ भान थइ शकवातुं निहं. कार्यार्थीए कार्याऽतु-कूल कारणोतुं सेवन करवुंज जोइए. ते विना इष्ट कार्य सिद्धिज नथी. माटे शुद्ध आत्म तत्त्वना कामी पुरुषे निद्दंद्द (सर्व क्षेश रहित शुद्ध) अनुभव माटे प्रयत्न करवो.

- ७. सुषुप्ति, शयन, जागर अने उजागर ए चार दशाओं शाः स्नमां वर्णवी छे. तेमां प्रवल मोहना उदयवाली प्रथम दशा तथा विविध कल्पनावाली (सिवकल्पक) शयन अने जागर दशा आ अ- तुभव ज्ञानमां घटी शके निहं. तेमां तो समस्त विकल्पनी विश्रान्ति शान्तिरूप निर्विकल्प चोथी उजागर दशाज होवी घटे छे.
- ८. शास्त्र दृष्टीथी समस्त शब्द स्वरूपने सम्यग् पामीने मुनि, अनुभवगम्य शुद्ध आत्मतत्त्वने अनुभव ज्ञानवडे पामे छे. एट्ले के सम्यग् श्रुत ज्ञानना अभ्यासथी अनुभव ज्ञान पामीने मुनि शुद्ध स्वरूपने जाणे—जोवे छे.

॥ २७ ॥ योगाष्टकम् ॥

मोक्षेण योजनाद्योगः, सर्वोऽप्याचारइष्यते ॥ विशिष्य स्थानवर्णार्था, लंबनैकाय्य गोचरः ॥ १॥

कर्मयोग द्रयं तत्र, ज्ञान योगः त्रयं विदुः ॥ विरतेश्वेष नियमाद्, बीज मात्रं परेश्वेपि ॥ २ ॥ कृपा निर्वेद संवेग, प्रशमोत्पत्तिकारिणः ॥ भेदा प्रत्येकमञ्जेच्छा, प्रवृत्तिस्थिर सिद्धयः ॥ ३ ॥ इच्छा तद्रत्कथाप्रीतिः, प्रवृत्तिः पालनंपरः ॥ स्थैर्यं बाधकभी हानिः, सिद्धिरन्यार्थं साधनं ॥४॥ अर्थालंबनयोश्चेत्य, वंदनादौ विभावनं ॥ श्रेयसे योगिनः स्थान, वर्णयोर्यत्नएव च ॥ ५ ॥ आलंबनमिह ज्ञेयं, द्विविधं रूप्य रूपि च ॥ अरूपिगुणसायुज्यं, योगोऽनालंबनं परः ॥ ६ ॥ शितिभक्ति वचोऽसंगैः, स्थानाद्यपि चतुर्विधं ॥ तस्माद्योग योगाप्ति, मींक्षयोगः क्रमाद् भवेत् ॥७॥ स्थानाद्ययोगिनस्तीर्थो, च्छेदाद्यालंबनाद्पि ॥ सूत्रदाने महादोष, इत्याचार्याः प्रचक्षते ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- जीवने मोक्ष सुख साथे जोडी आपे एवो सर्व सदाचार 'योग' ना नामथी ओलखाय छे. तेना पांच प्रकार आ प्रमाणे छे.
 स्थान (आसन—सुद्रा विशेष) २ वर्ण (अक्षर विशेष) ३ अर्थ अलंबन (प्रतिमादि) अने ५ एकाग्रता (मननी निश्चलता.)
- २. तेमां पूर्वला वे कर्मयोग कहेवाय छे. अने पाछली त्रण, ज्ञान योग कहेवाय छे. आ योग विरित्त (निष्टत्तिशील) वंतमां नि-श्रयथी होय छे. अने वीज मात्र तो अनेरामां पण होय छे. ए व-चनमां एवा ध्विन थाय छे के योगना अर्थीए निष्टत्तिशील थर्बु जोइये.
- ३. आ पांचे योगमांना प्रत्येकना कृपा, निर्वेद, संवेग अने शीतलताने करनारा १ इच्छा, २ प्रदृत्ति, ३ स्थिरता अने सिद्धि एवा च्यार च्यार भेदो कहेला छे. ते दरेकनुं लक्षण आ प्रमाणे.
- ४. तेवा योग—सेवीनी कथामां भीति थाय ते इच्छा योग उक्त योगनुं पालन करवामां तत्परता तजाय ते प्रवृत्ति योग. ते योगनुं सेवन करतां अतिचारादिक दूषण लागे निहं, लागवानी बीक पण रहे निहं, ते स्थिरता योग अने स्वयं योगनी सिद्धि पूर्वक अन्य (भ-व्य) जीवोने योगनी प्राप्ति कराववी तेनुं नाम सिद्धि योग समजवो.

- ५. पूर्वोक्त योगोमांना अर्थ अने आलंबन योगतुं चैत्यवंदन, तथा गुरुवंदनादिक करतां स्मरण राखवुं. तेमां तथा स्थान अने वर्णयोगमां योगी पुरुषे स्वश्रेय माटेज प्रयत्न करवानो छे. उक्त योगा सेवनमां जेम अधिक प्रयत्न तेम एकाग्रता द्वारा अधिक श्रेय स-धाय छे.
- ६. आलंबन वे प्रकारे छे. १ रूपी अने २ अरूपी तेमां जिन मुद्रादिकरूपी आलंबन छे. अने अरूपी एवा सिद्ध भगवानना अनंत ज्ञानादिक गुणोमांज एकाग्र उपयोग देवो ते अरूपी आलंबन छे. तेतुं वीजुं नाम निरालंबन योग छे. अनालंबन योग उत्कृष्ट योग छे.
- ७. वळी पिति, भिक्त, वचन अने असंगमेदे करीने स्थानादियोग चार चार प्रकारे छे. पूर्वोक्त इच्छादिक च्यार प्रकारवाला
 स्थानादिक पांचे योगोना २० भेद थाय छे. अने तेमना प्रत्येके
 प्रीति विगरे च्यार च्यार भेद गणतां योगना ८० भेद थाय. तेथकी
 'अयोग' योगनी अनुक्रमे प्राप्ति थतांज मोक्ष योगनी—अक्षय अव्यावाध स्रुखनी संप्राप्ति थाय छे. एम समजी मोक्षार्थी सज्जनोए
 उपर वतावेला योगनां अंगोनुं आदर्थी सेवन करवुं घटे छे. केटलांक अनुष्टान पीतिपूर्वक अने केटलांक भक्ति पूर्वक ज करवानां
 कह्यां छे. जेमके देववंदन, गुरुवंदन, विगरे भक्तिपूर्वक करवानां छे.
 अने प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग (काउस्सर्ग), प्रच्छाण विगरे प्री-

तिपूर्वक करवानां द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव ने लक्षमां राखी सर्वज्ञ कथित सिद्धान्तने अनुसरीने विधिपूर्वक धर्मवर्तन करवुं ते वचन अनुष्ठान छे. पूर्वोक्त प्रीति—भक्ति युक्त वचन अनुष्ठानेन आचरतां अनुक्रमे अभ्यास बलधी मन, वचन, कायानी, एकाग्रता सधातां असंग क्रियानो अपूर्व लाभ मले छे. असंग क्रिया साधनारने मोक्ष सुलभ छे. माटे मोक्षार्थीजनोए मन, वचन, अने कायाना योगोने परभावमां जतां वारी स्वभाव सन्मुख करवा जोइये. पुद्गलिक सु-खनी इच्छा तजीने सहज आत्म सुखमांज प्रीति करवी जोइये. क-रवामां आवती धर्मक्रियाना पण पवित्र हेतु—फल संबंधी सारी समज मेळवी तेमां योग्य आदर करवो जोइये. जेम बने तेम अविधि दोष तजी विधि रसिक थवुं जोइये.

८. उक्त स्थानादिक योगनो अनादर करनारा अने स्वच्छंदे चालनाराने सूत्र—दान देवामां मोटो दोष छे, एवो समर्थ आचार्योनो अभिमाय छे. शासननो उच्छेक थइ जशे एवी बीकथी पण पश्चनी एवित्र आज्ञाथी विमुखने शास्त्र शिखववामां मोटामां मोटुं पाप छे.

॥ २८ ॥ नियागाष्टकम् ॥

यःकर्महुतवान् दीप्ते, ब्रह्माशौ ध्यान धाय्यया ॥ स निश्चितेनयागेन, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ १॥

पापध्वंसिनिनिष्कामे, ज्ञानयज्ञे रतो भव ॥ सावग्रैः कर्मयज्ञैः किं, भूतिकामनयाविलैः ॥ २ ॥ वेदोक्तस्वान्मनः शुध्या, कर्मयज्ञोऽपि योगिनः ॥ ब्रह्मयज्ञ इतीच्छंतः, रयेनयागं त्यजन्ति किम् ॥ शा ब्रह्मयज्ञं परं कर्म, गृहस्थस्याधिकारिणः ॥ चूजादिवीतरागस्य ज्ञानमेव तु योगिनः ॥ ४ ॥ भिन्नोहेशेन विहितं, कर्म कर्मक्षयाक्षमं ॥ क्लूप्तिन्नाधिकारं च, पुत्रेष्ट्यादिवदिष्यतां ॥ ५ ॥ ब्रह्मार्पणमपि ब्रह्म यज्ञांतर्भावसाधनं ॥ ब्रह्मात्री कर्मणो युक्तं, स्वकृतत्व समये दुते ॥ ६ ॥ त्रह्मण्यर्पित सर्वस्वो, ब्रह्महग् ब्रह्मसावनः ॥ ब्रह्मणा जुह्बदब्रह्म, ब्रह्मणि ब्रह्मगुप्तिमान् ॥ ७ ॥ ब्रह्माऽध्ययननिष्यावान्, परब्रह्म समाहितः ॥ ब्रह्मणो लिप्यनेनांघै, नियागप्रतिप्रतिमान् ॥ ८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- निश्चित याग (पूजा) ते नियाग कहेवाय छे. तेतुं स्वरूप समजावे छे. जे शुद्ध ब्रह्माग्निमां ध्यान—साधनथी विविध कर्मने होमे छे ते निश्चित यागवडे नियागी कहेवाय छे.
- र. पापना क्षय करनार एवा निष्काम (पुद्गलिक कामना रहित) ज्ञान-यज्ञमां रित करवी युक्त छे. वैभवनी इच्छाथी मलीन एवा पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवानुं शुं प्रयोजन छे ? जेमने पापनो क्षय करी निष्पाप थवा इच्छा होय तेमने तो पापयुक्त कर्मयज्ञोनो अनादर करी केवलज्ञान-यज्ञनो ज आदर करवो घटे छे. क्षेमके लोही खरंड शुं वल्ल लोहीथी साफ थइ शके निहं, पण शुद्ध जल विगेरेथी ज साफ थइ शके छे. तेम पापथी खरडाए छं मन पापयुक्त कर्म-यज्ञथी शुद्ध थइ शके निहं, पण पापरहित एवा ज्ञान यज्ञथी तो ते अवश्य शुद्ध थइ शके. माटे ज निष्काम एवा ज्ञान-यज्ञमां रक्त थवुं, ज्ञानी-विन्वेकीने उचित छे. पण पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवां तो उचित नथीज.
- ३. कर्म-यज्ञ पण करवानुं वेदमां कथन होवाथी मननी शु-द्धिथी ते पण ज्ञान-यज्ञनुं फल आपे छे एवं इच्छनारा ब्रह्म-ज्ञानीओ इयेन यागने केम तजे छे ? जो वीजां कर्म-यज्ञथी मननी शुद्धि संभवे छे तो आथी केम निहं ! एम समजी विवेकी जनोए पाप-युक्त सर्व कर्म-यज्ञोनो परिहार करवो घटे छे.

- ४. श्री वीतरागनी पूजा, सट्गुरुने दान, दीन दुखीनो उद्धार विगेरे गृहस्थ-अधिकारीने योग्य श्रेष्ठ आचरण ब्रह्मयोगन्नं कारण होवाथी ज्ञान योग कही शकाय छे, परंतु∶ ज्ञानी-मुनिने तो फक्त ज्ञान-योगज सेववा योग्य छे. गृहस्थ योग्य आचार साधुने सेव-वानो नथी. केमके वन्नेनो अधिकार भिन्न छे.
 - 4. जूदा हेतुथी करेली क्रिया क्षिष्ट-कर्मोनो क्षय करी शके नीहें. एतो पाप-कर्मने क्षय करवानी पवित्र वृद्धिशे ज उचित क्रिया विवेकथी करवामां आवे तो ज तेथी पाप-कर्मनो क्षय थाय छे. पण तेथी विरुद्ध आचरणथी तो कदापि थइ शके नीहें. स्व स्व अधिकार मुजव करेली करणी सुखदायी निवडे छे. साधु साधु योग्य अने गृहस्थ गृहस्थ योग्य करणी करतां सुखी थाय छे. पण साधु पाते गृहस्थ योग्य अने गृहस्थ पोते साधु योग्य करणी करवा जतां उलटा अनर्थ पामे छे. पुत्रेष्टिनीपरे (पुत्र माटे करवामां आवतो यह विशेव '' पुत्रेष्टि" कहेवाय छे, तेनीपरे) अधिकार विरुद्ध अने निर्दोष शास्त्र विरुद्ध आचरणथी अनर्थन संभवे छे एम सम्जीने सुनिपुण जनो पाप गुक्त यहांथी सदंतर दूर रहे छे. अह प्रितंत्र एवी धर्म करणी पण पवित्र उद्देशथी करे छे.
 - ६. ब्रह्मांपीण करंबुं एनेज जो ज्ञान यज्ञतुं खरेखरं सायन कहेवामां आवे तो तथी पण स्वकृतत्व—अहंकार एटले पोते कर्याप-

व्यानो गर्व गाली नांखी ज्ञानाभिमां कर्मनोज होम करवो घटे छे. अथम अहंकारनो होम करतां कर्मनोज होम करवो ठरेछे. माटेज पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवानो कदाग्रह तजी गृहस्थोए तेमज साधुओए उपरनी युक्ति युक्त वात विवेक्षथी विचारी स्व स्वज्ञित सदाचार सेववो ज योग्य छे.

७-८. आत्म समर्पण करनार, तत्त्वदर्शी, तत्त्वसाधक, तत्त्व-ज्ञानवडे अज्ञाननी उच्छेर करनार. शुद्ध ब्रह्मचर्य सेवनार, तत्त्वअ-स्यासगां रक्तः रहेनार, अने स्वरूपमांज रमण करनार एवा निश्चित याग संरम् साधुओं कदापि पापकमिथी लेपाता नथी, निलेप रहेवा इच्छनार साधुए अनंतरोक्त लक्षण धारवां जोइये. वाकी तो अहंता— यमता, अज्ञान, अविवेकाचरण, अने स्वार्थ अंवतादिक सर्व अपल-सणो तो केवळ दुरीतिनां ज कारक ले, माटे ए सर्वथी अलगा थर स्वित साध्युं घटे ले.

॥ २९॥ पूजाष्टकम्॥

दर्यां मसा कृत स्नानः, संतोष शुभवस्नमृत् ॥ विवेक तिलक्षमाजी, भावना पावनाशयः ॥ १ ॥ भक्ति श्रद्धान घुमृणो, निमश्रपाटी रज दवैः ॥ नव ब्रह्मांगतो देवं, शुद्धमात्मानमर्चय ॥ २ ॥ क्षमा प्रष्यस्रजं धर्म, युग्म क्षीमद्रयं तथा ॥ ध्यानाभरणसारं च, तदंगे विनिवेशय ॥ ३॥ मदस्थान भिदा त्यागै, र्लिखांग्रे चाष्ट मंगलीं ॥ ज्ञानामौ शुभ संकल्प, काकतुंडं च धूपय ॥ ४ ॥ श्राग् धर्म लवणोत्तारं, धर्मसंन्यास वन्हिना ॥ कूर्वन् पूरय सामर्थ्व, राजनी राजना विधि ॥ ५ ॥ स्फरन् मंगलदीपं च, स्थापयानुभवं पुरः ॥ योग नृत्य परस्तौर्य, त्रिक संयमवान् भव ॥ ६॥ उछसन्मनसः सत्य, घंटां वादयत स्तव ॥ भाव पूजा रतस्येत्थं, करकोडे महोदयः ॥ ७ ॥ द्रव्य पूजोचिता भेदो, पासना गृहमेधिनां ॥ भाव पूजा तु साधूना, मभेदो पासनात्मिका ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- १. पूज्य पूजा वे प्रकारनी छे. एक द्रव्यपूजा तथा भावपूजा. शुद्ध लक्षथी करवामां आवती द्रव्यपूजा भावपूजानुं कारण होवाथी अधिकारी जीवनें अधिक उपकारी थाय छे. गृहस्थ द्रव्यपूजानो मुख्यपणे अधिकारी छे, अने मुनि भावपूजानाज अधिकारी छे. परंतु गृहस्थ पण शुद्ध लक्षथी द्रव्यपूजावडे भाव साधी शके छे. तथी ते अंते भावपूजानो पण अधिकारी थइ शके छे. माटे स्व स्वजित कर्तव्य करवामां प्रमाद निहं करतां शुद्ध लक्षपूर्वक आत्मापण करतां रहेवं जोइये. प्रथम भावपूजानुं स्वरूप प्रतिपादन करेछे, एवा शुद्ध लक्षयी जो गृहस्थ द्रव्यपूजा करवामां आदरवंत थाय तो ते पण अंते ते भावने पामे. मुनिनुं तो ए खास कर्तव्यज छे. माटे तेने उद्देशीने मुख्यपणे अत्र कथन छे, पण एवं लक्ष गृहस्थने पण कर्तव्य छे.
- 2. हे भाइ! निर्मलद्या-जलशी स्नान करी संतोषरूपी शुभ वस्नने धारी, विनेकरूप तिलक करी, भावनावडे पवित्र आशय वनी, भक्तिरूप केशर घोली, श्रद्धारूप चंदन भेलवी, तेमज अन्य उत्तम गुणरूप कस्तूरी प्रमुख संयोजी नवविध ब्रह्मचर्यरूप नवअंगे शुद्ध आत्मारूप देवाधिदेवनी तुं भावशी पूजा कर,
- ३. क्षमारूपी सुगंधी पुष्पमाला तथा द्विविध धर्मरूप वस्त्र युगल तथा थुभ ध्यानरूप श्रेष्ठ आभरण हे महानुभाव! ते प्रभूना

अंगे तुं स्थाप. अर्थात् एवा सद्गुणोने तुं धारण कर. ए सद्गुणो तारे अवन्य धारवा जेवाज छे.

- ४. वली आठे मदना त्याग करवारूप अष्टमंगलने तुं आगल स्थापन कर. तथा ज्ञान-अग्निमां शुभ अध्यवसायरूप कृष्णागुरुनो धूप कर.
- 4. शुद्ध धर्मस्तपी अग्निवहे अशुद्ध धर्मस्तपी छण उतारीने देदीप्यमान वीर्योद्धासस्तपी आरती उतारो. एटले सरागवृत्ति तजी वीतराग वृत्ति धारो-धारवाना खपी थाओ. सरागदशा ए अशुद्ध धर्म छे. अने वीतराग दशा ए शुद्ध आत्मधर्म छे. माटे अशुद्ध आ-त्मदशाने तजी शुद्ध आत्मदशाना कामी थाओ.
- ६. शुद्ध आत्म-अनुभवरूप देदीप्यमान मंगलदीवाने तमे प्रसुनी आगळ स्थापो, अने योगासेवन रूप नृत्य करतां सुसंयम रूप विविध वार्जित्र वजावोः अर्थात् सद्बुद्धिथी तत्त्व परीक्षा करी शुद्ध अनुभव जगावो, अने तेम करी प्रमाद वेरीने दूर तजी सावधान थइ शुद्ध संयमनुं सेवन करवा प्रदृत्त थाओ. रक्षत्रयीनुं पालन करोः
- ७. आ प्रमाणे सत्य-घंटावादने करनारा उद्घसित मनवाळा, भाव पूजामां मग्न थयेला महापुरुषनो महोद्य सुलभ छे. तात्पर्यके श्री वीतराग बचनानुसारे वर्ती सत्य प्ररूपणा करनारा प्रसन्न चि-चवाला साच्विक पुरुषोज परमात्म प्रभुनी पवित्र आज्ञाना अखंड

पालनक्त भावपूजाना पूर्ण अधिकारी होवाथी परमपदने सुखेथी पामी शके छे, पण स्वच्छंदचारी, कछिति मनवाला, कायर माणसो कंइ पामी शकता नथी, एम समजी परमपदना अथीए खच्छंद— चारिता, कछुता, तथा कायरता, परिहरी, शास्त्र परतंत्रता, कषा-यरिहतता, तथा अप्रमत्तता अवश्य आरदवा खपी थर्बु.

८. आ भाव पूजामां प्रस्तावें कहेली द्रव्य पूजा ग्रुख्यपणे व्यवहारदृष्टि एवा ग्रहस्थोनेज आदरवा योग्यछे. अने भावपूजा तो ग्रुख्यपणे निश्चयदृष्टि एवा ग्रुनिराजोनेज उपासवा योग्यछे. कल्याण पण तेमज संभवे छे. इत्यलम्.।।

॥ ३०॥ ध्यानाष्टकम् ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं, त्रयं यस्यैकतां गतं ॥
मुनेरनन्य चित्तस्य, तस्यदुःखं न विद्यते ॥ १ ॥
ध्यातान्तरात्मा ध्येयस्तु, परमात्मा प्रकीर्तितः ॥
ध्यानं चैकाध्य संवित्तिः समापत्ति स्तदेकता ॥ २ ॥
मणाविव प्रतिच्छाया, समापत्तिः परात्मनः ॥
क्षीणवृत्तौ भवेद्ध्याना, दंतरात्मनि निर्मले ॥ ३ ॥

आपत्तिश्च ततः प्रण्य, तीर्थकृत कर्मबंधतः ॥ तदुभावा भिमुखत्वेन, संपत्तिश्च क्रमाद् भवेत् ॥ ४ ॥ इत्थं ध्यानफलाद्यक्तं, विंशति स्थानकाद्यपि ॥ कष्टमात्रं त्वभव्याना, मिष नो दुर्लमं भवे ॥ जितेंद्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः ॥ **स्रुलासनस्य नासात्र, न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥ ६ ॥**ः रुद्धबाह्य मनोवृत्ते, धीरणा धारयारयात ॥ प्रसन्नस्या प्रमत्तस्य, चिदानंद सुधालिहः ॥ ७ ॥ साम्राज्यम प्रतिद्धंद्व, मंतरेव वितन्वतः ॥ ध्यानिनो नोपमा लोके, सदेव मनुजेऽपिहि ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थं ॥

१. ध्याता, ध्येय, अने ध्यान ए त्रणे जेने एकताने पाग्यां छे एवा एकाग्र चित्तवाळा मुनिने कंइ पण दुःख नथी. जेटळी ए वावतमां खामी छे तेटळंज दुःख शेष छे एम समजवुं अने जेम ते खामी जलदी दुर थइ जाय तेम सावधानपणे तेनो खप करवो. पालनरूप भावपूजाना पूर्ण अधिकारी होवाथी परमपदने सुखेथी पामी शके छे, पण स्वच्छंदचारी, कल्लापित मनवाला, कायर माणसों कंइ पामी शकता नथी, एम समजी परमपदना अथीए खच्छंद— चारिता, कल्लापता, तथा कायरता, परिहरी, शास्त्र परतंत्रता, कषा-यरहितता, तथा अप्रमत्तता अवश्य आरदवा खपी थवुं.

८. आ भाव पूजामां प्रस्तावें कहेली द्रव्य पूजा ग्रुख्यपणे व्यवहारदृष्टि एवा गृहस्थोनेज आदरवा योग्यछे. अने भावपूजा तो ग्रुख्यपणे निश्चयदृष्टि एवा मुनिराजोनेज उपासवा योग्यछे. कल्याण पण तेमज संभवे छे. इत्यलम्.।।

॥ ३० ॥ ध्यानाष्टकम् ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं, त्रयं यस्यैकतां गतं ॥
मुनेरनन्य चित्तस्य, तस्यदुःखं न विद्यते ॥ १ ॥
ध्यातान्तरात्मा ध्येयस्तु, परमात्मा प्रकीर्तितः ॥
ध्यानं चैकाय्य संवित्तिः समापत्ति स्तदेकता ॥ २ ॥
मणाविव प्रतिच्छाया, समापत्तिः परात्मनः ॥
क्षीणवृत्तौ भवेदुध्याना, दंतरात्मनि निर्मले ॥ ३ ॥

आपत्तिश्च ततः युण्य, तीर्थकृत कर्मबंधतः ॥ तदुभावा भिमुखत्वेन, संपत्तिश्च कमादु भवेत् ॥ ४ ॥ इत्यं ध्यानफलाद्यक्तं, विंशति स्थानकाद्यपि ॥ कप्टमात्रं त्वभव्याना, मिष नो दुर्लंमं भवे ॥ जितेंद्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः॥ सुलासनस्य नासाग्र, न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥ ६ ॥ रुद्धवाह्य मनोवृत्ते, धीरणा धारयाख्यात ॥ प्रसन्नस्या प्रमत्तस्य, चिदानंद सुधालिहः ॥ ७ ॥ साम्राज्यम प्रतिद्धंद्ध, मंतरेव वितन्वतः ॥ श्यानिनो नोपमा लोके, सदेव मनुजेऽपिहि ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थं॥

१. ध्याता, ध्येय, अने ध्यान ए त्रणे जेने एकताने पाग्यां छे एवा एकाग्र चित्तवाळा मुनिने कंइ पण दुःख नथी. जेटळी ए वावतमां खामी छे तेटळुंज दुःख शेष छे एम समजवुं अने जेम ते खामी जलदी दुर थइ जाय तेम सावधानपणे तेनो खप करवो. २. बाह्यदृष्टिपणुं तजीने अंतर दृष्टिथी आत्म-निरीक्षण करनारों अंतर-आत्मा ध्याता-ध्यान करवानों अधिकारी छे. समस्त
दोषने दृद्धी निर्मेल स्फटिक जेवुं गुद्ध स्वरूप जेमने संपूर्ण प्रगःखुं
छे. एवा परमात्मा, ध्येय-ध्यानगोचर करवा योग्यछे. आवा ध्येयमां
एकतातुं संलग्न भान ते ध्यान अने ए त्रणेनी अभेदता थवी ते
एकता अथवा लय कहेवाय छे. एवी एकतामां हुं ध्याता छुं अने
अभुजी ध्येय छे एवं भान पण होतुं नथी, एटले हुं प्रभुना ध्यानमां
लीन थयों छुं एवो पण भेदभाव रहेतो नथी. तेमां तो केवल एकाकार दृक्तिक बनी रहे छे.

३. जेम चंद्रकान्त विगेरे मिणमां सामी वस्तु में प्रतिविंव पडी रहे छे तेम (ध्यानवडे) अंतर मलनो क्षय थये छते निर्मळ एवा अंतर—आत्मामां परमात्मानी प्रतिछाया (प्रतिविंव) पिंड रहे छे. सर्व अंतरमलनो सर्वया क्षय थये छते ते अंतर आत्माल परमात्मारूप रहे छे. एण ते पहेलां पण ध्यानना दृढ अभ्यासी मुमुक्षुने एकता प्रमात्म खरूप झलकी रहे छे.

> ं पथम तो आत्म-अनुभव सारी रीति थायछे प्य छे. त्यारबाद पवित्र एवा तीर्थ-भवनी सन्मुखताथी तीर्थकर पमार्थ भगटपार्ग स-

मजाय छे के पवित्र ध्यानना प्रभावथी आत्मानुभव जागे छे, अने तेथी श्री तीर्थिकर नाम कर्म जेवो प्रकृष्ट पुण्य प्रकृति पण वंधाय छे.

५. आ प्रमाणे तीर्थिकर पद्वीनी प्राप्तिं रूप ध्यानतुं फल जेथी प्रभवे छे. एवो वीस स्थानकादिक तप पण करवो युक्त छे. कष्ट मात्र रूप तप तो अभव्य जीवोने पण सुलभ छे. केवल संसारिक सुखने चाहनारा अभव्यने अयोग्यताथी परमार्थ-फलनी प्राप्ति यइ शकती नथी.

६-७-८. हवे ध्यान करताने योग्य जीवनी केवी दशा होय छे, ते कंइ विशेषताथी जणावे छे. जितेन्द्रिय, धीर, प्रशान्त, स्थि-रतावंत, सुखासन, अने नाशिकाना अग्रभागे स्थापी छे दृष्टि जेणे, तथा ध्येय वस्तुमां चित्तने स्थिर वांधी राखवा रूप धारणाना अखंड प्रवाहथी जेणे वाह्य मनोद्यत्तिनो शीघ्र रोध कर्यो छे, प्रसन्न, अप्रमत्त, अने ज्ञानानंदरूपी अमृतनो आस्वाद करनारा, तेमज अनुपम एवा आत्म-साम्राज्यनो अंतरमांज अनुभव करनारा, एवा ध्यानी-योगी-नी वरोवरी करे एवो कोइ पण देवलोकमां के मनुष्य लोकमां नथी. स्वतासन एटले ध्यानमां विध्न न पढे एवा अनुकूल पद्यासनादिने सेवनार जेन भवव सनानो क्षय थ्यो छे, एटले विषय ह-प्रणा जेनी इमी गइ छे, अने निःस्पृहताथी जगतथी न्यारो रही ज्ञान्तरणे सहज-स्वभावमां ज रही जे प्रमाद रहित परमात्म स्वरू- पने एकाग्रपणे ध्यावे छे, एवा आत्म ग्रुण-विश्रामी सुप्रसन्न धीर महापुरुषनी जगतमां कोण होड करी शके ? आवा महापुरुषोने ज अनेक प्रकारनी उत्तम लिब्ध, सिद्धि विगेरे संभवे छे, अने आवा ध्याता पुरुषोज अंते ध्येय रूप थाय छे.

॥ ३१ ॥ तपाष्टकम् ॥

ज्ञानमेव बुधाः प्राहुः, कर्मणां तापना त्तपः ॥ तदाभ्यंतर मेवेष्टं, बाह्यं तदुपर्वृहकम् ॥ १ ॥ आनुस्रोतिसकी वृत्ति, बीलानां सुखशीलता ॥ प्रातिस्रोतिसकी वृत्ति, र्ज्ञानिनां परमं तपः ॥ २॥ धनार्थिनां यथा नास्ति, शीततापादि दुस्सहं ॥ तथा भव विरक्तानां, तत्त्वज्ञानार्थिनामपि ॥ ३ ॥ सदुपाया प्रवृत्ताना, मुपेय मधुरत्वतः ॥ ज्ञानिनां नित्य मानंद, वृद्धिरेव तपिःवनां ॥ ४ ॥ इत्थं च दुःखरूपत्वात्, तपो व्यर्थ मितीच्छतां ॥ बौद्धानां निहता बुद्धि, बौद्धानंदा परीक्षयात् ॥ ५॥ यत्रब्रह्म जिनाची च, कषायाणां तथा हितः ॥
सानुबंधा जिनाज्ञा च, तत्तपः शुद्धमिष्यते ॥ ६ ॥
तदेव हि तपः कार्यं, दुर्ध्यानं यत्र नो भवेत् ॥
येन योगा न हीयन्ते, क्षीयन्ते नेंद्रियाणि वा ॥१॥
मूलोत्तर गुणश्रेणि, प्राज्य साम्राज्यसिद्धये ॥
बाह्यमाभ्यंतरं चेत्थं, तपः कुर्याद् महामुनिः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. कर्मने शिथिल करी नांखनार होवाथी ज्ञानज तप छे.
एम तत्त्वज्ञानीओ कहे छे ते तप वे प्रकारनुं छे, एकतो वाह्य अने
वीजुं अभ्यंतर तेमां कर्म मात्रनो क्षय करवा समर्थ एवो अभ्यंतर
तपज श्रेष्ठ छे. प्रायिश्वत, विनय, वैयादृत्य, स्वाध्याय, ध्यान अने
कायोत्सर्ग ए अभ्यंतर तपना भेद छे. आवा अभ्यंतर तपनी पृष्टि
माटेज वाह्य तप करवानो कह्यो छे. अनञ्चन (उपवास विगेरे) उन्नोदर्य (अल्प आहार करवो ते) द्यति संक्षेप (भोगोपभोगना संवंधमां विशेष नियम पालवा ते) रसत्याग, कायक्रेश, अने संलीनता
(आसन जय करवा नियम विशेष) ए वाह्य तपना छ प्रकार छे.

विवेकी आत्मा वाह्यतप साधनवडे अभ्यंतर तपनी अधिक अधिक पोषणा करतोज रहेछे.

- २. इंद्रियो अने मन दोरी जाय तेम दोरावारूप वालजीवोनी अनुस्रोत-हत्ति तो सर्वने सुखसाध्य छे, पण तेमनो जय करी सा-मापूरे चालवा जेवी ज्ञानी पुरुपोनी प्रतिस्रोत हत्तिज परमतपरूप छे. प्रथमनी हत्ति शीखवी पडती नथी अने वीजी तो खास शीखवी पडे छे.
- ३. जेम धनना अधींने शीत ताप विगेरे सहवा कठोन पडता नथी, तेम तत्त्वज्ञानना अथीं एवा भववासथी विम्रुख जीवोने पण ते सहेवा सुलभ थइ पडे छे.
- ४. कल्याण साधवाना श्रेष्ठ उपायमां लागेला तत्त्वज्ञानी—तप-स्वीने तेमां मिठाश उपजवाथी निरंतर आनंदनी रुद्धिज थती जाय छे. नित्य चढते परिणामे सदुपायद्वारा ते आत्म कल्याणने साधे छे. विवेकीने तप सुख रूपज छे.
- 4. आथी सिद्ध थाय छे के " दुःखरुप होवाथी तप करवो व्यर्थ छे एम इच्छनार वौध लोकोनी मित मारी गई छे " केमके तपथी तो दुःखने बदले सहज आनंदनी दृद्धि थाय छे. माटे एवा कायर अने स्वच्छंदी सुख-शीलजनोनां वचन सांभली महा मंगल

भय तपमां मंद-आदर न थवुं. यथाशक्ति उभय तपमां अवश्य उ-द्यम करवो.

- ६. जे तप करतां, ब्रह्मचर्यंनी गुप्ति (शील संरक्षण), वीत-रागनी भक्ति, तथा कषायनी शान्ति सुखे सधाय छे, तेमज जिने-श्वर प्रभुनी पवित्र आज्ञानुं प्रतिपालन थाय छे, तेनुं जरापण उल्लंघन थतुं नथी तेवो तप शुद्ध—दोष रहित होवाथी अवश्य आचरवा योग्या ज छे, तपस्या करवावालाए उत्तम फल मेळववा उपरनी वावत ल-क्षमां राखवा योग्य छे. केमके ते प्रमाण वर्ततांज तपस्या लेखे थाय छे. एटले आत्मा निर्मल थतो जाय छे, अने अंते सर्व कर्ममलनो क्षय थतां अक्षय सुख संप्राप्त थाय छे.
- ७. तप करतां लगारे दुर्ध्यान थाय निहं, स्वाध्याय ध्यानादिक संयम—योगमां खामी आवे निहं, तेम धर्मकार्यमां सहायभुत थनारी इंद्रियो समूलगी क्षीण थइ जाय निहं, एम खास उपयोग रा-खीने स्वशक्ति गोपव्या विना समताभाव लावीने श्री तीर्थकर देवे पण सेवेला तपनो दरेक मोक्षार्थीए अवस्य आदर करवो.
- ८. अहिंसादिक पांच महात्रत अने आहारशुद्धि विगेरे मूल तथा उत्तर संयम गुणोनी श्रेणिरुप श्रेष्ठ साम्राज्यनी सिद्धि करवा माटे महामुनि पण उभय प्रकारना तपतुं यथार्थ सेवन करवामां प्र-माद करे निहं केमके संयमवडे जोके नवां कर्म रोकाय छे, पण सं-

चित कर्मनो क्षय तो तप वडेज थाय छे. अने त्यारेज अक्षय पदनी प्राप्ति थइ शके छे. माटे संयमनी खरी सफलता पण तपथीज सिद्धं थाय छे.

॥ ३२ ॥ सर्वनयाश्रय-अष्टकम् ॥

धावन्तोऽपि नयाः सर्वे, स्युर्भावे कृतविश्रमाः॥ चारित्रग्रण लीनः स्या, दिति सर्वनयाश्रितः ॥ १ ॥ पृथङ् नयामिथः पक्ष, प्रतिपक्ष कदर्थिताः ॥ समवृत्ति सुलास्वादी, ज्ञानी सर्वनयाश्रितः ॥ २ ॥ नाप्रमाणं प्रमाणं वा, सर्वमप्य विशेषितं ॥ विशेषितं प्रमाणं स्या, दिति सर्वनयज्ञता ॥ ३ ॥ लोके सर्वनयज्ञानां, ताटस्थ्यं वाप्यनुग्रहः ॥ स्यात्पृथङ् नयमूढानां, स्मयार्तिर्वातिवग्रहः ॥ ४ ॥ श्रेयः सर्वनयज्ञानां, विपुलं धर्मवादतः ॥ शुष्क वादादिवादा च, परेषां तु विपर्ययः ॥ ५ ॥ प्रकाशितं जनानां ये, मतं सर्व नयाश्रितम् ॥

चित्ते परिणतं चेदं, येषां तेभ्यो नमोनमः ॥ ६ ॥
विश्वये व्यवहारे च, त्यक्त्वा ज्ञाने च कर्मणि ॥
एक पक्षिक विश्वेषा, मारूढाः शुद्ध भूमिकां ॥ ७ ॥
अमूढ लक्ष्याः सर्वत्र, पक्षपात विवर्जिताः ॥
जयंति परमानंद, मयाः सर्वनयाश्रयाः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनंत धर्म (गुण) वाली वस्तुना वीजा वया धर्मनी सामा न्यतः उपेला करी मुख्यपणे अमुक एकज धर्मने स्थापनार नय कहे वाय छे. तेना नय अनंता होवा घटे छे तोपण अत्र स्थूलताथी सात नयनुं कथन कर्धे छे, तेमां शेष सर्वेनो समावेश थइ जाय छे. नैगम, संपह, व्यवहार, रुजुसूत्र, शब्द, समिष्ठह, अने एवंभूत. ए साते नयनां नाम छे. तेनुं विशेष व्याख्यान वीजा ग्रंथोथी जाणवा योन्य छे. अत्र तो फक्त समुचय नयोनुं स्वरूप कहेळुं छे. सर्वे नयो खतावला छतां स्ववस्तु—धर्ममां विश्राप करनारा छे. अर्थात् वस्तु—धर्मने तजी वहार जता नथी, एम समजी चारित्र गुणमां लीन साधु सर्व नयनो समाश्रय करे छे, सर्वे नयनो अभिप्राय साथे मळतांज संपूर्ण वस्तु—अनंत धर्मात्मक समजाय छे, वीजी रीते वोलिये तो

सर्व नयनो एकी साथे आश्रय करनारज चारित्र गुणमां छीन होइ

- २. जूदा जूदा नयो परस्पर पक्ष अने प्रतिषक्षयी कदिर्थत थाय छे. अर्थात् एकेक जूदा जूदा नयनेज अवछंवनारनी मांहोमांहे स्वपक्ष अने परपक्षथी कदर्थना थया करे छे. पण सर्व नयने सरखी रीते आदरनार तो समता सुखनोज आस्वाद करे छे. तात्पर्य एवो नीकले छे के समतारस (शान्तरस) ना अर्थी जने तो सर्व नयनो सरखी रीतेज आश्रय करवो योग्य छे. अर्थात् निरपेक्षपणे कोइ नयमुं खंडन मंडन करवा प्रवर्त्तवुं निहं.
- ३. सामान्य कथन मात्र, अप्रमाण पण नथी तेम प्रमाण पण नथी. तेनी तेज वात स्यात् पद्थी विशेषित थाय तो ते प्रमाणभूत थाय छे. जेमके वस्तु नित्य छे, ए कथन सामान्य होवाथी अप्रमाण नथी तेम प्रमाण पण नथी. पण "स्यात् नित्यं" ए कथन विशेषित होवाथी प्रमाणरूप छे. तेमज 'स्यात् अनित्यं" एवं कथन पण प्रमाणभूतज छे. केमके दरेक वस्तु द्रव्यपणे नित्य छे पण पर्यायपणे तो अनित्य छे, जेम आत्मा द्रव्यपणे नित्य छे पण मनुष्यादि पर्यायपणे अनित्य छे, ऐम प्रत्येक वस्तु कथंचित् नित्यानित्य होई शके छे. ए प्रमाणेज सर्व नयनुं रहस्य समजवानुं छे. तात्पर्य के एकलो— निर्पेक्ष नय प्रमाण पण नथी तेम अप्रमाण पण नथी. पण वीजा

नयनी अपेक्षावाळो-सापेक्ष नयज ममाणमूत थाय छे माटेज सर्वे नयाश्रितता श्रेष्ठ छे.

- ४. सर्व न यज्ञ पोते सापेक्षदृष्टि होवाथी तटस्थ रहि शके छे, अथवा अन्यजनोतुं समाधान करी शकवाथी उपकारी नीवडे छे. पण पृथक्-एकांत-निरपेक्ष नयमां आग्रहवंतने तो अहंकार जन्य पीडा अथवा भारे छेशज पेदा थाय छे, केमके तेवा कराग्रहीने स्व-पक्षतुं मंडन करवानो अने एरपक्षतु खंडन करवानो सहज गर्व आवे छे अने तेम करवा जतां सहेजे छेश वधे छे. एखं छिष्ट परिणाम सापेक्षदृष्टि एवा सर्व नयज्ञने कदापि आववानो संभव नथी. स्व परिहत पण एमज साधी शकाय छे. माटे सर्व नयज्ञताज श्रेष्ट छे.
- ५. सर्व नयज्ञनेज धर्मचर्चाथी घणो लाम लड् शके छे. वाकी बीजाने तो शुष्कवाद के विवादथी लाभने वदले उल्टो तोटो (गेर-लाभ) ज थाय छे.
- ६. जेमणे सर्व नयाश्रित धर्म प्रकाश्यो छे अने ते जेमने अंत-रमां परिणम्यो छे तेमने अमारो वारंवार प्रणाय छे. सत्य-सारेक्ष कथन अने कारक ए उभयनी वलिहारी छे.
- ७-८. निश्चय अने व्यवहार तेमज ज्ञान अने क्रियामां एका-न्त पक्ष तजीने जेमणे स्याद्वादनो स्वीकार कर्यों छे एवा तत्त्वदृष्टि, पक्षपात वर्जित, अने सर्व नयनो आश्रय करनारा परमानंदी

पुरुषोज जगतमां जयवंता वर्ते छे. एकान्त पक्षज सर्व कदाग्रह अने दुःखतु मूळ छे. एम समजीनेज सर्व नयाश्रित सत्पुरुषोज एकान्त नहिं खेंचतां सर्वत्र ज्ञान अने क्रिया, उत्सर्ग अने अपवाद, तथा निश्रय अने न्यवहारनो स्वीकार करे छे. इतिज्ञम्.

॥ उपसंहार ॥

चुर्णो समः स्थिरोऽमोहो, ज्ञानी शान्तो जितेन्द्रियः ॥ त्यागी कियापरस्तृप्तो, निर्लेपो निस्पृहो सुनिः ॥ १॥ विद्याविवेक संपन्नो, मध्यस्थो भयवर्जितः ॥ अनात्म शंसकस्तत्त्व, दृष्टिः सर्वसमृद्धिमान् ॥ २ ॥ ध्याता कमीविपाकाना, मुद्रियो भववारिधेः ॥ लोक संज्ञाविनिर्मुक्तः, शास्त्रहग् निष्परित्रहः ॥ ३॥ शुद्धातुभववान् योगी, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ भावाचीध्यान तपसां, भूमिः सर्व नयाश्रयः ॥ ४॥ स्पष्टं निष्टंकितंतत्त्व, मष्टकेः प्रतिपत्तिमान् ॥ मुनिर्महोदयज्ञान, सारं समधिगच्छति ॥ ५॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१-५. अक्षय अने अन्यावाध ए के मोक्षम् स मेळवी आपनारं श्रेष्ठ ज्ञानसंपन्न कोण थइ शके छे ? तेनु समायान करे छे. जे सर्वथा उपाधि मुक्त थइ सहज गुणसंपत्तिनेज सार छेली तेनेज यहे छे. तेमांज मप्त थाय छे, तेमांज स्थिरता करे छे, इतर कोइ वस्तुमां ग्रुंझातो नथी, वीजा संकरप-विकर्ग करतोज नथी पण शान्त चि-त्तयी स्वभावमांज रमे छे, मन अने इंद्रियो उपर जेणे जय मेळव्यो छे पण तेमने पराधीन थइ रहेतो नथी, वाह्यभावनो जेणे त्याग कर्यी छे, अने अंतरभाव जेने जागृत थयो छे, तेनीज पुष्टि माटे जे प्रयत करे छे पण बीजी नकामी वावतमां राचतो नथी, सहज संतोषी छे, एंटले जेणे विषयादि तृष्णाने छेदी छे, जे जगतथी न्यारोज रहे छे, तेमां लेपातो नयी, जे कोइनी आशा राखतो नथी, केवळ निःस्यृह थइ रहे छे, जे सारासारने सारी रीते समजे छे अने समजीने असा-रना परिहार पूर्वक सार मार्गने संग्रहे छे, सुख दुःखमां समदर्शी छे, तेमां हर्ष विषाद करतोज नथी, जे भय तजी निर्भयपणे स्व-इष्ट साधे छे, जे कशापि स्व-श्वाघा के परनिन्दा करतोज नथी जे तत्त्व-दृष्टि होवाथी वस्तुने वस्तुगतेज जाणे-जोवे छे, जे घटमांज सकल समृद्धि रहेळी माने छे, जे कर्मतुं स्वरूप यथार्थ समजीने शुभाशुभ क्रमेना उदयमां साम्य (समता) धारे छे, पण मनमां वे संबंधा

संकल्प–विकल्प करतो नथी, वळी जे आ भव–सम्रद्रथी उद्विग्न छतो तेनो देगे पार पामवा माटे नित्य प्रमादरहित प्रयत्न कर्या करे छे, जेणे लोक संज्ञा तजी छे एटले मिध्या लोभ लालचमां नहिं तणा-तां जे सामा पूरे छे, जे शास्त्र दृष्टिथी सर्वभावने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे, जेणे मूर्छीने तो मारी नाखी छे तेथी कोइपण पदार्थमां मतिवंध करतो नथी, जेने शुद्ध अनुभव जाग्यो तेथी जेणे चोथी उदगारदशा धारी छे, अने केवळ ज्ञान पण जेने अति निकटज रहेळुं छे, जेथी अवंध्य (अचूक) मोक्षफळ मळे एवो समर्थ योग जेणे साध्यो छे, वीतराग आज्ञानु अखंड आराधन करवारुप निश्चित याग जेणे से-च्या छे, भावपूजामां जे तल्लीन थयो छे, श्रेष्ठ ध्यान जेणे साध्युं छे, तेमज समता पूर्वक विविध तपने सेवी जेणे कठीन कमेनो पण क्षय कर्यों छे, अने सर्व नयमां जेणे समानता बुद्धि स्थापी छे, तेथी त-टस्थपणे रही सर्वत्र स्वपरहित सुखे साधी शके छे, एवा परमार्थ-द्शीं निष्पक्षपाती मुनिराज अनंतरोक्त ३२ अप्टक वडे स्पष्ट एवा निश्चित तत्त्वने पामीने, परम पद प्रापक 'ज्ञानसार ने सम्यग् आराधी शके छे.

निर्विकारं निराबाधं, ज्ञानसारमुपेखपां ॥ विनिवृत्त पराशानां, मोक्षोऽत्रैव महात्मनां ॥ ६ ॥

चित्तमादींकृतं ज्ञान,-सार सार स्वतोमिभिः॥ नाप्नोति तीत्रमोहाग्नि, श्लोष शोष कदर्थना॥ ७॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- ६. सर्वथा विकारवर्जित (निर्दोष) अने विरोधरहित एवा आ ज्ञानसारने प्राप्त थयेळा अने परआशाथी मुक्त थयेळा महात्मा-ओने अहिंग मोस छे. अर्थात् एवा योगीश्वरो जीवनमुक्त छे.
- ७. ज्ञानसारना उत्तम रहस्य वहे जेतुं मन द्रवित (ज्ञान्त-ज्ञीतल) थयुं छे, तेने तीव्र मोह अग्निथी दाझवानो भय नथी. अथीत् आतुं सार-रहस्य जेने परिणम्युं छे तेने मोह पराभव करी ज्ञकन्तो नथी.

अचिन्त्या कापि साधूनां, ज्ञानसार गरिष्ठता ॥ गतिर्ययोध्वेमेव स्या, दघः पातः कदापि न ॥ ८ ॥ क्केशक्षयो हि संंडूक, चूर्णतुल्यः कियाकृतः ॥ दग्धतच्चूर्णसदृशो, ज्ञानसार कृतः पुनः ॥ ९ ॥ ज्ञानपूतां परेऽप्याहुः, कियां हेमघटोपमां ॥ युक्तं तदिष तद्भावं, न यद्भग्नापि सोज्झति ॥१०॥ कियाशून्यं च यज्ज्ञानं, ज्ञानशून्या च याक्रिया॥ अनयोरंतरं ज्ञेयं, भानु खद्योत योरिव ॥ ११॥ चारित्रं विरतिः पूर्णा, ज्ञानस्योत्कर्ष एव हि॥ ज्ञानाद्वेतनये दृष्टि, देयातद्योग सिद्धये॥ १२॥

॥ रहस्यार्थ ॥

- ८. ज्ञानसारथी गुरु (वजनवाळा) थया छतां साधुजनो छंची गतिज पामे छे. कदापि नीची गतिमां जताज नथी ए आश्चर्य छे. केमके भारे वजनवाळी वस्तु तो स्वभाविक रीते नीचेज जवी जोइये.
- ९. ज्ञान विना शुष्क क्रियाथी मात्र नामनोज क्रेश क्षय थाया छे अने ज्ञानसारनी सहायथी तो समूळगो क्रेशनो क्षय थइ शके छे.
- १०. ज्ञानयुक्त क्रिया सोनाना घंडा जेवी छे, एम वेद-व्या-सादिक कहे छे ते व्याजवी छे केमके कदाच ते भांगे तोपण सोतुं जाय निहं. फक्त घाट घडामण जाय. तेम कदाच कर्मवशात् ज्ञानी क्रियाथी पतित थइ जाय तोपण तत् क्रिया संबंधी तेनी भावना नष्ट थइ जती नथी.

- ११. क्रिया शून्य ज्ञानमां अने ज्ञान शून्य क्रियामां जेटलो सूर्य अने खजूवामां आंतरो छे तेटलोज आंतरो छे. अर्थाद् क्रिया-रिहत पण भावना—ज्ञान सूर्य समान छे अने ज्ञान शून्य शुष्क क्रिया मात्र खजूवा जेवी छे.
 - १२. विभावथी संपूर्ण विरमवा रूप यथार्थ चारित्र पण वि-शिष्ट ज्ञानतुंज फळ छे एम समजीने एवा उत्कृष्ट चारित्रनी सिद्धि माटे ज्ञानथी अभिन्न एवा संयममार्गमां दृष्टि देवी. जेथी संयमनी पुष्टि थाय एवो ज्ञान-योगनो अभ्यास प्रमाद रहित करवो, संपूर्ण, अभ्यासथी सहज चारित्र सिद्ध थशे.

सिद्धिं सिद्धपुरे पुरंदरपुरस्पर्धावहे लब्धवां ॥ श्चिद्दीपोऽयमुदारसारमहसा दीपोत्सवे पर्वणि ॥ एतद् भावन भाव पावन मन श्चेचचमत्कारिणां ॥ तैस्तैदींसिशतैः सुनिश्चयमतैर्नित्योऽस्तु दीपोत्सवः॥१३॥

१३. स्वर्गपुरी जेवा सिद्धपुरमां दीवाली पर्व समये उदार अने सार ज्योतियुक्त आ ज्ञानसार रूप भावदीपक मगट थयो, अर्थात् आ ग्रंथ सिद्धपुर नगरमां दीवालीना दिवसे पूर्ण कर्यो. आ अंथमां कहेला सुंदर भावथी भावित पवित्र मनवाळा भत्र्य जीवोने आवा सेंकडो गमे भाव दीपको वडे नित्य दिवाळी थाओ! एवी आ ग्रंथकारनी अंतर आशिष छे.

केषांचिद्धिषयज्वरात्तरमहो चित्तं परेषां विषा-वेगोदक कुतके मुक्ति मथान्येषां कुवैराग्यतः ॥ लग्नालक मबोध कूप पतितं चास्ते परेषामि ॥ स्तोकानां द्वविकारभार रहितं तद् ज्ञानसाराश्रितं॥१४॥

१४. केटलाकतुं चित्त विषय-पीडायी विह्नल होय छे. के-टलाकतुं चित्त कुतिसत (मंद) वैराग्यथी हडकवावालुं होवाथी जे ते विषयमां चोतरफ दोडतुं होय छे. केटलाकतुं वळी विषय-विषना आवेगयी थता कुतर्कोमां यस थयेछुं होय छे, तेमज केटलाकतुं तो अज्ञानरूप अंबकूपमां डूबेछुं होय छे. फक्त थोडाकतुं चित्त ज्ञानसा-रमां लागेछुं होबाधी विकार विनातुं होय छे. तात्पर्य के ज्ञानसारनी माप्ति महा भाग्येज थइ शक्ते छे. जेमतुं चित्त विकार रहित होवाथी अधिकारी (योग्य) वन्युं छे तेमनेज आ ज्ञानसार संमाप्त थइ शक्ते छे. वाकीना योग्यता विनाना ने तेनी प्राप्ति थइ शक्ती नथी. जातोद्रेक विवेक तोरण ततो धावल्यमातन्वते ॥ हृद्गेहे समयोचितः प्रसरित स्फीतश्च गीतध्वनिः ॥ पूर्णानंद्धनस्य किं सहजया तद्भाग्य भंग्याभवन् ॥ नैतद् ग्रंथ मिषात् करग्रहमहश्चित्रं चरित्रश्रियः ॥१५॥

१५. चारित्र लक्ष्मीनो यतो विवाह महोत्सव आ ग्रंथना मिपथी पूर्णानं ही आत्माना सहज तेनी भाग्य रचना वडे दृद्धि पामेला
विवेकक्षी तोरणनी श्रेणिवाळा मनमंदिरमां घवलताने विसारे छे
अने क्कीत (विशाळ) मंगळ गीतनो घ्विन पण मांहे प्रसरी रह्यो छे.
तात्पर्य के चारित्र लक्ष्मीनो पूर्णानंद्घन (आत्मा) नी साथे विवाह थाय छे त्यारे तेनुं मन उच प्रकारना विवेकवाळुं अने उज्वल निर्मल वने छे तेमज महा मंगलमय स्वाध्याय घ्याननो घोष वन्यो
रहे छे. लौकिकमां पण विवाह समये घरमां उंचा तोरण वांघवामां
आवे छे. घरने घोळवामां आवे छे अने विविध वाजित्र तथा मंगळ गीत-गावामां आवे छे. तेम अहिं चारित्र लक्ष्मीने वरनार पूर्णानंदीने सर्व परमार्थथी थयुं छे. सम्यग् ज्ञान अने चारित्रना मेळापथी सर्वत्र आवी घटना थाय छे अने थशे. एमां शुं आश्चर्य छे ? अपितु कंइज निहें. भावस्तोमपिवत्रगोमयरसे र्लिसेव मृः सर्वतः ॥ संसिक्ता समतोदकैरथपिथ न्यस्ता विवेक स्रजः ॥ अध्यात्मामृतपूर्णकामकलशश्चकेऽत्र शास्त्रे पुरः ॥ पूर्णान्दघने पुरं प्रविशति स्वीयंकृतं मंगलम् ॥ १६॥

१६. पूर्णानंदघन पोते अप्रमाद नगरमां प्रवेश कर्ये छते, पवित्र भावनाओ रूपी गोमयथी भूमि लिंपेली छे, चोतरफ समतारूपी
जलनो छंटकाव करेलो छे, मार्गमां विवेकरूपी पुष्पनी मालाओ
पाथरेली छे, अने अध्यात्मरूपी अमृतथी भरेलो मंगल कलश आ
शास्त्रद्वाराज आगल करेलो छे. एम विविध उपचारथी निज भाव
मंगल कर्युं छे.

गच्छे श्री विजयादिदेव सुगुरोः स्वच्छे गुणानां गणैः ॥ श्रीढिं प्रोढिम धाम्नि जीतविजयप्राज्ञाःपरामैयरुः ॥ तत्सातीर्थ्यभृतां नयादि विजय प्राज्ञोत्तमानां शिशोः ॥ श्रीमन् न्याय विशारदस्य कृतिनामेपाकृतिः प्रीतये ॥१७॥ १७. ज्ञानदर्शन अने चारित्रादिक गुणोना समूहथी निर्मल अने उन्नतिना स्थानरूप श्री विजयदेव स्रिरना गच्छमां प्राज्ञ श्री जितविजयजी श्रेष्ठ उन्नतिने पाम्या तेमना गुरुभाई श्री नयविजयजी पंडितमां श्रेष्ठ थया. तेमना शिष्य श्रीमन् न्याय विज्ञारद विरुद्ना धरनार श्री यज्ञोविजयजीनी आ रचना पंडित लोकोनी प्रीतिने अर्थे थाओ ! विविध गुण विज्ञाल एवा तपगच्छमां थयेला पंडित श्री नयविजयजीना ज्ञिष्य श्री यज्ञोविजयजीए आ ज्ञानसार सूत्रनी रचना कीधी छे. आ गंथमां ज्ञान्त रसनीज प्रधानता होवाथी ते रसज्ञ पंडितोने अभीष्टज थने. केमके सर्व रसमां प्रधानरस ज्ञान्तरसज छे अने ते रसनी सिद्धिथीज आत्मा निरुपाधिक सुख पामी ज्ञके छे. आ अपूर्व अने अतिशय गंभीर ग्रंथनु स्वरूप निरूपण करतां जे कंइ

पुण्यार्जन थयुं होय तेथी अमने तथा श्रोता जनोने पवित्र ज्ञान्त-रसनी पुष्टि थाओं ! तथास्तु.! शुर्यस्यात् सर्व भृतानाम्.

॥ श्री कल्याण मस्तु. ॥

वैराग्यसारने उपदेश रहस्य.

- (१) जे पराइ निंदा विकथा करवामां मुंगो छे, परह्नीतुं मुख जोवामां आंधळो छे, अने परायुं धन हरवामां पांगळो छे, तेवो महापुरुपज जगमां जयवंतो वर्ते छे, परनिंदा, परह्नीमां रित अने परद्रव्य हरण महा निंद्य छे.
- (२) जे आक्रोश भरेलां वचनोथी दूमातो नथी अने खुशामतथी खुशी थइ जतो नथी, जे दुर्गन्धथी दुगंछा करतो नथी, अने खुशवो-थी राजी थइ जतो नथी, जे खीना रूपमां रित धारतो नथी, अने मृतश्वानथी सूग लावतो नथी, एवो समभावी उदासी योगीश्वरज सर्वत्र गुख समाधिमां रहे छे.
- (३) जेने शत्रु अने मित्र वंने समान छे, जेने भोगनी लालसा तूटी गइ छे, अने तपश्चर्यामां जेने खेद थतो नथी, जेने पथ्यर अने सुवर्ण (रत्नादिक) वंने समान छे, एवा शुद्ध हृदयवाळा समभावी योगीजनोज खरा योगधारी छे.
- (४) कुरंगनी जेवा चंचळ नेत्रवाळी अने काळा नागनी जेवा कुटिल केशने धारवावाळी कामिनीना राग पाशमां जे नथी पडी जाता तेज खरा शूरवीर छे.
 - (५) स्त्रीना मध्यमां कृशता, भुकुटीमां वक्रता; केशमां कुटीलता,

होटमां रक्तता, गतिमां मंदता, स्तनभागमां कटीनता, अने चक्षुमां चंचळता स्पष्ट जोइने फक्त कामाकुल मंदमति जनोज वैराग्यने भजता नथी। सुविवेकी जनोने तो ते वैराग्यनी दृद्धि माटेज थायछे.

- (६) स्त्रीयो कपट करी गद्गद् वाणीथी वोले छे, तेने कामां-धजनो प्रेमचक्ति तरीके लेखे छे. विवेकी हंसो तेथी ठगाइ जता नथी.
- (७) ज्यां सुधी आहारनी छोछपता तजी नथी, सिद्धांतना अर्थरुपी महोपिधनुं सम्यग् सेवन कर्यु नथी, अने अध्यात्म अमृतनुं विधिवत् पान कर्यु नथी, त्यां सुधी विषय ज्वरनुं जोर जोइए तेबुं घटतुं नथी. विषय तापनी शांति माटे रसछोल्यना त्याग पूर्वकः सिद्धांतसार चूर्ण तथा तत्त्वामृतनुं सम्यग् सेवन करनुंज जोइए.
 - (८) भरयौदन वयमां कामने जय करनार धन्य धन्य छे.
- (९) जेणे जाणी जोइने कामिनीने तजी छे, अने संयमश्रीने सेवी छे, एवा ख्रविवेकी साधुने कुपित थयेलो पण काम कुंइ करी शकतो नथी.
- (१०) मियाने देखतांज कामज्वरनी परवशताथी संयम-सत्त्व श्लीण थइ जाय छे, पण नरकगितना विपाक सांभरतांज तत्त्वविचार भगट थवाथी गमे तेवी व्हाछी वछमा पण विख जेवी भासे छे.
 - (११) जेमणे यौवन वयमां पवित्र धर्म धुराने धारी महाव्रतो-

अंगीकार कयी छै; तेना भाग्यशाळी अव्योधीन आ पृथ्वी पानन धंयेली छे.

- (१२) कामदेवना वंधुभूत वसंतने पामीने सकळ वनराजी पण विविध वर्णवाळी मांजरना मिषयी रोमांचित थयेळी ळागे छे, तेमां सिद्धांतना सारनुं सतत सेवन करवाथी, जेमनुं मन विषय तापथी छगारे तप्त थतुं नथी, एवा संत सुसाधु जनोनेज धन्य छे.
- (१३) स्वाध्यायरुपी उत्तम संगीत युक्त, संतोषरुपी श्रेष्ठ पुष्पथी मंडित, सम्यग् ज्ञान विलासरुपी उत्तम मंडपमां रही ग्रुमं
 ध्यान शय्याने सेवी, तत्त्वार्थ वोधरुपी दीपक्षने प्रगटी, अने समतारूपी श्रेष्ठ स्त्रीनी साथे रमण करी केवल निर्वाण सुखना अभिलापी
 महाश्योज रात्रीने समाधिमां गाळे छे.
- (१४) शुद्ध ध्यानरुपी महा रसायणमां जेतुं मन मग्न थयुं छे; तेने कामिनीना कटाक्ष वगेरे विविध हावभावो शुं करनार छे?
- (१५) सम्यग् ज्ञानक्षी जेना उंडा मूळ छे, समिकतक्षी जेनी यजबूत शाखा छे, एवा वत—दृक्षने जेणे श्रद्धाजळथी सिंच्युं छे तेने अवस्य मोक्षफळ आपे छे. स्वर्गीदिकना सुख तो पुष्पादिकनी पेरे मासंगिक छे, तेतो सहजमां प्राप्त थइ शके छे.
 - (१६) कोधादिक उग्र कषायरुपी चार चरणवाळो, व्यामा-

हरुपी संहवाळो, राग द्वेषरुपी तीक्ष्ण दीर्घ दांतवाळो, अने दुर्वार कामथी मदोन्मत्त थयेछो, महा मिथ्यात्वरुपी दुष्ट गजने सम्यग् ज्ञा-न-अंकूज्ञना प्रभावथी जेणे वज्ञ कर्यो छे, ते महानुभावेज त्रणे लोकने स्ववज्ञ कर्या छे एम जाणवं.

- (१७) यशंकीर्तिने माटे पोतानुं सर्वस्व आपीदे एवा, अने पो-ताना स्वामीने माटे पाण पण आपीदे एवा, वहु जनो मळी आवशे, पण शत्रुमित्र उपर जेमनुं मन समरस (सरखं) वर्ते छे एवा तो कोइ विरलाज देखाय छे.
- (१८) जेतुं हृदय दयाई छे, वचन सत्यभूषित छे, अने काया परमार्थ साधनारी छे, एवा विवेकवानने कळिकाळ शुं करी शक्तवानो छे?
- (१९) जे कदापि असत्य वोलतोज नथी, जे रणसंग्राममां पाछी पानी करतो नथी, अने याचकोनो अनादर करतो नथी, तेवा रत्नपुरुषधीज आ पृथ्वी रत्नवती कहेवाय छे. केमके कहेवाय छे के-' वहुरत्ना वसुंधरा.'
- (२०) सर्व आशारुपी दृक्षने कापना कुनाडा जेनो काळ, जो सर्वनी पाछळ पडयो न होत तो निनिध प्रकारना निषय सुखर्थी कोइ कदापि निरक्त थातज नहिं.

- (२१) जगतनी किल्पत मायामां फसाइ जीवो मनताथी मारुं मारुं कर्या करे छे, पण मूढताथी समीपवर्ती कोपेला कृतांत—कालने देखी शकता नथी. निहं तो जगतनी मिथ्या मोह मायामां अंनाइ जइ मारुं मारुं करीने तेओ केम मरे ?
- (२२) छती साम्रगीनो सदुपयोग करवामां वेदरकार रहेनारने काळ समीप आव्ये छते मनयां खेद थाय छे के हाय! मे स्वाधीन-पणे कांइ पण आत्म साधन न कर्यु, हवे पराधीन पडेलो हुं थुं करी शक्तं? प्रययथीज सावधानपणे सत् सामग्रीने सकळ करी जा-णनारने पाछळथी खेद करवो पडतोज नथी.
- (२३) प्रथम प्रमादवडे तप जप व्रत पचखाण निहं करनार कायर माणस पाछळथी व्यर्थ मात्र दैवनेज दोप देखे. खरो दोप तो पोतानोज छे के पोते छती सामग्रीए सबेळा चेत्यो निहं.
- (२४) वाल शीघ्र योवन वयने प्राप्त करतो अने जुदान जरा अवस्थाने प्राप्त थतो अने तेपण काळने वश थयो छतो, दृष्ट नष्ट थयो देखाय छे; एवां मत्यक्ष कौतुकवाळा वनाव देख्या वाद वीजा इंद्रजाळनुं शुं प्रयोजन छे ! आ संसारज अनेक पात्र युक्त विचित्र नाटकरूपज छे.
 - (२५) कर्मनुं विचित्रपणुं तो जोवो ? के मोटा राजाधिराज

पण दुर्देव योगे भीख मागतो देखाय छे; अने एक पामर भीखारी जेवों मोदुं साम्राज्य सुख पामे छे. ए पूर्वकृत कर्मनोज महिमा छे.

- (२६) परलोक जतां प्राणीने पुत्रादिक संतती तेमज छक्षी विगेरे कामे आवतां नथी. फक्त पुण्यने पापज तेनी साथे जाय छे.
- (२७) मोहना मदथी मानदी मनमां धारे छे के, धर्म तो आगळ करांशे पण विकराळ काळ अचानक आवीने ते वापडानो कोळीयो करी जाय छे. पवित्र धर्मनुं आराधन करवामां प्रमाद सेवनार खरे-खर ठगाइ जाय छे, माटेज कहां छे के 'काले करवुं होय ते आजे कर अने आजे करवुं होय ते अव घडीए कर.' केमके कालने काळनो भय छे.
- (२८) रावण जेवा राजवी, हतुमान जेवा वीर अने रामचंद्र केवा न्यायीनो पण काळ कोळीयो करी गयो तो वीजातुं तो कहे-चुंज शुं ? आथीज काळ सर्वभक्षी कहेवाय छे; ए वात सत्य छे.
- (२९) सुकृत या सदाचरण विना मायामय बंधनोथी बंधा-चेला संसारी जीवोनी मुक्ति-मोक्ष शी रीते थइ शके वारु ?
- (२०) आ मनुष्य जन्मरुपी चिंतामणी रत्न पामीने, जे गफ-छत करे छे. ते तेने गुमावीने पाछळथी पस्तावो करे छे. कामः १०

क्रोध, क्रवोध, मत्सर, क्रबुद्धि अने मोह मायावडे जीवो स्वजन्मने निष्फळ करी नांखे छे.

- (३१) आ मतुष्य देहादिक शुभ सामग्रीनो सदुपयोग कर-चाणी निर्वाण सुख स्वावीन थइ शके तेम छतां, रागांध वनी जीव मोहमायामां सुंक्षाइ मूढनी जेम कोटी मूल्यवाळं रत्न आपी कांगणी स्वरीदे छे.
- (३२) स्यंकर नकीदिकनी मोटो डर न होत तो कोइ कदापि पापनी त्याग करी शकत नहि; अने सद्गुणनो मार्ग सेवी शकत नहि.
- (३३) जेणे निर्मल शीळ पाळ्युं नथी, शुभ पात्रमां दान दीधुं नथीं अने सद्गुहतुं वचन सांभळीने आदर्थु नथी, तेनो दुर्लभ मा-नव भव अलेखे गयो जाणवो.
- (३४) संयोगनुं सुख क्षणीक छे; देह व्याधियस्त छे अने भ-यंकर काळ नजदीक आवतो जाय छे; तोपण चित्त पाप कर्मथी वि-रक्त केप थतुं नथी ! अथवा संसारनी मायाज विलक्षण छे.
- (३५) आ संसार चक्रमां जीव अनंतशः जन्म मरणना असहा दुःख सह्यां छतां हजी तेथी मन उद्धिग्न थतुं नथी, अने पाप क्रिया-मां तो ते अहोनिश मग्नज रहे छे.

- (३६) अहो आंकेला सांहनी पेरे चित्त खेच्छा मुजव निद्य मार्गमां भम्या करे छे; पण चारित्र धर्मनी धुराने अने महाव्रतना भारने वहन करतुं नथी! आथीज आत्मानी संसार चक्रमां बहु प्रकारे खरावी थाय छे.
- (३७) पूर्व पुण्ययोगे अनुकूळ सामग्री मळ्या छतां प्रमादना वर्ताथी जीव कंइ वण आत्म साधन करी शकतो नथी, तेथीज तेने संसार चक्रमां पुनः पुनः भमवुं पडे छे.
- (३८) जेणे संसार संबंधी सर्व दुःखनां मूळ कारण भूत क्रोध, मान, माया, अने छोभरुपी चारे कपायोने हठाववा प्रयत्न कर्यो नथी, ते वापडाए हाथमां आवेछं मनुष्य जन्मरुपी कल्पद्रक्षनुं अमृत फळ चार्ल्युंज नथी.
- (३९) वाल्यवय क्रीडा मात्रमां, योवनवय विषयभोगमां अने दृद्ध अवस्था विविध व्याधिना दुखमां हारी जनारने सुकृतना अभावे परलोकमां कंइ पण सुख साधन मळी शकतुं नथी.
- (४०) जे द्रव्यना लोभथी जीव अनेक आकरां जोखममां उत रे छे, ते द्रव्यतुं अस्थिरपणुं विचारीने संतोष द्यति धारवी उचित छे.
- (४१) आ मन मर्कट मोह मदिराना मदथी मत्त बन्यु छर्तु; अनेक प्रकारनी कुचेष्टा करवा तत्त्पर रहे छे, सत् समागमरुपी अमृत

सिंचन विना मननुं ठेकाणुं पडवुं महा मुक्केल छे. सद्बोधयी केळ-वाइने लांबा अभ्यासे ते पांसरु थाय छे.

- (४२) निर्मळ शीलव्रतधारी श्रावकने, परस्त्रीथी अने उत्तम चारित्रधारी साधुजनने सर्व स्त्रीथी निरंतर चेतता रहेवानी खास जरुर छे. प्रमादथी घणा पतित थइने पायमाल थइ गया छे.
- (४३) जो विषयभोगमां नित्य जतुं मन रोकवामां आन्युं निहं तो; भस्म चोळवाथी, धूम्र पान करवाथी, वस्न त्यागथी, तेमज अ-नेक वीजां कष्ट सहन करवाथी के जपमाळा फेरववाथी थुं वळ-वानुं हतुं ?
- (४४) अमृत जेवां मधुर वचनथी खळ पुरुषोने जे सन्मार्गमां जोडवा इच्छे छे; ते मधना वींदुधी खारा सम्रुद्रने मीठो करवा वांछे छे, अने निर्मळ जळथी कोयलाने साफ करवा मांगे छे, जे वनवुं केवळ अशक्य छे.
- (४५) कुमितने सर्वथा तिलांजली दइने, सुमितनो सर्वदा आदर करनार महामित दुर्गितने दळीने सद्गतिनो भागी थइ शके छे.
- (४६) कमळना पत्र उपर रहेला जळविंदु समान जीवितने, चंचळ लेखीने विविध विषय भोगथी विरमीने, मोक्षाथीं जीवे दान

चील तप अने भावना रुशी पवित्र धर्मनुं सेवन करवुंज उचित छे.

- (४७) सर्व संयोगिक भावाने क्षण विनाशी समजीने, गुरु कृपाथी शीघ्र खहित साधी लेवा बनतो श्रम करवो विवेकीने उचित छे.
- (४८) जेमणे दुर्जननी संगति करी तेणे धर्म साधननी आ अपूर्व तक खोइ छे; एम निश्चयथी समजवुं. दुर्जन द्विजिह्व सपैनी जेवाज होरीला होवाथी सामाने पण विक्रिया उपजावे छे.
- (४९) जो परमात्मामां पूर्ण मेम जाग्यो निहं यातो संपूर्ण गुणानुराग जाग्यो निहं, तो विविध शास्त्र परिश्रम मात्रथी शुं वळ्छुं!
- (५०) मिथ्याडंबरधी जीव परीणामे भारे दुःस्वी थाय छे.
 भिथ्या दमामधी जीव उंधुं वेतरवा जाय छे, जेमां निश्चे हानिज पामे
 छे. एवो दंभ निश्चे दूर्गतिनुंज मूळ छे. माटे सर्व प्रकारे कपटहित्त
 तजीने सरस भावज धारण करवो मोक्षाधीने युक्त छे. दंभ युक्त सर्व
 कष्ट करणी मिथ्या थाय छे, निर्मळ ज्ञान वैराग्य योगेज दंभनी दुष्ट
 घाटी उद्यंगी जकाय छे.
- (५१) हे हृदय ! करुणा समान वीजो कोइ अमृतरस नथी पर-द्रोह समान वीजं हालाहल झेर नथी, सदाचरण समान वीजो क-ल्परक्ष नथी, कोघ समान कोइ दावानळ नथी, संतोष उपरांत

कोइ िय मित्र नथी, अने लोभ समान कोइ शत्रु नथी. आमांथी युक्तायुक्त विचारीने तुजने रुचे ते आदर! हितकारी यार्गज आद- रवो ए सिंद्विक पाम्यानुं सार छे.

(५२) हे भाइ जो तुं निर्वाण सुखने वांछतो होय तो परम सान्तिक्पी प्रियानो आदर कर; केमके तेणी शील श्रद्धा, ध्यान विवेक, कारुण्य औचित्य, सद्वोध अने सदाचरणादिक अनेक गुण रत्नोथी अलंकृत छे. श्लान्ति-श्लमानुं सम्यग् सेवन कर्या विना कोइ कदापि मोक्षपद पामी शकेज नहिः

(५३) जे रागद्वेष अने मोहादिक दुष्ट दोषोथी सर्वथा मुक्त थइ, परमात्मपदने प्राप्त थया छे, अने जेमनुं वचन सर्व विरोधरिहत छे, जे जगत् त्रयना निष्कारण बंधु छे; एवा परम कारुणिक सर्वज्ञ पुरुषज शरण करवा योग्य छे. एवा आप्त पुरुषना वचन अनुसारे वदनारा सत्पुरुषो पण मोक्षार्थी सज्जनोए सावधानपणे सेवन करवा योग्यज छे.

(५४) ज्यां सुधी सुकृतवहे करेलो पूण्यनो संचय प्होंचे छे, त्यां सुधीज सर्व प्रकारनी अनुकूळ सुख सामग्री मळी आवे छे, एम समजीने शुभ धर्मकरणी करवा मन सदोदित रहे तेम प्रमाद-रहित वर्त्तवुं.

(५५) ज्यां सुधी दुष्कृत करेलो पाप संचय प्होंचे छे त्यांसुधीज

सर्व प्रकारनी प्रतिकुळतावाळां कारण मळी आवे छे, एम समजीने पूर्व पापनो क्षय करवा उदित दुःखने समभावे सहन करवा पूर्वक नवां पाप कर्मथी सदा निवक्तींने श्रुभ धर्मकरणी करवा सदा साव-धान रहेवुं युक्त छे.

- (५६) जेमणे आ अमूल्य मनुष्य जन्म पामीने श्रमाद्ने प्रवश्च यइ धर्म आराध्यो नाहि, तेमज छते धने कृपणताथी तेनो सदुपयोगः क्यों नहि, एवा विवेक विकळने मोक्षनी प्राप्ति दूरज छे.
- (५७) आकाश मध्ये पण कदाच पर्वतिशला मंत्रतंत्रना योगे लांवो काळ लटकी रहे, दैव अनुकूळ होय तो वे हायना बळे कदाच समुद्र पण तराय अने घोळे दहाडे पण कदाच यह योगथी आका-शमां स्फुट रीते ताराओ देखाय परंतु हिंसाथी कोइनुं कदापि कंइ पण कल्याण संभवतुंज नथी.
- (५८) जेम ज्योतिश्रक्त रात्री अने दिवसतुं मंडन छे, तेम अ-खंड शील सतीओ अने यतिओतुं खरेखरुं भूषण छे.
 - (५९) मायावडे वेश्या, शीलवडे कुल वालिका, न्यायवडे पृ-ध्वीपति, अने सदाचारवडे यति महात्मा शोभे छे.
 - (६०) ज्यां सुधीमां शरीर व्याधियस्त थइ न जाय, ज्यां सुधीमां जरा अवस्थाथी देह जर्जरित थइ न जाय, अने ज्यां सुधीमां

इँद्रियोतुं वळ घटी न जाय, त्यां सुधीमां खस्वशक्ति अने योग्यता सुजब पवित्र धर्मतुं सेवन करवुं युक्त छे, सद् उद्यमथी सकळ का-र्यनी सिद्धि थाय छे; अने प्रमादाचरणथी सकळ कार्यने हानि प्होंचे छे.

- (६१) मद्य (Intoxication) विषय (evil propensities) कषाय (Wrath etc.) निद्रा (Idlences) अने विकथा-कपोछ कथारुप पांच त्रकारना प्रमाद जीवोने दुरंत व्यथामां पांडे छे.
- (६२) जगत्गुरु जिनेश्वर प्रभुना पवित्र वचनतुं उद्घंघन करी-वे स्वच्छंद वर्चन चलावबुं एज प्रमादनुं व्यापक लक्षण छे.
- (६३) एवा यमादना जोरथी चौद पूर्वधर समान समर्थे पुरुषो पण सत्य चारित्र धर्मथी चलायमान थइ पतित थइ गया छै। तो बीजा अटपज्ञ अने ओछा सामर्थ्यवाळाओतुं तो कहेबुंज शुं ?
- (६४) थोड़ं रूण थोड़ं त्रण (चांदु) थोडो अग्न अने थोडा कपायनो एण कदापि विश्वास करवो नहि. केमके ते सर्व थोडामां-श्री वशीने सोटुं भयंकर रूप धारण करे छे.
- (६५) ज्यां सुधी क्रोधादि चारे कवायोनो सर्वथा क्षय थाय निह, थोडो एण कपाय शेष रह्यो त्यां सुधी तेनो विश्वास करवी निह, थोडा एण अवशिष्ट रहेला कपायनी उपेक्षा करवाथी नवित्

भारे विषन परीणाग आवे छे, माटे तेमनो सर्वया क्षय करवा सतत्। प्रयत्न करवे। युक्त छे.

- (६६) ज्ञानी पुरुषो क्रोधादिक चारे कषायने चंडाळचोकडी तरीके ओळखावे छे, अने तेनाथी सर्वथा अळगा रहेवा आग्रह करे छे.
- (६७) राग अने द्वेष ए वंने क्रोधादिक चारे कषायतुं परि-णाम छे, अथवा तो राग अने द्वेषथी उक्त क्रोधादि चारे कषायनी उत्पत्ति अने द्वाद थाय छे. एम समनीने रागद्वेषनोज अंत करवा उजमाळ थतुं युक्त छे. ते वंनेनो अंत थये पूर्वोक्त चारे कषायनो स्वतः अंत थइ जाय छे.
- (६८) रागद्वेय ए वंने मोहथकी मभने छे, तेथी ते वंने मोह-नाज पुत्र तरीके ओळखाय छे, रागने केसरी सिंह जेवो वळवान कहा छे. अने देवने मदोन्मत हाथी जेवो मस्त मान्यो छे. तेथी तेमनो जय करवा ज्ञानी पुरुषो मोटा सामर्थ्यनी जरुर जोवे छे.
- (६९) राग अने द्वेप केवळ मोहनाज विकारभून होवाथी, ज्ञानी पुरुषो मोहनेज मारवानुं निशान ताके छे. मोह सर्व कर्ममां अग्रेसर छे.

- (७०) मोहनो क्षय थये छते शेष सर्व परिवार पण खतः क्षय थाय छे. पण तेनी प्रवळता वडे सर्व शेष परिवारनुं पण प्रावल्य वधतुं जाय छे, दुनीयामां वळवानमां वळवान शत्रु मोहज छे.
- (७१) काम, क्रोध, मद मत्सरादिक सर्व मोहनाज परिवार छे, एम समजीने मोह क्षयायीं ए ते सर्वथी चेतता रहेवानी खास जरुर छे.
- (७२) हुं अने माहरुं एवा गुप्त मंत्रधी मोहे जगतने आंधळं करी नांख्युं छे. अर्थात् ममताथीज मोहनी दृद्धि थती जाय छे.
- (७३) निहं हुं अने निह मारुं ए मोहनेज मारवानो गुप्त मंत्र छे. अर्थात् निमलताज मोहने मारवानुं प्रवळ साधन छे.
- (७४) आत्मानुं शुद्ध स्वरुप समजवाथी तेमज परभावने वरा-वर पीछानवाथी मोहनुं जोर पातळुं पडे छे.
- (७५) स्फटिक रवोनी जेवुं निर्मल आत्मानुं स्वरूप छे, छनां कर्मकलंकथी ते मलीनताने पामेलुं होवाथी, जीव तेमां मुग्धताथी मुंझाय छे.
- (७६) कर्मकलंक दूर थये छते जेवुं ने तेवुं निर्मल आत्म स्व रूप मगटे छे, त्यारे आत्माने तेनो साक्षात् अनुभव थाय छे।

- (७७) कर्मकलंकने दूर करवा माटे सर्वज्ञ प्रश्रुए सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्ररुपी श्रेष्ट साधन वतावेछं छे.
- (७८) एज साधनथी पूर्वे अनेक महाश्रयोए आत्म शुद्धि करी छे, वर्तमान काळे साक्षात करे छे; अने आगामी काळे करशे एम समजीने उक्त साधनमां दृढतर उद्यम करवो युक्त छे.
- (७९) ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य अने उपयोग एज आ-त्मानुं अमन्य लक्षण छे, एथी भिन्न विपरीत लक्षण अजीव ज-डनुंज छे.
- (८०) स्व छक्षणांकित सद्गुणोमां रमण करवुं ते स्वभाव रमण कहेवाय छे, अने तथी विपरीत दोषोमां विभाव पृत्रति कहे-वाय छे. मोक्षाथींए विभाव पृत्रतीने तजी स्वभाव रमणज करवुं उचित छे, एम करवाथी आत्मातुं शुद्ध स्वरूप प्रगट थाय छे.
- (८१) सम्यग् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्ररुपी रत्नत्रयीतुं संसे-वन करवाथी जेमने अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र अने अनंत-वीर्यरुपी अनंत चतुष्ट्यी प्राप्त थयेळ छे; एवा परमात्मपद प्राप्त महापुरुषोज मोक्षायीओ ए ध्यावा योग्य छे.
- (८२) एवा परमात्मातुं ध्यानं करवाथी मन स्थिर थाय छे, इंद्रियो अने कषायनो जय थाय छे, अने शांत रसनी पुष्टिथी आ-

त्मा पोतेज परमात्मपदनो अधिकारी थाय छे, घनघाति कर्मनो क्षय थतांज पोते परमात्म रूप थाय छे, माटे मोक्षार्थी जनोए एवाज पर-मात्म प्रभुनुं ध्यान करवुं के जेथी अंते पोते पण तद्रूपज थाय.

- (८३) एवा परमात्मपद प्राप्त पुरुषो पण अविशिष्ट अघाति कर्म क्षय थतां सुधी तो शरीरघारीज होय छे पण संपूर्ण कर्मधी स्रुक्त थये छते तेओ शरीरमुक्त—अशरीरी पूर्ण सिद्ध अवस्थाने प्राप्त थाय छे अने एकज समयमां सर्वथा सर्व वंघन मुक्त छता लोकना अग्र भागे जह स्थितिने भजे छे.
- (८४) त्यां तेओ अनंत ज्ञानादिक स्वरुप स्वभावमां स्थित च्छतां परमानंदमां मग्न रहे छे जन्म मरणादिक सर्व वंधनथी सर्वथा मुक्तज रहे छे एवा सिद्ध परमात्मा पण अनंत छे.
- (८५) एवा सिद्ध भगवानना सद्गुणोतुं अनुकरण करीने जे तेमतुं अभेदपणे ध्यान करे छे ते स्फीताशयो पण तेवीज स्थितिने अंते थजे छे.
 - (८६) एवा भावी सिद्ध पुरुषो पण अनंत छे.
- (८७) उत्तम प्रकारना आचार विचारमां कुशलपणे पोते प्रव-तिता छता अन्य मोक्षार्थी वर्गने प्रवर्तावनारा आचार्य महाराजा, पवित्र अंग उपांगरूप-आगम सिद्धांतने संपूर्ण जाणीने अन्य विनीत

वर्गने परमार्थ दावे पढावनारा उपाध्याय महाराजा, तथा पवित्र रत्नत्रयीना पालन पूर्वक अन्य आत्मार्थी जनोने यथाशक्ति आलंबन आपनारा मुनिराज महाराजा सर्वोत्तम लोकोत्तर मार्गना सेवनथी पूर्वोक्त परमात्म पदना पूर्ण अधिकारी होवाथी अनुक्रमे परमात्मपद पामीने संपूर्ण सिद्धरूप थाय छे.

- (८८) जेओ संसारीक छल संयोगोनी अनित्यता विचारीने संसारना सर्व संवंधधी विरक्त थइ उदासीन भाव धारण करी परमात्म पंथने अनुसरवा कटिवद्ध थइ स्व स्वभावमां स्थित थइ सिद्ध परमात्माने अभेद भावे ध्यावे छे तेओ सर्व दुःखवंधनने छेदीने निश्चे सिद्ध द्वाने प्राप्त थाय छे.
- (८९) एवा महापुरुषोनो समागम मोक्षार्थी जीवोने परम आ-शीर्वाद्रप छे एम समजीने सर्व प्रमाद तजी सत्समागमनो वनतो लाम लेवा चूकवुं निहं, एवा सत्समागमथी क्षण वारमां अपूर्व लाम संपादन थाय छे.
- (९०) जेमनुं मन सत्समागम वहे ज्ञान वैराग्यमां तरवोळ रहे छे तेमनुं सुख तेओज जाणे छे. प्रियाना आलिंगनथी के चंदनना रसयी तेवी शीतळता वळती नथी एवी शीतळता वैराग्य रसनी ल्हेरीयोथी प्रभवे छे. जेम वैराग्य रसनी दृद्धि थाय तेम प्रयत्न करवो जरुरनो छे.

- (९१) वैराग्य रसथी अनादि काळनो रागादिकनो ताप उप-शमे छे, तृष्णा शांत थाय छे, अने ममत्त्वभाव दूर थाय छे, यावत् मोहनुं जोर नरम पडे छे अने चारित्रमार्गनी पुष्टि थाय छे.
- (९२) वैराग्य रसनी अभि । दिथी एवी तो उत्तम उदासीन दशा छाय जाय छे के तथी सर्वत्र समानभाव वर्ते छे. निंदा—स्तु- तिमां तेमज शत्र—मित्रमां समपणुं आववाथी हर्ष शोक थता नथी। अनुकूळ के प्रतिकूळ सर्व संयोगोमां समिचत्तपणुं आवे छे तेथी स्वभावनी शुद्धि विशेषे थाय छे.
- (९३) वैराग्यनी दृद्धिथी संसारवास काराग्रह जेवो भासे छे अने तेथी विरक्त थइ पारमार्थीक सुख माटे यत्न करवा मन दोराय छे
- (९४) शांत रसनी पुष्टि थतां द्रव्य अने भावं करुणानी दृद्धि थाय छे अने शांत रसना समुद्र एवा वीतराग प्रभुना वचन उपर पूर्ण प्रतीति आवे छे जेथी गमे तेवी कसोटीना वखते पण सत्य मार्गथी चलायमान थवातुं नथी.
- (९५) प्रश्नम रसनी पुष्टि थवाथी अपराधी जीवतं मनथी पण प्रतिकूळ-अहित चिंतवन करातं नथी आवी रीते विवेक वर्तनथी मोक्ष महेलनो मजबूत पायो नंखाय छे अने सकळ धर्मकरणी मोक्ष साधकज थाय छे.

- (९६) चिरकाळना छांवा अभ्यासथी शांतवाहिता योगे अहिंसादिक महात्रतोनी हहता अने सिद्धि थाय छे जेथी समीपवतीं हिंसक जीवो पण पोतानो क्रूर स्वभाव तजी दहने शांत भावने भजे छे अने सातिशयपणाथी देव दानवादिक पण सेवामां
 हाजर रहे छे. आवो अपूर्व महिमा शांत—वैराग्य रसनोज छे एम
 सर्व मोक्षार्थी जनोने विशेषे प्रतीत थाय छे तेथी तेमां तेओ अधिक
 प्रयन्न करे छे.
- (९७) जेमने मन, वचन अने कायामां संपूर्ण स्थिरता प्राप्त यइ छे एवा योगीत्वरो गाममां के अरण्यमां दिवसे के रात्रीमां स-रखी रीते स्व स्वभावमांज स्थित रहे छे. कदापि संयम मार्गमां अरित भजताज नथी, मुवर्णनी पेरे विषम संयोगोंमां चढवाने ते . चर्ते छे.
- (९८) जेओ फक्त अन्यनेज शिखामण देवामां भूरा छे तेओ स्वरी रीते पुरुषनी गणनामांज नथी. पण जेओ पोतानेज उत्तम शि-खामणो आपीने चारित्र मार्गमां स्थिर करे छे तेओज खरेखर सत् पुरुषोनी गगनामां गणावा योग्य छे.
- (९९) कांचनने जेम जेम अग्निमां तपाववामां आवे छे तेम तेम तेनो वान वधतोज जाय छे. शेलडीना सांठाने जेम जेम छेद्-वामां के पीलवामां आवे छे तेम तेम ते सरस मिष्ट रस सम्पें छे.

तेमज चंदनने जेम जेम घसवामां के कापवामां आवे छे तेम तेम ते तेना घसनार के कापनारने उत्तम प्रकारनी सुगंध या खुशवो आप छे. तेवीज रीते सत्पुरुषोने प्राणांत कष्ट पडये छते पण कड़ापि प्रकृ तिनो विकार थतोज नथी. ते तो तेवे वखते उल्लंडी अधिक उज्ञिटी धइ आत्म लाभ भणी थाय छ आवाज पुरुषो जगतमां खरा पुरुष्मिनी गणनामां गणावा योग्य छे.

- (१००) योगी पुरुषोने वैराग्य-पुष्टिथी जे अंतरंग सुख थाय छे तेवुं सुख इंद्रादिकने स्वममां पण संभवतुं नथी. केमके इंद्रादिकनुं सुख विषयजन्य होवाथी केवळ वहिरंग-वाह्य-कल्पितज छे.
- (१०१) मध्य-उदरनी दुर्वळताथी क्रुशोदरी-ह्नी शोभे छे, तपोतुष्ठानवडे थयेली श्रिरनी दुर्वळताथी यति-म्रुनि शोभे छे, अने मुखनी क्रुशतायी घोडो शोभे छे, पण तेओ कंइ आग्रुपणथी शोभतां नथी। सर्व कोइ स्व स्व लक्षण लक्षित छतांज शोभे छे.
- (१०२) जे स्नीनां प्रेमाळ वचन सांभळीने चंचळ-चित्त थतो नथी तेमज स्नीना नेत्र कटाक्षथी पण लगारे संक्षोभ पामतो नथी तेज योगीश्वर रागद्वेष विवर्जित होवाथी जगतमां जयवंतो वर्ते छे.
- (१०३) अनेक दोषथी भरेली कामनी कुपित थये छतं पण कांमातुर जीव तेणीनो आदर करतो जाय छे. एवी कामांधताने धिकार पडो.

- (१०४) जेनो संयोग थयो छे तेनो वियोग तो अवस्य च्हेलो मोडो थवानोज छे. त्यारे वियोग वखते शा माटे हृद-यने शल्यरुप शोक करवोज जोइये ? तेवा दुःखदायी शोकथी शं चळवानुं छे ?
- (१०५) ममता विना शोक थतो नथी. ज्ञान वैराग्यथी ते ममता घटे छे. सम्यग्ज्ञान या अनुभव ज्ञानथी गांठ तूटे छे अने हृदयनुं बळ वधवाथी घटमां विवेक जागवाथी शोकादिकने अंतरमां पेसवानो अवकाश मळतो नथी.
 - (१०६) कफना विकारवाळं नारीनुं मुख क्यां अने अमृतथी भरेलो चंद्रमा क्यां ? ते बंने वच्चे महान् अंतर छतां मंदबुद्धि एवा कामी लोको तेमनुं ऐक्य सरखापणुंज माने छे.
 - (१०७) हाथीना काननी माफक चपळ-क्षणवारमां छेह दे एवा विषय भोगने परिणामे माठा विपाक आपवावाळा जाण्या छतां तजी न शकाय ए केवळ मोहनीज प्रवळता देखाय छे.
 - (१०८) एक एक इंद्रियनी विषय लंपटताथी पतंगीया, भमरा, माछलां, हाथी अने हरण प्राणांत दुःख पामे छे तो एकी साथे पांचे इंद्रियोने परवश पडेला पामर प्राणीयोत्तुं तो कहेर्बुंज शुं ?

- (१०९) जेम इंधनधी अग्नि शांत थतो नथी, परंतु ते दृष्टिज आमे छे तेम विषय भोगधी इंद्रियो तम थती नथी परंतु तेथी तृष्णा द्वयती जाय छे, अने जेम जेम विशेषे विषय सेमन कर वा जीव छन्छ वाय छे तेम तेम अग्निमां आहूतिनी पेरे कामानिनी दृष्टि स्था करे छे.
- (११०) अनुभव ज्ञानीयोए युक्तन कहुं छे के ज्ञान-वैराग्यज 'यरमित्र छे, काम भोगज परमशत्रु छे, आहंसाज परम धर्म छे अने 'नारीज परम जरा छे (केमके जरा विषयलंपटीनो शीघ्र पराभव करे छे.)
 - (१११) वळी युक्तज कहुं छे के तृष्णा समान कोइ: व्याधि नथी अने संतोष समान कोइ सुख नथी.
 - (११२) पवित्र ज्ञानामृत या वैराग्यरसयी आत्माने पोषत्राथी कुळ्णानो अंत आंत्रे छे अने संतोष गुणनी प्राप्ति अने दृद्धि थायछे.
 - (११३) संतोप सर्व सुखतुं साधन होवाथी मोक्षार्थी जनोए ते अवस्य सेवन करवा योग्य छे. अने लोभ सर्व दुःखतुं मूळ होवाथी अवस्य तजवा योग्य छे. लोभ-बुद्धि तजवाथी संतोप गुण वाधे छे.
 - (११४) क्रोधादि चारे कपाय, संसाररूपी महावृक्षनां उंडा मजवूत मूळ छे. संसारीनो अंत करवा इच्छनार मोक्षार्थीए कपाय-

नोज अंत करवो युक्त छे. कषायनो अंत थये छतें भवनो अंत थयोज समजवो.

(११६) उपश्रम भावधी क्रोधने टाळवो, विनयभावधी मानने टाळवो, सरलभावधी माया-क्रपटनो नाश करवो अने संतोषधी लोभनो नाश करवो क्षायने टाळवानो एज उपाय ज्ञानीयोए वताव्यो छे.

(११६) राग अने द्वेषथी उक्त चारे कषायने पुष्टि मळे छे माटे वीतराग प्रभुए सर्व कर्मनो जड जेवा राग अने द्वेषनेज मूळथी टाळवा वारंवार उपदेश कर्यों छे. द्वेपथीं, कोध अने माननी तथा रागथी माया अने छोभनी दृद्धि थाय छे. राग-द्वेषनो स्रय थवाथी सर्व कपायनो स्वतः स्रय थइ जाय छे. माटे मोक्षाथीए राग-द्वेषनो अवश्य स्रय करवो युक्त छे.

(११७) विषय भोगनी लालसायी राग-द्वेषनी उत्पत्ति अने चिद्धि थाय छे माटे मोक्षार्यीए विषय लालसाने तजीने सहज संतोष गुण सेववो युक्त छे.

(११८) विविध विषयनी लालसावाळुं मलीन मनज दुर्गतिर्नुं मूळ छे माटे एवा मननेज मारवा महाशयो भार दहने कहे छे.

(११९) मनने मार्याथी इंदियो स्वतः मरी जाय छे. इंद्रियोना

मरणथी विषयलालसानो अंत आववाथी रागद्वेषरूप कषायनो पण अंत आवे छे, रागद्वेष रूप कषायनो क्षय थवाथी घाति कर्मनो क्षय थाय छे अने अनंत ज्ञानादिक सहज अनंत चतुष्ट्रयी प्रगट थाय छे। यावत् अविश्वष्ट अघाति कर्मनो पण अंत थतांज अज अविनाशी मोक्ष पदवी प्राप्त थाय छे.

- (१२०) मन अने इंद्रियोने वश करीने विषयछाछसा तजवाथी आवो अतुपम लाभ थतो जाणीने कोण इतभाग्य कामभोगनी वांछा करीने आवा श्रेष्ठ लाभ थकी चूकशे ? ग्रुमुक्षु जनोने तो विषयवांछा हालाइल झेर जेवी छे.
- (१२१) विषयलालसा हालाहल झेरथी पण आकरी छे केमके झेरतो खाधा वादज जीवनुं जोखम करे छे अने विषयनुं चिंतवन करवा मात्रथी चारित्र—प्राणनुं जोखम थाय छे. अथवा विष खाधुं छतुं एकज वखत मारे छे पण विषयवांछा तो जीवने भवोभव भ-टकावे छे.
- (१२२) विषय सुखने वैराग्य योगे तजीने फरी वांछनार वम-न-भक्षी श्वाननी उपमाने लायक छे.
- (१२३) योगमार्गथी पतित थता प्रमुक्षुने योग्य आलंबन आ-पीने पाछो मार्गमां स्थापवामां अनर्गळ लाभ रहेलो छे.
 - (१२४) जेम राजीमितये रथनेमिने तथा नागिलाए भवदेव-

मुनिने तथा कोशाए सिंह गुफावासी साधुने प्रतिवोध आपीने संयम मार्गमां पुनः स्थाप्या तेम निःस्वार्थ बुद्धिथी मोक्षार्थी जीवने अव-सर उचित आलंवन आपनार मोटो लाभ हांसल करी शके छे.

(१२५) मोक्षार्थी जनोए हमेशां चढताना दाखला लेवा योयय छे पण पडताना दाखला लेवा योग्य नथी. चढताना दाखलाथी
आत्मामां शूरातन आवे छे, अने पडताना दाखलाथी कायरता
आवे छे.

(१२६) च्हाय तो पुरुष होय के स्नी होय पण खरो पुरुषार्थ सेववायीज ते सद्गति साधी शके छे. पुरुष छतां पुरुषार्थहीन होय तो ते पुंगणमां नथी अने स्नी छतां पुरुषार्थयोगे पुंगणनामां गणवा योग्यज छे. पूर्वे अनेक उत्तम स्नीओओ पुरुषार्थना वळे परमपदनो अधिकार प्राप्त कर्यों छे. मोक्षार्थी जनोए एवा चहताना दाखला लेवा योग्य छे. तेथी स्वपुरुषार्थ जागृत थाय छे.

(१२७) केवळ पुरुषज परमपदनो अधिकारी छे, ह्वीने तेवो अधिकार नथी एम वोल्नारा पक्षपाती या मिथ्यामापी छे खरी वात तो ए छे के जे खरो पुरुषार्थ सेवे छे ते च्हाय तो पुरुष होय यातो ह्वी होय पण अवस्य परमपदनो अधिकारी होवाथी परम-पद मोक्षस्रखने साधी शके छे. पुरुपनी पेरे अनेक स्त्रीओए पूर्वे परमपद साधे छं छे.

- (१२८) सम्यग् ज्ञानदर्शन अने चारित्रतुं विधिवत् पालन क-रबुं ते खरो पुरुषार्थ छे. पुरुपार्थहीन कायर माणसो तेम करी शकतां नथी।
- (१२९) अहिंसादिक पांच महाव्रत तथा रात्रीभोजननो स-र्वथा त्याग करवारुपी छठुं व्रत विवेकचुद्धिथी समजीने ग्रहण करी सिंहनी पेरे श्रवीरपणे ते सर्व व्रतोतुं यथाविधि पालन करवुं तथा अन्य योग्य—अधिकारी स्त्रीपुरुपोने शुद्ध मार्ग समजावी सन्मार्गमां स्थापी तेमने यथोचित सहाय आपवी ते खरो कल्याणनो मार्ग छे.
- (१३०) सर्व जीवोने आत्म समान लेखीने कोइने कोइ रीते मनथी, वचनथी के कायाथी हणवो नहिं, हणाववो नहिं के हणना-रने संमत थवुं नहिं ए प्रथम महाव्रततुं स्वरुप छे. एम सर्वत्र समजी लेवानुं छे.
- (१३१) क्रोधादिक कपायथी, भयथी के हास्यथी जूठ वोलवं नहिं, जूठ वोलाववुं नहिं तेमज जूठ वोलनारने संमत थवुं, नहिं ए वीजुं महात्रत छे. पित्रत्र शास्त्रना मार्गने मूकीने स्वच्छंदे वोलनार मृषात्रादीज छे.
- (१३२) पवित्र शास्त्रनी आज्ञा विरुद्ध कोइपण चीज स्वामीनी रजा विना लेवी नहिं, लेवडाववी नहिं, तेमज लेनारने संमत थवुं

निहं. संयमना निर्वाह माटे जे कांइ अज्ञान वसनादिक जरुर होय ते पण ज्ञास आज्ञा मुजव सद्गुरुनी संगति लड्ने अदीनपणे गवे-पणा करतां निर्दोप मळे तोज ग्रहण करवं ए त्रीजं महावत कहां छैं...

(१३३) देव, मनुष्य के तिर्येच संवंधी विषयभोग मन, वचन, के कायाथी सेववा निहं वीजाने सेवडाववा निहं अने सेवनारने संमत थवुं निहं ए चोथुं महाव्रत जाणवुं.

(१३४) कंइ पण अल्प यृह्यवाळी के वहु यृह्यवाळी वस्तु खपर मुर्छा राखवी निहं, संयमने वाधकभूत कोइ पण वस्तुनो सं-ग्रह करवो निह, कराववो निह, तेमज करनारने संमत थवुं निह. ए पांचमुं महात्रत छे.

(१३५) अशन, पाणी, खादिम के खादिम राश्री सम्ये (सूर्य अस्त पछी अने सूर्य उदय पहेलां) सर्वथा वापरवा नहिं वपराववा नहिं तेमन वापरनारने संमत थवुं नहिं ए छठुं व्रत छे.

(१३६) पूर्वोक्त सर्व महाव्रतोतुं यथाविधि पालन करतां जैम रागद्वेपनी हानी थाय तेम सावधानपणे प्रवृत्ति निवृत्ति मार्ग स्थी-कारी तेनो यथार्थ निर्वाह करवो, अने अन्य आत्मार्थीजनोने य-थाशक्ति यथावकाश सहाय करवी ते उत्तम प्रकारनो पुरुषार्थ छे.

(१३७) सद्गुरुतुं शरण लही तेमनी पवित्र आज्ञानुसारे वर्त-नार महाशयोनो सकळ पुरुषार्थ सफळ थाय छे.

- (१३८) सद्गुरुनी कृपाथी माप्त थयेला सद्वोधवडे, संयम मार्गमां आवता अपायो सहेलाइथी दूर करी शकाय छे.
- (१३९) मुमुक्षुजनोए चंद्रनी पेरे शीतळ स्वभावी, सायरनी जेवा गंभीर, भारंड पंखीनी जेवा प्रमाद रहीत, अने कमळनी पेरे निर्छेप थवुं जोइए. यावत मेरु पर्वतनी पेरे निश्चळता धारीने सिंहनी जेम शूरवीर थइने दृषमती पेरे निर्मळ धर्मनी धुरा मुनिजनोए अव- इय धारवी जोइए.
- (१४०) ग्रुमुक्षुजनोए कंचन अने कामर्नाने दूरथीज तजवां जोइए.
- (१४१) मुमुक्षुजनोए राय अने रंकने सरखा लेखवा जोइए. तथा समभावधी तेमने धर्म उपदेश आपवो जोइए.
- (१४२) मुमुक्षुजनोए नारीने नागणी समान छेखी तेणीनो संग सर्वथा तजवो जोइए. नारीना संगथी निश्चे कछंक चडे छे.
- (१४३) मुमुक्षुजनोए समरस भावमां झीलतां थकां शास्त्र अ-वगाहन कयी करवुं जोइए.
- (१४४) मुमुक्षुजनोए अधिकारीनी हितशिक्षा हृदयमां धारीने स्व शक्तिने गोपव्या विना तेतुं यत्नथी पालन करवुं जोइए. कोइ

रीते अधिकारीनी हितशिक्षानो अनादर नज करवो जोइए.

- (१४५) मुमुक्ष जनोए क्षुघादिकनो उदय थये छते गुर्वादिकनी संगती छइने निर्दोष आहार पाणीनी गवेषणा करी तेवो निर्दोष आहार प्रमुख मळे तो ते अदीनपणे छइने गुर्वादिकनी समीपे आचीने तेनी आछोचना करी गुर्वादिकनी रजाथी अन्य मुमुक्ष जननी यथायोग्य भक्ति करीने छोछपता रहीत छावेछो आहार संयमना निर्वाह माटे वापरतां मनमां समभाव राखी तेने वखाण्या के व-खोडयाविना पवित्र मोक्षना मार्गमां पुनः कटि वद्ध थइने विशेष उद्यम करवो जोइए.
 - (१४६) मुमुसु जनोनी शास्त्र आज्ञा मुजव वर्त्तीने करवामां आवती माधुकरी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'सर्व संपत् करी' कहे छे.
 - (१४७) मुमुक्ष जनोनी शास्त्र आज्ञा विरुद्ध वर्त्तीने करवामां आवती भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'वल्रहरणी' कहीने वोलावे छे.
- · (१४८) केवळ अनाथ अश्वरण एवा आंधळां पांगळां विगेरे दीनजनोनी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'वृत्ति भिक्षा' कहीने वोलावे छे.
- (१४९) मुमुक्ष जनोए शास्त्र विरुद्ध मार्गे वर्त्ततां थती 'बल-हरणी' भिक्षाने सर्वथा तजीने शास्त्र विहित मार्गे वर्त्तीने 'सर्व सं-पत्करी' भिक्षानोज खप करवो युक्त छे.

- (१५०) मुमुक्षु जनोए अकृत, अकारित अने असंकित्पतज आहार गवेषीने ग्रहण करवो जोइए. पोते निह करेलो निह करावेलो तेमज पोताने माटे खास संकल्पीने ग्रहस्थादिके निह करेलो के क-रावेलोज आहार मुमुक्ष जनोने कल्पे छे. तेवो पण आहार गवेपणा करतां मळी शके छे.
- (१५१) यति धर्म याने मुमुक्षु मार्ग अति दुष्कर कह्यो छे केमके तेमां एवा निर्दोष आहारथीज संयम निर्वाह करवानो कह्यो छे.
- (१५२) गृहस्थ जनो पोताने माटे अथवा पोताना कुढुंवने माटे अन्न पानादिक नीपजावता होय तेमां एवं। शुभ विचार करे के आपणे माटे करवामां आवता आ अन्न पांगीमांथी कदाच भाग्य योगे कोइ महात्माना पात्रमां थोडुं पण अपाने तो मोटो लाभ थने. आवो शुभ विचार गृहस्थ जनोने हितकारीज छे.
- (१५३) एवा शुभ चिंतन युक्त गृहस्थोए पोताने माटे के पो-ताना कुटुंबने माटे नीपजावेलां अन्न पाणी विगेरे मुमुक्षु मुनीने ले-वामां वाधक नथी.
- (१५४) निर्दोष आहार लावी विधिवत् ते वापरनार मुनि सं-यमनी शुद्धि करी शके छे. तेथी उलटी रीते वर्ततां संयमनी विरा-थना थाय छे.

- (१५५) मुमुक्षुजनोए ज्ञब्द, रूप, रस, गंध अने स्पर्श संवंधी सर्व विषयआसिक्तिशी सावधपणे दूर रहेवुं युक्त छे.
- (१५६) मुमुश्रुजनोए विषय वासनानेज हठाववा यव करवो जोइए.
- (१५७) मुमुक्षुजनोए गृहस्थोनो परिचय तजीने ब्रह्मचर्यनी ् खृव पुष्टि थाय तेम पवित्र ज्ञान ध्यायनो सतत अभ्यास करवो जोइए.
 - (१५८) मुमुक्षुजनोए स्त्री, पशु, पंडग विनातुं संयमने अनुकूळ स्थानज रहेवाने पसंद करवुं जोइए.
 - (१५९) मुमुक्षुजनोए कामविकार पेदा थाय एवी कोइ पण चेष्टा करवी न जोइए. स्त्री कथा, स्त्री शय्या, स्त्रीनां अंगोपांगतुं नी-रीक्षण, स्त्री समीपे स्थिति, पूर्वे करेली कामक्रीडातुं स्मरण, स्तिग्ध भोजन तथा प्रमाणातिरक्त भोजन, तथा शरीर विभूषादिक सर्वे तजवां जोइए.
 - (१६०) ग्रुमुक्षुजनोए पूर्वे थयेला महा पुरुपोना पवित्र चारि-त्रने जाणीने तेमनुं वनतुं अनुकरण करवाने सदा सावधान र-हेवुं जोइए.

- (१६१) मुमुक्षुजनोए गमे तेवा संयोगोमां संयमथी चलायमान थवुं न जोइए. देव, मनुष्य के तिर्यचे करेला सर्व अनुकूळ के प्रति-कूळ उपसर्ग परीषहोने अदीनपणे आत्म कल्याणार्थे सहन करवा जोइए.
- (१६२) मुमुक्षुजनोए मार्गमां चालतां धुंसरा प्रमाण भ्रमीने आगळ जोतां कोइ पण न्हाना के मोटा जीवने जोखम न पहोंचे तिम करुणा नजरथी तपासीने चालवुं जोइए.
- (१६३) मुमुक्षु जनोए जरुर पडतुं वोलता कोइने अप्रीति न उपजे एवुं हित मित मिष्ट अने सत्य धर्मने वाधक न थाय तेवुं भा-'षण करवुं जोइए.
- (१६४) मुमुक्षु जनोए संयमना निर्वाह माटे जरुर पडये छते ४२ दोष रहीत आहार पाणी विगेरे गुर्वीदिकनी संमितिथी लाबीने विधिवत वापरवां जोइए.
- (१६५) मुमुक्ष जनोए कोइपण वस्तु छेतां या मूकतां कोइ पण जीवनी विराधना थइ न जाय तेम संभाळीने ते वस्तु छेवी मूकवी जोइए.
- (१६६) मुमुक्षु जनोए छघुनीति वडीनीति विगेरे शरीरना सर्व मळनो त्याग निर्जीव स्थानमां जइने विधिवत् करवो जोइए.

- (१६७) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे मनने गोपवीने धर्म ध्यानमां जोड वुं जोइए. जेम वने तेम तेने विविध विकल्प जालथी मुक्त राखवुं जोइए.
- (१६८) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे तथाप्रकारना कारणविना मौनज धारण करी रहेबुंज जोइए. जरुर जणातां सत्य निर्दोषजा भाषण करवुं जोइए.
- (१६९) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे संयमार्थे जवा आववानी ज-रुर न होय तो कायाने काचवानी पेरे गोपवी राखवी जोइए स्थिर आसन करीने पवित्र ज्ञान ध्याननोज अभ्यास करवो जोइए.
- (१७०) मुमुक्षुजनोए चालवानी, वेसवानी, उठवानी, सुवानी खावानी, पीवानी के वोलवानी जे जे क्रिया करवी पडे ते ते कोइ जीवने इजा न थाय तेमज संभाळथीज करवी जोइए.
- (१७१) मुमुक्षजनोए रसगृद्ध निह थतां परिमितभोजी थवुं जोइए.
- (१७२) मुमुक्षुजनोए संयम अनुष्ठानने समजपूर्वक प्रमाद रहित सेवीने अन्य मुमुक्षुजनोने यथाशक्ति संयममां सहायभूत थवुं जोइए. एक क्षण मात्र पण कल्याणाथींए प्रमाद करवो न जोइए.
- (१७३) शीय मनोहर अने स्वाधीन भोगने जे जाणी जोइने तजे छे. तेज खरो त्यागी कहेवाय छे.

- (१७४) वस्न, गंय, माल्य अलंकार तथा स्त्री शय्यादिक निह मळवा मात्रथी भोगवतो नथी. पण मनथी तो तेवा विषयमां सार मानीने मग्न रहे छे ते त्यागी कहेवाय नहीं.
- (१७५) जो जळमां मच्छनी पद पंक्ति मालूम पढे के आका-श्रमां पंखीनी पद पंक्ति जणाय, तोज स्त्रीना गहन चरित्रनी समज पडी शके, तात्पर्य के स्त्रीना चरित्रनी पार पामवो अशक्य छे.
- (१७६) पियालापथी कोइनी साथ वात करती कामनी कटास-वहें कोइ अन्यने सानमां समजावती होय तेम वळी हृदयथी तो कोइ वीजातुं ध्यान [चिंतवन] करती होय, एवी स्त्रीनी चंचळतामें धिकार पड़ों स्त्रीओ प्रायः कपटनीज पेटी होय छे.
- (१७७) जो मन वैराग्यना रंगथी रंगायछं न होय तो दान, जील, अने तप केवळ कष्टरुपज थाय छे. वैराग्य युक्त करेली सर्व धर्म करणी कल्याणकारी थाय छे. याटे जेम वने तेम वैराग्य भावनी दृद्धि करवी युक्त छे. ते विना अछणा धान्यनी पेरे धर्म करणीमां लहेजत आवती नथी, वैराग्य योगे तेमां मारे मीठाज्ञ आवे छे.
- (१७८) अभिनव अध्यात्मिक शास्त्रो वांचवाथी सहजे वैरा-ग्यनी दृद्धि थाय छे.
- (१७९) मैत्री, मुदिता, करूणा अने मध्यस्य एवी चार भाव-नाओतुं संयमना कामीए अवस्य सेवन करबं जोइए.

- ('८०) जगतना सर्व जंतुओ आपणा मित्र छे, कोइ पण आपणा शत्रु नथी, ते सर्व सुखी थाओ, कोइ दुःखी न थाओ, सर्वे सुखना मार्गे चालो एवी मितने मैत्रीभावना कहे छे.
- (१८१) सद्गुणीना सद्गुणो जोइने चित्तमां राजी थवुं. जेम चंद्रने देखीने चकोर राजी थाय छे, अथवा मेघनो गर्जारव सांभ-ळीने मोर राजी थाय छे; तेम गुणीने देखी प्रभुदित थवुं, अंतःकर-णमां आनंदना उमींओ उठे तेनुं नाम मुदिता भावना कहेवाय छे.
- (१८२) कोइ पण दुःखीने देखी दयाई दीलथी शक्ति अतु-सारे तेने सहाय करवी तेमज धर्म कार्यमां सीदाता साधर्मी भाइने योग्य आलंबन आपबुं तेनुं नाम करुणा भावना कहेवाय छे.
- (१८३) जेने कोइपण प्रकारे हितोपदेश असर करी शके निर्हे एवा अत्यंत कठोर मनवाळा जीव उपर पण द्वेष निह करतां तेवा-थी दूरज रहेबुं तेतुं नाम मध्यस्थ भावना कहेवाय छे.
- (१८४) वीजी पण अनित्य, अग्नरण, संसार, एकत्व, अन्य-त्व, अश्वचित्व, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक स्वभाव, वोधि दुर्लभ अने स्व तत्वनुं चिंतनरुप द्वादश अनुमेक्षा,—भावना कही छे.
- (१८५) भावनाभवनाशिनि अर्थात् आवी उत्तम भावनाथी भव संतिननो क्षय थइ जाय छे. अने शांतरसनी दृद्धिथी चित्तनी

शांति-प्रसन्नता थाय छे. माटे मोक्षार्थी जनोए अवश्य उक्त भावना-ओनो अभ्यास कर्या करवो युक्त छे.

- (१८६) गमे तेटली कळा मास थाय, गमे तेवो आकरो तप तपाय, अथवा निर्मळ किर्त्ति प्रसरे परंतु अंतरमां विवेक कळा जो न मगटी तो ते सर्व निष्फळज छे. विवेक कळाथी ते सर्वनी सफळता छे.
- (१८७) विवेक ए एक अभिनव सूर्य या अभिनव नेत्र छे. जेथी अंतरमां वस्तु तत्त्वनुं यथार्थ दर्शन थाय एवुं अजवाळुं थाय छे माटे बीजी बधी जंजाळ तजीने केवळ विवेककळा माटे उद्यस करवो युक्त छे.
- (१८८) सत् समागम योगे हितोपदेश सांभळवाथी या तहे आप्त प्रणीत शास्त्रना चिर परिचयथी विवेक मगटे छे.
- (१८९) विवेकवडे सत्यासत्यनो निर्णय करी शकाय छे. ते विना हिताहित कृत्याकृत्य भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय, उचितानुचित के गुणदोषनी खात्री थइ शकती नथी. विवेक वडेज असत् वस्तुनो त्याग करीने सद् वस्तुनो स्वीकार करी शकाय छे.
- (१९०) जेम निर्मळ आरिसामां सामी वस्तुनुं वरावर प्रतिविंब पडी रहे छे, तेम निर्मळ विवेकयुक्त हृदयमां वस्तुनुं यथार्थ भान थाय छे. जेम सुक्ष्म दर्शक यंत्रथी सुक्ष्म वस्तु सहेलाइथी देखी श~

काय छै. तेम विवेकना अधिकाधिक अभ्यासथी सुक्ष्ममां सुक्ष्मने दुरमां दुर रहे छैं। पदार्थतुं यथार्थ भान थइ शके छे माटेज ज्ञानी पुरुषो विवेक रहीतने पशु माने छे.

- (१९१) विवेकी पुरुष आ मनुष्य भवना क्षणने पण लाखेणो (लक्ष मुल्य अथवा अमुल्यं) लेखे छे.
 - (१९२) जेम राजहंस पक्षी श्वीर नीरने छुदां करीने श्वीर मात्र ग्रहे छे. तेम विवेकी पुरुष दोष मात्रने तजी गुण मात्रने ग्रहण करेछे.
- (१९३) मननी क्षुद्रता (पारकां छिद्र जोवानी बुद्धि) मटवा-थीज गुण ग्राहकता आवे छे. गुण गुणिनो योग्य आद्रसत्कार क-रवारुप विनयगुणथी गुण ग्राहकता वधती जाय छे.
- (१९४) विनय सर्व गुणोतुं वशिकरण छे. भक्ति या चाह्यसेवा, हृदय प्रेम या वहुमान सद्गुणनी स्तुति अवगुणने ढां-कवा अने अवज्ञा, आशातना, हेलना, निंदा, के खिंसाथी दूर रहेवुं. ख्वा विनयना मुख्य पांच प्रकार छे.
- (१९५) जेम अणधोयेला मेला वस्त्र उपर मेल चडी शकतो नथी. अथवा विषम सुमिमां चित्र उठी शकतुं नथी. तेम विनयादि गुण हिनने सत्य धर्मनी प्राप्ती थइ शकती नथी.

- (१९६) विनयादि सद्गुण संपन्नने सहेजे धर्मनी प्राप्ती थइ शके छे
- (१९७) विनयादि शून्यने विद्यादिक उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे प्रथम विनयादिकनोज अभ्यास करवी योग्य छे.
- (१९८) धर्मनी योग्यता—पात्रता प्राप्त करवी ए प्रथम अवश्य-जुं छे. तृष थकी गायने दुध थाय छे अने दुध थकी सपने झेर थाय छे. ए उपस्थीन पात्रापात्रनो विवेक धारवो प्रगट समजाय छे.
- (१९९) धर्मनी योग्यता मेळववा माटे नीचेना २१ गुणोनां खूब अभ्यास करवो खास जरुरनो छे.

१ असुद्रता-गंभीरता-गुण प्राहकता. २ सोम्पता-प्रसन्नता.
३ निरोगता-अंग सौष्ट्रव-सुंदराकृति. ४ जनिय - लोकियि. ५ अक्रुरता-मननी कोमळता-नरमाञ्चा. ६ भीरुता पाप या अपवादर्थी
वीवापणुं. ७ अञ्चळता-निष्कपटीपणुं-सरलता. ८ दाक्षिण्यता मोटानी
अनुजा पाळवी ते. ९ लजाळता-मयीदा शीलपणुं-माजा. १० दंयाळता-करूणा. ११ समद्दष्टि-मध्यस्थता-निष्पक्षपातपणुं. १२ गुण
रागीपणुं. १३ सत्यवादीपणुं-सत्यित्यता. १४ सपक्ष-धर्मीकुढंव
होवापणुं. १५ दोघ दिशता-लांबी नजर पहोंचाडवापणुं. १६ विशेपज्ञता-लांबी समज. १७ दृद्धानुसारीपणुं शिष्टानुसारिता. १८
विनोतता-नम्रता. १९ कृतज्ञता-कर्या गुणनुं जाणपणुं. २० परोप-

कारता-परहिते षिता. २१ लब्धलक्षता-कार्यदक्षता-मुनिपुणता, कळाकोशल्य.

- (२००) पुर्वोक्त गुणना अभ्यास रहित योग्यता विनाज धर्मनी प्राप्ती थवी वंध्यापुत्र अथवा श्रत्रशृंगनी परे अश्वक्य छे.
- (२०१) योग्य जीवने पण सत्य धर्मनी प्राप्ति वहुधा श्रमण निग्रेथद्वारा हितोपदेश सांभळवाथीज थाय छे. माटे योग्य जीवोने षण सत् समागमनी खास अपेक्षा रहेछेज.
- (२०२) हजारो ग्रंथ वांचवाथी सार न मळे एवो सरस सार क्षण मात्रमां सत्समागमथी भाग्य योगे मळी शके छे.
 - (२०३) दुर्जनो छते योगे तेवा लाभथी कमनशीवज रहेछे.
- (२०४) सज्जनोने तो दुर्जनोनी हैयातीथी अभिनव जागृति रहे छे.
- (२०५) दुर्जनो सज्जनोना निष्कारण सञ्ज छे. पण सज्जनो तो समस्त जगतना निष्कारण मित्र छे.
- (२०६) दुर्जनोने द्विजीह सर्प जेवा कहा छे ते यथार्थज छे. केमके ते एकांत हितकारी सज्जनने पण काटे छे.
- (२०७) सजानो तो एवा खारीला-भ्रेरीला दुर्जनोने पण टुह-ववा इच्छता नथी एन तेमतु उदार आशयपणुं सूचवे छे.

- (२०८) कागडाने के कोयलाने गमे तेटलो धोयो होय तोपण ते तेनी काळाश तजेज निह तेम दुर्जनने पण गमे तेटलं ज्ञान आपो पण ते कदापि क्रिटलता तजवानो निह.
- (२०९) सज्जनने तो गमे तेटछं संतापशो तोपण ते तेमनी स-ज्जनता कदापि तजशेज नहि.
- (२१०) सन्जनज सत्य धर्मने लायक छे. माटे बीजी धमाल तजी दइने केवल सज्जनताज आदरवा प्रयत्न करो.
 - (२११) वीतराग समान कोइ मोक्षदाता देव नथी.
 - (२१२) निर्प्रेथ साधु समान कोइ सन्मार्ग दर्शक साथी नथी.
 - (२१३) शुद्ध अहिंसा समान कोइ भवदुः खवारक औषध नथी.
- (२१४) आत्माना सहज गुणोनो लोप करे एवा रागद्वेप अने मोहादिक दोषोने सेववा समान कोइ पवळ हिंसा नथी.
- (२१५) आत्माना ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्गुणोने साचवी राखवा अथवा ते सहज गुणोनुं संरक्षण करवुं तेना समान कोइ शुद्ध आहंसा नथी.
 - (२१६) आत्म हिंसा तज्या विना कदापि आत्म द्या पार्ळः शकवाना नधीः रागद्वेप अने मोह-ममतांदिक दुष्ट दोपोने तजीन

सहज-आत्म गुणमां मग्न रहेवुं एज खरी आत्म दया छे. वीजी औपचारिक जीवदया पाळवानो पण परमार्थ रागादि दुष्ट दोषोने आवता वारवानो अने ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्गुणोने पोषवानोज छे.

- (२२७) सत्यादिक महावतो पाळवानो पण एज महान् उ-देश छे. यावत् सकळ क्रियानुष्टाननो उंडो हेतु शुद्ध अहिंसा व्रतनी दृहता करवानोज छे.
- (२२८) एवी शुद्ध समज दीलमां धारो संयमिक्रयामां साव-धान रहेनारा योगीश्वरो अवश्य आत्महित साधी शके छे.
- (२२९) एवी शुद्ध समज दीलमां धार्या विना केवळ अंधश्र-द्धार्थी कियाकांडने करनारा साधुओ शीघ्र खहित साधी शक-ता नथी.
- (२३०) ग्रुद्ध समजवाळा ज्ञानी पुरुषोनो पूर्ण श्रद्धाथी आ-श्रय लही संयम पाळनारा प्रमाद रहित साधुओ पण अवश्य आत्म-हित साधी शके छे. केमके तेमना नियामक (नियंता—नायक) श्रेष्ठ छे.
- (२३१) स्रविहित साधुजनो मोक्षमार्गना खरा सारथी छे एवी शुद्ध श्रद्धार्थी मोक्षार्थी भव्य जनोए, तेमनुं हढ आलंबन करबुं अने तेमनी लगारे पण अवज्ञा करवी नहिः

- (२३२) ग्रहण करेलां व्रत या महाव्रतने अखंड पाळनार स-मान कोइ भाग्यशाळी नथी, तेतुंज जीवित सफळ छे.
- (२३३) यहण करेलां व्रत के महाव्रतने खंडीने जे जीवे छे तेनी समान कोइ मंदभाग्य नथी. केमके तेवा जीवित करतां तो ब्रहण करेला व्रत के महाव्रतने अखंड राखीने मरवुंज सारुं छे.
- (२३४) जेने हितकारी वचनो कहेवामां आवतां छतां विछ-कुल काने धारतो नथी अने निहं सांभळ्या जेवुं करे छे तेने छते काने ब्हेरोज लेखवो युक्त छे. केमके ते श्रोत्रने सफळ करी श-कतो नथी.
- (२३५) जे जाणी जोइने खरो रस्तो तजीने खोटे मार्गे चाले छे, ते छती आंखे आंधळो छे एम समजवुं.
- (२३६) जे अवसर उचित प्रिय वचन वोली सामानुं समाधान करतो नथी ते छते मुखे मूंगो छे, एम शाणा माणसे समजवुं.
- ं (२३७) मोक्षार्थी जनोए प्रथमपदे आदरवा योग्य सद्गुरुतुं वचनज छे.
- (२३८) जन्म सरणना दुःखनो अंत थाय एवो उपाय विच-क्षण पुरुषे शीघ्र करवो युक्त छे केमके ते विना कदापि तत्त्वधी शांति थती नथी।

- (२३९) तत्त्वज्ञान पूर्वेक संयमानुष्ठान सेववाथीज भवनो अंत थाय छे.
- (२४०) परभव जतां संवल मात्र धर्मतुंज छे माट्टे तेनो विशेषे खप करवो ते विनाज जीव दुःखनी परंपराने पामे छे.
- (२४१) जेनुं मन शुद्ध-निर्मळ छे तेज खरो पवित्र छे एम ज्ञानीयो माने छे.
- (२४२) जेना अंतर-घटमां विवेक प्रगटयो छे, तेज खरो पंडित छे एम मानवुं.
- (२४३) सद्गुरुनी मुखकारी सेवाने बद्छे अवज्ञा करवी एन खर्र विष छे.
- (२४४) सदा स्वपरहित साधवा उजमाल रहेवुं एज मनुष्य र्जन्मनुं खरुं फल छे.
- (२४५) जीवने वेभान करी देनार स्नेह रागज खरी मदिरा छे एम समजवुं.
- (२४६) घोळे दहाडे घाड पाडीने घर्मधनने लूंटनारा विषयोज खरा चोर छे.
- (२४७) जन्म मरणनां अत्यंत कटुक फळने देनारी तृष्णाज खरी भववेली छे.

- (२४८) अनेक प्रकारनी आपत्तिने आपनार प्रमाद समान कोइ शत्रु नथी.
- (२४९) मरण समान कोइ भय नथी अने तेथी मुक्त करनार वैराग्य समान कोइ मीत्र नथी, विषयवासना जेथी नाबुद थाय तेज खरो वैराग्य जाणवी.
- (२५०) विषयलंपर-कामांधसमान कोइ अंध नथी केमके ते विनेक जून्य होय छे.
 - (२५१) स्त्रीना नेत्र कटाक्षथी जे न डगे तेज खरो जूरवीर छे.
- (२५२) संत पुरुषोना सदुपदेश समान बीजुं अमृत नथी-केमके तथी भन्न ताप उपशांत थवाथी जन्म मरणनां अनंत दुःखोनो अंत आवे छे.
- (२५३) दीनतानो त्याग करवा समान वीजो गुरुतानो सीधो रस्तो नधी-
- (२५४) स्त्रीनां गहन चरित्रथी न छेतराय तेना जेवो कोइ चतुर नथी.
- (२५५) असंतोषी समान कोइ दुःखी नथी केमके ते मंगण शेठनी जेवो दुं:खी रहे छे.

- (२५६) पारकी याचना करवा उपरांत कोइ मोटुं लघुतानुं कारण नथी.
- (२५७) निर्दोष-निष्पाप दृत्तिसमान वीजुं सारुं जीविततुं फळ नथी.
- (२५८) बुद्धिवळ छतां विद्याभ्यास निह करवा समान वीजी कोइ जडता नथी.
 - (२५९) विवेकसमान जागृति अने मूढतासमान निद्रा नथी.
- (२६०) चंद्रनी पेरे भव्य लोकने खरी शीतळता करनार आ कलिकाळमां फक्त सज्जनोज छे.
 - (२६१) परवशता नर्कनी पेरे प्राणीओने पीडाकारी छे.
 - (२६२) संयम या निष्टतिसमान कोइ सुख नथी.
- (२६३) जेथी आत्माने हित थाय तेवुंज वचन वदवुं ते सत्य छे पण जेथी एछटुं अहित थाय एवं वचन विचायी विना वदवुं ते सत्य होय तो पण असत्यज समजवुं. आथीज अंधने पण अंध क-इेवानो शास्त्रमां निषेध करेछो छे.

अध्यात्म-गीता.

प्रणमीये विश्व हित^१ जैनवाणी, महानंद तरु सींचवा अमृत पाणी; महा मोहपुर भेदवा वज्र पाणि^२, गहन भवफंद छेदन कृपाणि³. १

> द्रव्य अनंत प्रकासक भासक तत्त्व खरूप, आतम तत्त्व विवोधक सोधक सत् चिद् रूप; नय निक्षेप प्रमाणे जाणे वस्तु समस्त, त्रिकरण जोगे प्रणमुं जैनागम सुप्रशस्त^४.

जेणे आतमा शुद्धताए पिछाण्यो, तेणे छोक अछोकनो भाव जाण्यो; आत्मा रमणी मुनि जगविदिता, उपदिशी तेणे अध्यात्म गीता.

> द्रव्य सर्वना भावनो जाणग पासग एह, ज्ञाता कर्ता भोक्ता रमता परिणित गेह; ग्राहक रक्षक व्यापक घारक धर्म समूह, दान लाभ भोग उपभोग तणो जे व्यूह.

संग्रहे एक आया वखाण्यो, नैगमे अंशथी जे ममाण्यो; दुविघ व्यवहार नय वस्तु वहेंचे, अग्रुद्ध वळी ग्रुद्ध भासन मपंचे. ५

[?] सर्वने हितकारी. २ इंद्र, ३ तळवार. ४ अति सुंदर.

अशुद्धपणे पणसय तेसही भेद प्रमाण, जदय विभेदे द्रव्यना भेद अनंत कहाण; शुद्धपणे चेतनता प्रगटे जीव विभिन्न, क्षयोपश्चिक असंख्य क्षायक एक अनुन्न .

६

नामथी जीव चेतन पद्युद्ध, क्षेत्रथी असंख्य देशी विशुद्ध; द्रव्यथी स्वगुण पर्याय पिंड, नित्य एकत्व सहज अखंड.

9

उज्जुसुए³ विकल्प परिणामे⁸ जीव स्वभाव, वर्तमान परिणत मय व्यक्त ग्राहक भाव; शब्दनये निज सत्ता जोतो इहतो^भ धर्म, शुद्ध अरुपी चेतन अणग्रहतो नव⁵ कर्म.

L

इणी पेरे शुद्ध सिद्धात्मरुपी, मुक्त परशक्ति व्यक्त अरुपी;

ं विश्वे धरे साध्य रुपे सदा तत्त्व प्रीति ९

समभिरुढ नये निरावरणी ज्ञानादिक गुण मुख्य, क्षायक अनंत चतुष्ट्यी भोगी मुग्ध अलक्ष्य; एवंभूति निर्मेल सकल स्वधर्म प्रकास, पूरण पर्याय प्रगटे पूरण ज्ञाक्ति विलास.

१०

१ पांचसो अने त्रेसट. २ संपूर्ण. ३ रुजुसूत्र नये. ४ अनुसारे ५ अभिल्पती, इच्छतो. ६ नवां. ७ अनंतज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्य.

११

88

एम नय भंग संगे सनूरो, साधना सिद्धता रूप पूरो;

साधक भाव त्यां लगें अधूरो, साध्य सिद्धे निह हेतु सुरो.

काळ अनादि अतीत अनंते जे पर रक्त, संगांगी परिणामे वर्ते मोहासक्त; पुद्गल भोगे रीझ्यो धारे पुद्गल खंध, पर कर्ता परिणामे बांधे कर्मनो बंध.

वंधक वीर्य करणे उदीरे, विपाकी प्रकृति भोगवे दळ विखेरे; कर्म उदयागता स्वगुण रोके^९, गुण विना जीव भवोभवे ढोके.^{२ १३}

> आतमगुण आवरणे न ग्रहे आतम धर्म, ग्राहक शक्ति प्रयोगे जोडे पुद्गळ शर्म; परलाभे परभोगने योगे थाये पर कीरतार, ए अनादि प्रवर्ते वाधे पर विस्तार.

एम उपयोग वीर्यादि लब्धि, परभाव रंगी करे कर्म दृद्धिः परदयादिक यदा सुह विकल्पे, तहा पुण्य कर्म तणो बंध कर्पे. १५

> तेहज हिंसादिक द्रव्याश्रव करतो चंचळ चित्त, कडुक विपाके चेतन मेळे, कर्म विचित्तः

१ अटकावे. २ रखडे. ३ मुख. ४ एकठा करे, संचे. ५ विचित्र.

आतम गुणने हणतो हिंसक भावे थाय, आतमधर्भ नो रक्षक भाव अहिंस कहाय.

१६

आत्मगुण रक्षणा तेह धर्म, स्वगुण विध्वंसणा ते अधर्म; भाव अध्यात्म प्रदृत्ति, तेहथी होय संसार छित्ति^र

१७

एह प्रवोधनो कारण तारण सद्गुरु संग, श्रुत उपयोगी चरणानंदी करी गुरु रंग; आतम तत्त्वाळंबी रमता आतम राम, शुद्ध स्वरुपने भोगे योगे जसु³ विसराम.

१८

सद्गुरु योगथी वहुला जीव, कोइ वळी सहजथी थइ सजीव; आत्म शक्ति करी गंठी भेदी, भेदज्ञानी थयो आत्मवेदी.

१९

द्रव्य गुण पर्याय अनंतनी थइ परतीत, जाण्यो आतम कर्ता भोक्ता गइ परभीत; श्रद्धायोगे उपन्यो भासन सुनये सत्य, साध्यालंबी चेतना वळगी आतम तत्त्व.

२०

इंद्र चंद्रादि पदवी रोग जाण्यो, शुद्ध निज शुद्धता धन पिछाण्यो; आत्मधन अन्य आपे न चोरे, कोण जग दीन वळी कोण जोरे.२१

१ ज्ञानादिक आत्मगुण. २ छेद. ३ जेने. ४ मोहग्रंथि-रागद्वेपनी गांठ.

आतम सर्व समान निधान महा छखकंद, सिद्धतणा साधर्म ? सत्ताए गुण दृंद; जेहस्त्रजाति तेहथी कोण करे वध वंध, प्रगटयो भाव अहिंसक जाणे शुद्ध प्रवंध.

२२

ज्ञाननी तीक्ष्णता चरण तेह, ज्ञानं एकत्वता ध्यान गेह; आत्म बादात्म्यता पूर्ण भावे, तदा निर्मळानंद संपूर्ण पावे.

२३

चेतन अस्ति स्वभावमां जेहने भासे भाव, तेहथी भिन्न अरोचक रोचक आत्म स्वभाव; समकित भावे भावे आतम शक्ति अनंत, कर्म नासनो चिंतन नाणे चिंते ते मतिमंत.

२४

स्वगुण चिंतन रसे बुद्धि घाले, आत्म सत्ता भणी जे निहाले; शुद्ध स्याद्वादपद जे संभाले^२, परघरे³ तेह मति केम वाले.

રૂલ

पुन्य पाप वे पुद्गळ दळ भासे परभाव, परभावे परसंगत पामे दुष्ट विभाव; ते माटे निज भोगी योगीरस सुमसन, देव नरक तृण मणि सम^४ भासे जेहने मन.

२६

१ तन्मयता, अभेदता-एकता. २ वरावर काळजीथी (वीतरा-गनी आज्ञाने) पाळे. ३ नकामी वस्तुमां. ४ न्यूनाधिकता रहित.

तेह समता रस तत्त्व साधे, निश्वलानंद अनुभव आराधे; तीव्र घनघाति निज कर्म तोडे, संधि पडिलेहिने ते विछोडे. २७

> सम्यग् रत्नत्रयी रस साचो चेतन राय, ज्ञानिकया चक्रे चक्रचूरे सर्व अपाय, कारक चक्र स्वभावे साधे पूरण साध्य, कर्ता कारण कारज एक थया निरवाध.

26

स्वगुण आयुध थकी कर्म चूरे, असंख्यात गुण निर्जरा तेह पूरे; टळे आवरणथी गुण विकासे, साधना शक्ति तेम तेम प्रकासे. २९

> प्रगटयो आतम धर्म थया सिव साधन रीत, वाधकभाव ग्रहणता भागी जागी नीत; उद्य उदीरण ते पण पूरण निर्जरा काज, अनिभसंधि वंधकता नीरसता आतमराज.

30

देशपति जव थयो नित्य रंगी, तदा कोण थाय कुनय चाल संगी; यदा आतमा आत्मभावे रमाव्यो, तदा वाधक भाव दुरे गमाव्यो. ३१

१ झानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी अने अंतराय कर्म. २ छाग. ३ जोइने. ४ विघ्र. ५ कर्ती, कर्म, करण, संपदान, अपादान, अने अधिकरणरुप षर् ६ अनाउपयोगे वंधाता कर्मनी ओछाश्च.

सहज क्षमा गुण शक्तिथी छेद्यो क्रोध सुभट, मार्दव^१ भाव प्रभावथी भेद्यो मान मरद; माया आर्जव^२ योगे लोभ ते निःस्पृह भाव, मोह महाभड³ ध्वंसे ध्वंस्यो^४ सर्व विभाव.

३२

एम स्वभाविक थयो आत्म वीर, भोगवे आत्म संपदा सुधीर; जे उदयागता प्रकृति वळगी, अन्यापक थयो खेरवे तेह अळगी.३३

> धर्म ध्यान एक तानमे ध्यावे अरिहा सिद्ध, ते परिणतिथी मगटी तात्त्विक सहज समृद्ध; प स्व स्वरूप एकत्वे तन्मय गुण पर्याय, ध्याने ध्याता निरमोहीने विकल्प जाय.

38

चदा निर्विकल्पी थयो शुद्ध ब्रह्म, तदा अनुभवे शुद्ध आनंद शर्मः भेद् रत्नत्रयी तीक्ष्णताए, अभेद रत्नत्रयी में समाए.

> दर्शन ज्ञान चरण गुण सम्यग् एक एकना हेतु, स्व स्व हेतु थया समकाले तेह अभेद भाषेतु; पूर्ण स्वजाति समाधि घनघाति दल छिन्न, क्षायिक भावे प्रगटे आतम धर्म विभिन्न.

₹Ę.

१ नम्रता, लघुता-विनय. २ सरळता. ३ सुभट-वीर. ४ विनाज्यो. ५ समृद्धि-अनर्गल धन.

पछी योग कंघी थयो ते अयोगी, भाव शैले सिताए अभंगी; पंच छघु अक्षरे कार्यकारी, भवोपमही कर्म संतति विदारी ३७

समश्रेणे एक समये पहोत्या जे लोकांत, अफ़ुसमाण गित निर्मल चेतन भाव महांत; चरम त्रिभाग विहीन भागे जसु अवगाह, आतम भेद अरुप अखंडा नंदावाह.

36

जीहां एक सिद्धात्म तिहां छे अनंता, अवना अगंधा निह फासमंता; आतमगुण पूर्णतावंत संता, निरावाध अत्यंत सुखास्वाद वंता. ३९

कर्ती कारण कारज निज परिणामिक भाव, झाता झायक भोग्य भोग्यता शुद्ध स्वभाव; याहक रक्षक व्यापक तन्मयताए छीन, पूरण आतम धर्म प्रकास रसें लयलीन,

80

द्रव्यथी जीव चेतन अहेशी, क्षेत्रथी जे असंख्य प्रदेशी; खत्पाद वळी नास ध्रुव काळधर्म, शुद्ध उपयोग गुण भाव शर्म. ४१ स्यादाद आतम सत्ता रुचि समिकत तेह, आतम धर्मनो भासन निर्मळ ज्ञानी जेह;

? मन, वचन अने काया. २ मेरुपवतनी जेवी निश्चळता, शैलेशीकरण. ३ अघाति. ४ अस्पर्शमान. ५ ड्रे. ६ वर्ण गंध अने स्पर्शरहित, अरुपी शुद्ध सहज स्वरुपी. आतम रमणी चरणी ध्यांनी आतम लीन,

आतम धर्म रमो तेणे भन्य सदा सुख पीन.

४९

अहो भव्य तमे ओळखो जैन धर्म, जेणे पामीये शुद्ध अध्यात्ममर्मः अल्पकाळे टळे दुष्ट कर्म, पामीये सोय आनंद शर्म. ४३

नय निक्षेप प्रमाणे जाणे जीवा जीव, स्व पर विवेचन करतां थाये लाभ सदैव; निश्ययेन व्यवहारे विचरे जे मुनिराज, भवसागरना तारण निर्भय तेह ज्हाज.

४४

वस्तु-तत्त्वे रम्या ते निग्रंथ, तत्त्व अभ्यास तिहां साधु पंथ; तीणे गीतार्थ चरणे रहीजे, शुद्ध सिद्धान्त रस तो लहीजे.

818

श्रुत अभ्यासी चोमांसी वासी लींमडी ठाम, सासन रागी सोभागी श्रावकनां बहु धाम; खरतर गछ पाठक श्री दीपचंद सु पसाय, देवचंद्र निज हरखे गायो आतम राय.

४६

आत्म रमण करवा अभ्यासे, शुद्ध सत्ता रसीने उछासे; देवचंद्रे रची आत्म गीता, आत्म रमणी मुनि सुपतीता.

४७

इति अध्यात्म ग्रीताः

क्षमा छत्रीशी.

आदर जीव क्षमा गुण आदर, म करीश रागने द्वेषजी; समताये शीवसुख पामीजे, क्रोधे कुगति विशेषजी. आ० १ समता संजम सार सुणीजे, कल्पसूत्रनी शाखजी; क्रोध पूर्व क्रोडि चारित्र वाळे, भगवंत एणीपेरे भाखनी. आ० २ कुण कोण जीव तयी उपश्रमथी, सांभळ तुं दृष्टांतजी; क्कण कोण जीव भम्या भवमांहे, क्रोध तणे विरतंतजी. आ॰ ३ सोमल ससरे शीश प्रजाळ्यो, वांधी माटीनी पाळजी; गज सुकमाळ क्षमा मन धरतो, मुक्ति गयो ततकाळजी. आ० ४ कुळ वाळुओ साधु कहातो, कीधो क्रोध अपारजी; कोणिकनी गणिका वश पहियो, रडवडियो संसारजी. आ० ५ सोवनकार करी अति वेदन, वाध्रष्ठं वींट्युं शीशजी; मेतारज मुनि मुगति पहोत्यो, उपशम एह जगीशजी. आ० ६ कुरुड अकुरुड वे साधु कहाता, रह्या कुणाला खाळजी; क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, जनम गमायो आळजी. आ० ७ कर्म खपावी मुगते पहोता, खंधक सुरिना शिष्यजी; पालक पापीये घाणी पील्या, नाणी मनमां रीशजी. आ० ८ अच्छंकारी नारि अछंकी, तोडयो पियुशुं नेहजी; बन्दर कुळ सहां दुःख बहोळां, कोध तणां फळ एड्डी. आ० 📞 🖟 वाघणे सर्व शरीर वलूर्यु, तत्क्षण छोडयां प्राणजीः साधु सुकोशळ शिवसुख पाम्या, एह क्षमागुण जाणजी. आ० १० कुण चंडाळ कहिजे विहुमें, निरती नहि कहे देवजी; रुषी चंडाळ कहीजे वढतो, टाळे वेढनी टेवजी. आ० ११ सातमी नरके गयो ते व्रह्मदत, काढी ब्राह्मण आंखजी; क्रोध तणां फळ कडवां जाणी, रागद्वेष द्यो नांखजी. आ० १२ खंधक रुषीनी खाल उतारी, सह्यो परीसह जेणजी; गरभावासना दुःखथी छुटयो, सबळ क्षमागुण तेणजी. आ० १३ क्रोध करी खंधक आचारज, हुओ अग्नि कुमारजी; दंडक नृपनो देश प्रजाळ्यो, भमशे भवह मझारजी. आ० १४ चंडरुद्र आचारज चळतां, मस्तक दीध प्रहारजी; क्षमा करंतां केवळ पाम्यो, नव दिक्षीत अणगारजी. आ० १५ पांचवार रुषीने संताप्यो, आणी मनमां द्वेषजी; पंचभव सीमद्द्यो नंदनादिक, क्रोधतणां फळ देखंजी. आ० १६ सागरचंदनुं शीश पजाळी, निश्चि नभसेन न्रिंदजी; समता भाव धरी छुरलोके, पुहुतो परमानंदज़ी. आ॰ १७ चंदना गुरुणीयें घणुं निभ्नंछी, धिग् धिग् तुज आचारजी; मृगावती केवळ सिरि पामी, एह क्षमा अधिकारजी. आ० १८ सांव प्रद्युम्न कुमारे संताप्यो, ऋष्ण द्वैपायन साहजी; आ०-१९ कोध करी तपनुं फळ हार्यो, कीधो द्वारिका दाहजी.

भरतने मारण मूठि खपाडी, वाहुवळ वळवंतजी; उपशम रस मनमांहिं आणी, संजम ले मतिमंतजी. आ० २० काउसगमां चडियो अति क्रोधे, प्रसनचंद्र रुषिरायजी; सातमी नरकतणां दल मेळयां, कडुआ तेणें कषायजी. आ० २१ आहारमांहें कोध रुषि थूंक्यो, आण्यो अमृत भावजी; कूरगडुए केवळ पाम्युं, क्षमातणें परभावजी. आ० २२ पार्श्वनाथने उपसर्ग कीथा, कमठ भवांतर धीठजी; नरक तिर्यचतणां दुःख लाधां, क्रोधतणां फळ दीठजी आ० २३ क्षमावंत दमदंत मुनिश्वर, वनमां रह्यो काउस्सग्गजी; कौरव कटक हण्यो इंटाळे, त्रोडया कर्मना वर्गनी. आ० २४ सज्या पाळक काने तरुओं, नाम्यो क्रोध उदीरजी; विहुं काने खीला ठोकाणा, निव छूटा महावीरजी. आ० २५ चार हत्यानो कारक हुंतो, दढ महारि अतिरेकजी; क्षमा करीने मुक्ति पहोत्यो, उपसर्ग सही अनेकजी. आ० २६ पोहोरमांहं उपजंतो हार्यो, क्रोधें केवळ नाणजी; देखो श्रीदमसार मुनीश्वर, सूत्र गुण्यो उद्घाणजी. आ० २७ ं सिंह गुफावासी रुषि कीघो, थूलिभद्र उपर कोपजी; विश्या वचनें गयो नेपाळे, कीधो संजम छोपजी. आ० २८ चंद्रावतंसक काउसग रहियो, क्षमातणो भंडारूजी; दासी तेल भर्यो निशि दीवों, छुरै पदवी लही सारजी आ० २९

एम अनेक तर्या त्रिभुवनमे, क्षमा गुणें भवि जीवजी; क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, पाडंता मुख रीवजी. आ० ३० विष हलाहल कहीये विरुओ, ते मारे एकवारजी; पण कषाय अनंती वेळा, आपे मदण अपारजी. आ० ३१ क्रोध करंता तप जप कीधां, न पडे कांइ टामजी: आप तपे परने संतापे, क्रोध शुं केही कामजी. आ० ३२ क्षमा करंतां खरच न लागे, भांगे क्रोड कलेशजी; अरिहंत देव आराधक थावे, व्यापे सुयश प्रदेशजी आ० ३३ नगरमांहे नागोर नगीनो, ज्यां जिनवर प्रासादजी; श्रावक लोक वसे अति सुखीया, धर्मतणे मसादजी. आ० ३४. क्षमा छत्रीशी खांते कीथी, आतम पर उपकारजी; सांभळतां श्रावक पण समज्या, उपशम धर्यो अपारजी. आ० ३५ जुग प्रधान जिणचंद खुरिश्वर, सकळचंद तसु शिष्यजी; समय सुंदर तसु शिष्य भणे एम, चतुर्विध संघ जगीसजी. आ० ३६. इति क्षमा छत्रीशी संपूर्ण.

यति धर्म बन्निशी.

दोहा.

भाव यति तेने कहो, ज्यां दश्चविध यति धर्मः, कपट क्रियामां माल्हता, महीयां वांधे कर्मे.

लोकिक लोकोत्तर क्षमा, दुविध कही भगवंतः	
तेहमां लोकोत्तर क्षमा, प्रथम धर्म छे तंत.	२
वचन धर्म नामे कहाो, तेहना पण बहु भेदः	
आगम वयणे जे क्षमा, तेह प्रथम अपखेद.	3
धर्म क्षमा निज सहजुथी, चंदन गंध प्रकार;	
निरतिचार ते जाणीये, प्रथम सुरम अतिचार.	8
उपकारे अपकारथी, लौकिक वळी विवाग;	
वहु अतिचार भरी क्षमा, निह संयुमने लाग.	٠ قو
वार कषाये क्षय करी, जे मुनि धर्म लहाय;	
वचन धर्म नामे क्षमा, जे वहु तिहां कहाय.	६
मद्दव अज्जव मुत्ति तव, पंच भेद एम जाण;	
त्यां पण भाव नियंडने, चरम भेद प्रमाण.	૭
इह लोकादिक कामना, विण अणसण मुख जोग;	
शुद्ध निर्जरा फळ कह्यों, तप शिवमुख संयोग.	6
आश्रव द्वारने रुंधिये, इंद्रिय दंड क्षायः	
सत्तर भेद संयम कहा, एहिज मोक्ष उपाय.	6
सत्य सूत्र अविरुद्ध जे, व्चन विवेक विशुद्धः	
आलोयण जळ शुद्धता, शौच धर्म अविरुद्ध.	90
खग् उपाय मनमे घरे, धर्मोपगरण जेह;	
वरजित उपिध न आदरे, भाव अकिंचन तेह.	88
श्रील विषय मन दृति जे, ब्रह्म तेह सुपवित्तः	_
होय अनुत्तर देवने, विषय त्यागनो चित्त.	१२

ए दसविध यति धर्म जे, आराधे नित्य मेव;	
मूळ उत्तर गुण यतनथी, तेहनी कीने सेव.	१३
अंतर जतना विण किश्यो, बाह्य क्रियानो लाग;	
केवळ कंचुिक परिहरे, निर्विष हुए न नाग.	58
दोषरहित आहार ल्ये, मनमां गारव राखिः	
ते केवळ आजीविका, स्रयगडांगनी साखि.	१५
नाम धरावे चरणतुं, विगर चरण गुण खाण;	
पाप श्रमण ते जाणीये, उत्तराध्ययन प्रमाण.	१६
शुद्ध क्रिया न करी शके, तो तुं शुद्धि भाषः	
श्रुद्ध प्ररूपक होइ करी, जिनशासन स्थिति राख.	१७
उसनो पण करम रज, टाळे पाळे वोध;	
चरण करण अनुमोदता, गच्छाचारे सोध.	१८
हीणो पण ज्ञाने अधिक, सुंदर् सुरुचि विशाळ;	
अल्पागम मुनि निह भलो, वोले उपदेश माळ.	१९
ज्ञानवंतने केवळी, द्रव्यादिक अहि नाण;	
दृहत् कल्प भाषे वळी, सरसा भाष्या जाण.	20
ज्ञानादिक गुण मच्छरी, कष्ट करे ते फोक;	२ १
ग्रंथि भेद पण तस नहीं, भूले भोळा लोक	75
ज्यां जोद्दार जवेदरी, ज्ञाने ज्ञानी तेम; हीणाधिक जाणे चतुर, मूरख जाणे केम.	२२
आदर कीधे तेहने, उन्मारग थीर होयः	

वाह्य क्रिया मत राचजो, पंचाशक अवलोय.	२३
जेहयी मारग पानींयो, तेहने सामो थाय;	
प्रत्यनीक ते पापीयो निश्चयें नरके जाय.	२४
सुंदर बुद्धि पणे कयीं, सुंदर सरव न थाय;	
ज्ञानादिक वचने करी, मारग चाल्यो जाय.	२५
ज्ञानादिक वचने रह्या, साधे जे शीव पंथ;	
आतम ज्ञाने उजळो, तेहु भाव निग्रंथ.	२६
निंदक निश्चें नारकी, वाह्य रुचि मति अंधः	
आतम ज्ञाने जे रमे, तेहने तो निह वंध.	२७
आतम साखे धर्म जे, त्यां जनतुं शुं कामः ?	
जन मन रंजन धर्मनुं, मूल न एक बदाम.	२८
जगमां जन छे वहु सुखी, रुचि नही को एक;	
निज हित होय तिम कीजीये, ग्रही मतिज्ञा टेक.	२९
दूर रही जे विषयथी, कीजे श्रुत अभ्यासः	
संगति कीजे संतनी, हुइये तेहना दास.	३०
समतासें लय लाइये, धरि अध्यातम रंग;	
निंदा तजीये परतणी, भजीये संयम चंग.	3 8
वाचक यश विजर्यें कही, ए मुनिने हित वातः	
एह भाव जे मुनि घरे, ते पामे शीव सात.	३२
इति संयम वत्तीसी संपूर्ण.	

- "जैन कोमना हितनी खातर खास निर्माण करेली समयानुसारी बहु उपयोगी सूचनाओ."
- १. विदेशी अष्ट वस्तुओथी आपणे सदंतर दूर रहेवं अने स्वदेशी पवित्र वस्तुओनोज उपयोग नि-श्रयप्रविक करवो अने कराववो.
- २. आपणा पवित्र तीर्थोनी रक्षा माटे आपणे विशेषे सावधान रहेवुं.
- ३. कोइ पण प्रकारना खोटा व्यसन्थी सावधा-नपणे दूर रहेर्च, अने अन्य भाइ ब्हेनोने दूर रहेवा प्रेरणा कर्या करवी.
- ४. शांत रसथी भरपूर जिन—प्रतिमाने जिनवत् लेखी तेवी शांत दशा प्रगटाववा प्रतिदिन प्रजा अचीदिक करवा कराववा प्रतुं लक्ष राखबं तथा र-खावबं.
- ५. परम सुख शांतिने आपवावाळी श्री जिन वाणीनो स्वाद मेळववा दिवस रात्रीमां थोडो वसता पण जरुर श्रम लेवो, अभ्यास राखवो.

- ६. जैन तरीके आपणुं शुं शुं कर्तव्य छे ते पू-रा तोरथी जाणी लेवा अने जाणीने ते प्रमाणे वर्त-वा पूरो ख्याल राखवो.
- ७. शरीर सारुं होय तो धर्म साधन सारी रीते साधी शकाय छे. एवी बुद्धिथी शरुआतथीज शरी-रनी संभाळ राखवा सावचेत रहेबं. वळी बाळळम, बृद्धिववाह, परस्त्री तथा वेश्यागमन, कुपध्य भोजन अने कुदरत विरुद्ध वर्तनथी नाहक वियेनो नाश थवा साथे शरीर कमजोर थायज छे, एम समजी उक्त अनाचारोथी सदंतर दूर रहेवा खास लक्ष राख-तां रहेबं.
- ८. आवकना प्रमाणमांज खर्च करवा तेमज नकामा उडाउ खर्ची बंध करी बचेला नाणांनो सदु पयोग करवा कराववा पूरतुं लक्ष राखदुं अने रखावदुं.
- ९. धर्मादा खाते जे रकम खर्चवा धारी होय ते विलंब कर्या विना विवेकथी खर्ची देवी. कारणके सदा काळे सरखा परिणाम रही शकता नथी. वळी लक्ष्मी पण आज छे, अने काले नथी.

- १० ज्ञान दान समान कोइ दान नथी, एम समजी सहुए तेमां यथाशक्ति सहाय करवी, तत्त्व ज्ञाननो फेलावो थवा पामे तेवो प्रबंध करवो, केमके शासननी उन्नतिनो खरो आधार तत्त्वज्ञान उपरज्ञ छे।
- ११. जैनी भाइ ब्हेनोमां पण केटलाक भागे कळा कौशल्यनी खामीथी, प्रमादथी तथा अगमचे तीपणाना अभावथी बहुधा नात वरा विगरे नकामा खर्ची करवाथी दुःखी हालत थवा पामेल छे. ते दूर थाय तेवी देशकाळने अनुसार उछरती प्रजाने तालीम (कळवणी) आपवी दरेक स्थळे शरु करवानी पूरी जरुर छे.
- १२. वीतराग प्रभुनो उपदेश सारी आलमने उ-पगारी थइ शके एवा होवाथी तेना जेम प्रसार थवा पामे तेम प्रयत्न कर्या करवो. जिनेश्वर भगवाने आ-पेली शिखामणोर्नुं सार ए छे के.
- क. सर्व जीवर्जुं भर्छुं करवा कराववा बनती का-
 - ख. सादाइ अने नरमाश राखवी.

ग. समज अने सरल (विवेकी) बनर्नुं।

घ. निर्लोभी थइ संतोष चृत्तिमांज सुख मानवुं.

डं. आळस तजी चीवट राखी यथाशक्ति आ-त्मसाधन करवुं.

च. मन, वचन अने कायाने काबुमां राखवा तत्पर रहेवुं.

छ. सत्यनुं स्वरूप समजीने सत्यज बोलवुं, हि-तमित भाषण करवुं.

ज. अंतःकरण साफ राखी शुद्ध व्यवहार सेव-वो कोइ रीते मलीनता आदरवी नहि.

झ. उदार दिलथी आत्मापिण करबं, स्वार्थता तजी परमार्थ प्रति प्रेम लगाडवो, परार्थ परायण रहेबं.

ञ. उत्तम प्रकारनुं सद्वर्तन (आदरबं) सेवबं.

१३. काळ मुख कुसंपने जेम तेम दाटी दइ सु-खदायी संपने वधारवा शासन रसिक जनोए भगी-रथ प्रयत्न सेववा तत्पर थवुं

१४. हानिकारक रीत रीवाजोने दूर करवा क- राववा प्ररत्तुं मथन करवुं.

१५. सीदाता साधर्मी जनोने विवेकथी सहाय आपवा मेदान पड्वं.

१६. जे उत्तम पुरुषे आपणने उपगार कर्यों होय तेनी सामा थइ तेने नुकशान करवानी अगर तेनुं बुरु बोलवानी प्रवृत्ति स्वार्थने खातर अगर प्राणांत कष्ट आवे छते पण करवी नहि.

१७. कोइए करेला अपराधथी ग्रस्ते यह तेनो अनादर करवाने बदले शांतिथी तेनुं खरुं स्वरुप स-मजावी ठेकाणे पाडवामांज सार छे.

१८. द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावने लक्षमां रा-लीने उचित प्रशृति करतां नम्रता धारण करहो, तेज भव्यजनो स्वपर हितने साधवा समर्थ थइ शकहो. रागद्देष अने मोहने सर्वथा तजी सर्वज्ञ सर्वदर्शी थइ आपणने पण एवाज—निर्मळ निर्दोष थवा जि-नेश्वर भगवान उपदिशे छे.

उक्त सूचना मुजब वर्तवा सकळ उपदेशक मुनिमंडळ तथा अन्य उत्साही श्रावक वर्ग खरा जीगरथी प्रयत्न करे तो सारो अने संगीन लाभ स्वल्प समयमां थवा संभवे छे. सुद्रेष्ठ किंबहुना.

शुद्धिपत्र. जैन हितोपदेश भाग २ जो.

		•	•
पृष्ट.	र्खींदी.	अथुद्ध.	गुद्
ૅર	Ŗ	विरह	विरहे
ષ	६	त्यजं	त्यज
१०	ર	যা ন্ত	शत्रू
9.0	ર	विज्ञेयो	विज्ञेयौ
१०	ş	फल्यदम्	फलपदौ
१०	લ	मुलम्	मूलम्
१९	६	तमे	तेम
३४	38	वर	वैर
ઝર	११	तथा	तेथी
જિદ્	१६	पासे	पाछळ रहेळुं
४९	ş	अनती	अनंती
४९	१०	धमनां	धर्मनां
५ ६ ५५ ५८	१४	फळीभत	फळीभूत
दद	6	अघन .	अघने
46	१६ -	वीण	निर्वाण
८२	१ं४	उपयोगमां	ज्पयोग ू ँ
१२९	Ç	कलीनताने	ं कुछीनताने

जैन हितोपदेश भाग ३ जो. र्लीटी. अशुद्ध. पृष्ठ. गुद्ध. अस्थिर स्थिर् १६ २ समुद्रोत्थं समुद्धोत्थं २ २३ 9 २९ दुःपूर मिनेभ दुष्पूर मीनेभ २९ १५ स्रंज्ञिकं संज्ञकं १२ 90 शरीररूप श्वरीररूप 90 १४ नीरुपे नीरूपे १६ १७ रूपीणी रूपिणी १६ १थ **लोकसं**ज्ञाञे लोकसंज्ञा ए ९१ १३ एवी २ ९२ एवा परेश्वेपि परेश्वाप १०७ ٠ ३ भेदा भेदाः १०७ ५ १०८ पाछली पाछला 9 योग. योग १०८ ૧્ષ १०८ १९ करवानां करवानां १२९ .१२ थइ लइ मादींकृतं माद्रीकृतं 333 २ तद् पूर्णान्दघने मोटा १३६ तज् L पूर्णीनन्दघने मोटो १३८ ५ १४४ १९ १८१ 9 धारो धारी